

मेक-अप स्थान आकर्षित करने तथा पढ़नेकी रुचि उत्पन्न करनेके लक्ष्यमें सफल हो रहा है।

प्रधान उप-सम्पादक जब पत्रके मेक-अपका खाका बनाने लगता है, तब अपने अन्य सापियों, विशेषकर समाचार-सम्पादकसे तथा विज्ञापन-व्यवस्थापकसे परामर्श कर लिया करता है। समाचार-सम्पादक उसे बता देता है कि कौन-कौन मुख्य समाचार दिये जा चुके हैं और कौन-कौन अभी और दिये जानेवाले हैं तथा स्थूल रूपसे उनके किससे स्थानमें आनेकी सम्भावना है। विज्ञापन व्यवस्थापक उसके हाथमें उस दिनके अखबारका एक छाटा-सा प्रारूप बसा देता है जिसमें इस बातका निर्देश रहता है कि कितने पृष्ठों के कितने हिस्सेमें कितने विज्ञापनों के लिए कितना स्थान सुरक्षित रखा गया है। कौन-कौनसे परिवार तथा अन्य सामग्री भंकरबिछोरेमें देना है, इत्यादि पता जब मुख्य उपसम्पादकको लग जाता है, तब वह एक खाका-सा बना देता है। यदि समाचारोंकी स्थिति के कारण आवश्यक हो जब तो पृष्ठसंख्याकी अपनी योजनामें थोड़ा सा हेर फेर करने या मैजर सज्जित कर अन्य पृष्ठोंमें से आनेमें भी वह नहीं हिचकता।

भारतीय पत्रोंमें समाचार-सम्पादकके ही जिम्मे विज्ञानकी व्यवस्था भी रहती है। फोटोग्राफ तैयार करनेवाली समितियोंसे, छायाचित्रोंके सूचनाधिकारियोंसे, समाचारपत्रोंकी सूचना देनेवाले वायाग्रमण, विभिन्न प्रकार-संस्थाओं तथा छीकिया छायाचित्र सेनेवालोंसे वह चित्र इकट्ठा करता है। प्रथम पृष्ठका मुख्यचित्र, यथासम्भव सम्पादकीय विभागके फोटोग्राफरका ही लिया हुआ होता है। समाचारोंके साथ ही तत्सम्बन्धी चित्रोंका भी विचार प्रधान उपसम्पादकको करना पड़ता है। ऐसे चित्रों को, जिनमें कोई काम करना या खोज-भूष आदि दिखाई गयी हो, जिनका समाचारोंकी दृष्टिसे विशेष महत्त्व हो तथा जिनमें दृशकका ध्यान अपनी ओर लाने और उसे रोक रखनेकी शक्ति हो, अन्य चित्रोंकी अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जाता है।

चित्रके नीचे परिचयके रूपमें जो कुछ लिखा जाता है उसे प्रधान उपसम्पादक अपनी तरफ़ देख लेता है। पुराने रखे हुए छात्रोंके नीचे दिया गया मैटर यदि पुराना तथा असामयिक प्रतीत होने लगा हो तो उसे ठीककर सामयिक बना दिया जाता है और ताजे समाचारोंके संयोजन करने छात्रोंके नीचेका मैटर भी जोचकर देख दिया जाता है कि कहीं फोटोग्राफ़से कोई गलती तो नहीं हो गयी है। यह काम या तो वह स्वयं करता है या किसी ऐसे उपसम्पादकको सौंप देता है जो सचित्र पत्रकारीमें सिद्धहस्त हो।

मुख्य समाचारका विवरण मुख्य उपसम्पादक स्वयं ही देखता है और उसमें तथोक्त, परिवर्तन आदि करता है। अन्य स्तंभोंके विवरण तथा नियमित रूपसे जानेवाले विषय भी वही देखता है। वह कमरेके मुख्य भागमें एक बड़ी मेजके सिरेपर या बड़ी-सी बेंचपर बैठता है या फिर उठ अर्धचन्द्राकार मेजके मोतरी भागमें बैठता है, जहाँ बैठकर उपसम्पादक लोग काम करते हैं। सामूची और कम उन्नति किये हुए भ्रष्टचारोंके दफ़्तरोंमें वह उठ कम रोशनीवाले गन्द कमरेमें, जो उपसम्पादकोंका कमरा कहलाता है, अपने अन्य साधियोंके साथ ठूँस दिया जाता है। उसे पहचाननेमें आपको प्रायः अधिक श्रम नहीं होती, क्योंकि उसके चहरेपर अस्वस्थता और पुरतीकेपनके चिह्न स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़ते हैं। वह बार-बार पड़ीकी तरफ़ देखता है और कभी किसी कापीके लिए या किसी आदमीके लिए भीखता पिशाचा रहता है।

प्रधान उपसम्पादक अपने दफ़्तरा मुलिया होता है। उठ काय सम्बन्धी निवेश समाचार-सम्पादकले लेने पड़ते हैं और सन्देह या कठिनाईके समय भी वह उसीसे लड़ाई लड़ाधरा करता है। नियमानुसार सम्पादन, संपादन हा जानेपर भी सारी कापीका निरोक्षण उसके लिए आवश्यक है, किन्तु इसके लिए वह अपने अनुमती सहयोगियोंपर भी विरपाठ कर सकता है। नये या कम अनुमती उपसम्पादकों द्वारा लम्बा दित की गयी कुछ कापीकी जाँच मुख्य उपसम्पादककी करनी चाहिये।

है पर इस तरह नहीं कि काफी पढ़ी हो न जा सके। अन्तमें कभी कभी वह काटे हुए अंशको फिर वगैरोंका साथ बना रहने देता है और उसपर 'स्टेड' छिद्र देता है।

नये उपसम्पादकका प्रायः ऐसा काम दिखा जाता है जिसे कोई भी कसूर नहीं करता। प्रायः उस मुद्रस्तिष्ठकी काफी ठीक करनेका ही जाती है। यह काम बड़ा देवा-सा होता है। मुद्रस्तिष्ठको ठंढाहवाया बहुधा अनम्यता और अनुभवहीन होते हैं। निठम्ले बकीछ, बेकार व्यापारों तथा अशक्यप्राप्त स्थिति जो अल्प पत्रके साथ अपने नामका सम्बन्ध दिखाने लिये उत्सुक रहते हैं, ठंढाहवाया बन जाते हैं। वे अथ समाचारों का विवरण इस तरह छिद्रते हैं मानों किसी समाजी काररवाई विवरण-पुस्तकमें लिखी जा रही हो। जहाँ-तहाँ सम्पादककी तरह वे अपनी राय प्रकट करने लगते हैं—अपने कृत्याचरकी प्रशंसा और वैरियोंकी निन्दा करते हैं। अनुभवहीन तथाहवायाकी अनेक सुविधोंका सुधार करता है उपसम्पादक। उपसम्पादक ही उनका रक्षक होता है।

इसके बाद बहुत सो उपसम्पादकका शोपी ठहराया जाता है कि वह मुन्बर कथानकोंकी 'हत्या' कर डालता है, निम्नुरताके साथ उन्हें काट कूटकर रख देता है या 'अग भय' कर देता है। उसे बाप देनेवाले से ही रिपोटर होते हैं या समाचार लिखनेको कजावे अनभिज्ञ होते हैं और जो अपनी किसी हुई मही इत्थान्त-गाथाओंको बड़ी मुन्बर रचना मानते हैं। यदि कोई समाचार या विवरण भरे तथ्यत लिखा गया हो तो उसका सम्पादन करनेमें सिर लपानेके बजाय नये उपसम्पादकके मनमें उस अस्वीकार कर देनेकी ही इच्छा होती है।

समाचारकी दृष्टिसे उसका कुछ महत्त्व होताकर ही वह उसे रहीको टोकरीमें नहीं डालता। वह उसे नये विवेक लिख डालनेका निरवग करता है। ऐसा वह सभी करता है जब इसकी निरान्त आवश्यकता होती है। वह मनसा है कि मेरा काम तो सधावन करना और अच्छी तरह हर समाचार या विवरण आदिको रेंग लेना है, उम्ह किन्ते लिखना

सम्पादन इत दक्षिण करना पड़ता है कि वह उसके समाचारपत्रमें बरती जानेवाली परम्परा या पद्धतिके अनुरूप हो जाय।

समाचार-संस्थाओं द्वारा प्रेषित रिपोर्टों तथा सूचनाकावाक्योंसे किसीपक्षमें भरकर मेजी गयी सूचनाओं, विवरणों आदिका प्रयोग साबधानीसे करना चाहिये। ये सब विवरण सभी समाचारपत्रोंमें समान रूपमें ही प्रकाशित होते हैं। यदि इनमेंसे किसीको अपन पत्रके लिए अपना निजी अथवा पृथक् रूप देनेकी इच्छा हो, तो अप्रमत्तता तथा शीर्षककी पकड़ोंका डींचा बहककर उसे अपने ढंगसे छिछ हासना चाहिये।

पाठक केवल समाचार चाहते हैं—विशुद्ध बिना मिश्रबदलाव समाचार—इसलिए उपसम्पादक किसी रिपोटर द्वारा संयोजित समाचार या किसी घटनाके विवरणमते वह अंश सावधानीसे निकाल देता है जिसमें रिपोटरने अपनी व्यक्तिगत राय प्रकट की है। उसे यदि इस बातकी शका हो कि कुछ तथ्योंको छिपाकर अपने विचार प्रकट किये गये हैं या कुछ बातोंका अत्यधिक या अनुचित महत्व दे दिया गया है, तो वह तुरन्त ही इस दोगके परिमार्जनका प्रयत्न करता है। उस रिपोटरको तुरन्त इस बातकी चेतावनी दे दी जाती है।

कुछ व्यक्तियों तथा संस्थाओंके अपन विज्ञापन-तथा-सूचना-विशेष पत्र हाठ हैं या समाचारपत्रके समाचारोंवाले स्तम्भमें सुवर्ण अक्षरों में विज्ञापनयुक्त या प्रचारप्रसक्त विवरण प्रकाश करानेकी चिन्तमें रहते हैं। उपर्युक्तव्यक्तियोंको अनायास ही इसकी गन्ध मिल जाता है और वह इन अवाञ्छनीय हरकतोंके सम्बन्धमें तनिक भी क्या हिम्माना नहीं चाहता।

समाचारोंकी सरसता ही परम मध्य

समाचारोंकी सरसता ही उपसम्पादकका परम मध्य है। किसी घटना या बहसकी विश्वसनीयताके सम्बन्धमें यदि अज्ञान भी सम्भव उसके मनमें उत्पन्न हो जाता है तो उसकी जाब करानेके लिए वह सभी सम्भव उपार्थोंका काम करता है। किसी भी हाथमें वह काह सम्येहयुक्त

निर्दोष नागरिककी ओर संकेत करता-या ज्ञान पड़ तो उसकी ओरसे हरमानेका दावा किया जा सकता है।

विधियों और शौक्योंका मिश्रण अच्छी तरह कर किया जाता है। यहाँ सम्यक् होता है, यहाँ उपसम्पादक मूल स्रोतका सहारा देता है और बीच करनेके काव्य मूल कुम्भ का ही आसी है। बहुत रिपोर्टर विधियों तथा संख्याएँ अक्षरोंम लिख देते हैं। उपसम्पादक उनके चारों तरफ घेरा काम करते हैं ताकि कम्पाजिटर उनके खानपर बंध रह सके।

उपसम्पादक प्रायः साहित्यिक या ठोस दृग्गती मापका प्रोत्साहन नहीं देता। पत्रोंमें छपे हुए समाचार, लेख, विवरण आदि अधिकतर ऐसे सामान्य पाठकोंके लिए होते हैं जो अक्सर अपने अपने कामपर—आफिस, दुकान स्कूल, कारखाना आदि—जानेकी मस्तीमें रहते हैं। उनके पास न इतना धैर्य होता है और न समय कि वे किसी वाक्य या शब्द का अर्थ समझनेके लिए कागज के पन्ने टलानेका कष्ट कर। उपसम्पादक इस तरहके कठिन पारिभाषिक शब्द निकाल देता है और सब बातें पाठकोंके समझने समर्थक मापामें रखनेका प्रयत्न करता है। हाँ, मापामें व्याकरण तथा मुद्राबरो सम्बन्धी अशुद्धियाँ न रहने पायें इसका ध्यान वह अवश्य रखता है।

ग्राम्य या अधिष्ठ शब्दोंका प्रयोग वह मरुतक नहीं होने देता, बरतक कि प्रयोग बिद्येपके कारण इनकी निरान्त आवाप्तकता न हो। बिद्येपोंका अत्यधिक प्रयोग भी खतरकता है तथा 'सर्वाभट्ट' 'भक्ति माप्रीय' 'महितीय', 'विहार' आदि शब्दोंका प्रयोग अनुपयुक्त स्थानोंपर न किया जाय इसका ध्यान भी उसे रखना पड़ता है।

कापीमें विराम-चिह्नों आदिका भी यथा स्थान प्रयुक्त होना परमावश्यक है। समाचारपत्रोंमें बरत जानेवाले छपाई सम्बन्धी नियमोंका भी पालन उसमें किया जाना चाहिये। ये नियम तथा विराम-चिह्नों सम्बन्धी नियम विभिन्न-विभिन्न समाचारपत्रोंमें एक दूसरेसे कुछ भिन्न हो सकते हैं

बड़ा सुन्दर और सर्वांगपूर्ण माखूम पड़ता है। पत्रकार उपसमाजिक प्रत्येक कृपाको समोक्षित रूप देनेके लिए इसी तरह परिभ्रम करता है। उसके प्रयत्नोंका परिणाम उपरकर निकले हुए सम्प्रसारके रूपमें स्पष्ट दिखाई देता है। पाठक उसे अधिकधिक पसन्द करने लगते हैं।

कानूनका सिद्धान्त

उपसमाजिकके सम्प्रसारणोंपर कायू होनेवाले कानूनोंकी अच्छा समझारीकी भाषा को ज़ाती है—सुखी बदनामी केमानेका कानून अथवा कानूनी अवहेलनाका कानून तथा १९१ का प्रेम एकर (जोदहवा परिच्छेद देखिये)।

येसे पाकर यह कापीमें लिखा देता है किनसे किसीकी बदनामी होती हो तथा किनसे देखकी म्याय-व्यवस्थामें अनुचित हस्तभन होना हो। प्रत्यन उपसमाजिक ऐसा अभिय और नमन तथा सप्ताहके नमन सेकर सभी प्रकाशित होने लगा है जब तार्किक हितकी दृष्टिसे एसा करना आवश्यक होता है। गुणवत्ता तथा कुम्होंका मण्डपोष कर सम्प्रदाय अपने पत्रका गौरव बढ़ानेका प्रयत्न करता है और कानूनमें दिये हुए अवधारणोंका हवाला देकर अपने कृत्यका औचित्य प्रामाणित करता है।

किसी भी सम्प्रसारणके लिए म्याय-व्यवस्थामें पात्रा कायकर वा म्यायवीछकी ईमानदारीपर आधे करनेके बाद जब निकलना बहुत मुश्किल होता है। म्यायवीछकी अवहेलनाका कानून ही ऐसा है कि उसमें अपराध प्रमाणित हो जानेपर तुरन्त आर निश्चित रूपसे दण्ड मिश्रता है। बचापका समकाल एक ही माय है—बिना किसी छूटके और बिना मीन मैचके समायोजना कर देना। म्यायवीछ उस मंशु करे या न करे, यह उसकी दृष्ट्यपर है। यदि किसी सम्प्रदायक कर बार ऐसी पावती हा जाती है ता सम्प्रदायना यही है कि धम्यायचना कर देनेके बाद-उत्तरे अधिकार अवधारणकी तथा मित्त जय। यदि तम्य पायना जल्दतर जल्द और पूरी सम्प्रदायके लाभ कर ही जय ता अन्तर

सजा सुनकर और सर्वांगपूर्ण माखम पड़ता है। पत्रकार उपसम्पादक प्रत्येक कमांडो यथोचित रूप देनेके लिए हठी तरह परिश्रम करता है। उसके प्रबन्धनोंका परिणाम रूपकर निकले हुए अन्वयारके रूपमें स्पष्ट दिखाई देता है। पठक उसे आधिकाधिक पसन्द करने लगते हैं।

कानूनका विज्ञान

उपसम्पादकसे सम्प्रचारपत्रोंपर लगू होनेवाले कानूनोंकी अच्छी जानकारीकी आशा की जाती है—झुटी बदनामी पैमानेका कानून, अथवा झूठी अवहेलनाका कानून तथा १९१ का प्रेस ऐक्ट (बीरहर्षो परिच्छेद देखिये)।

ऐसे कानून वह कापीमें लिखाव देता है जिनसे किसीकी बदनामी होती हो तथा जिनसे देशकी न्याय-व्यवस्थामें अनुचित हस्तक्षेप होता हो। प्रधान उपसम्पादक ऐसा अभिय और नयन साथ सम्पादकसे सम्मेलन लेकर तभी प्रकाशित होने देता है जब सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे ऐसा करना आवश्यक होता है। दुपहरी तथा कुहल्लोंका सम्पादन कर सम्पादक अपने पत्रका गौरव बढ़ानेका प्रयत्न करता है और कानूनमें दिये हुए अवसरोंका इस्तेमाल देकर अपने कृत्यका औचित्य प्रमाणित करता है।

किसी भी सम्प्रचारपत्रके लिए न्याय-व्यवस्थामें बाधा डालकर या न्यायधीनकी इमानदारीपर आघेप करनेके बाद वह निरक्षरता बहुत मुश्किल होता है। न्यायालयकी अवहेलनाका कानून ही ऐसा है कि उसमें अपराध प्रमाणित हो जानेपर दुरस्त और निन्दित रूपसे दण्ड भिम्बता है। कथावक्ता समबतः एक ही भाग है—बिना किसी झूठ और बिना मौन-मेलके सम्पादन करना। न्यायधीन उसे संशुद्ध करे या न करे, यह उसकी इच्छापर है। यदि किसी सम्पादकसे यह बार ऐसी गलती हो जाती है तो सम्पादन यही है कि सम्पादन करना करनेके बावजूद उसे अधिकतर अपराधकी सजा मिल जाय। यदि सम्पादनना जल्दसे जल्द और पूरी तन्हाके साथ कर ली जाय तो अन्तर

बड़ा सुन्दर और सहायपूर्ण मार्ग पड़ता है। पत्रुर उपसम्पादक प्रत्येक कमाका यथोचित रूप देने के लिए इसी तरह परिभ्रम करता है। उसके प्रयत्नोंका परिणाम छपकर निकले हुए सम्पत्तियों के रूपमें स्पष्ट दिखाई देता है। पाठक उसे अधिकाधिक पसन्द करने लगते हैं।

कानूनका सिद्धान्त

उपसम्पादकसे सम्पत्तिपरिषद आगू होनेवाले कानूनोंकी अम्मी जानकारीकी भाषा को जाती है—बड़ी बदनामी फैलानेका कानून, अथवा छठकी अवहत्याका कानून तथा १९५१ का प्रेस ऐक्ट (बीदहर्षा परिच्छेद देखिये)।

ऐसे वाक्य वह कापीमें लिखा देता है जिनसे किसीकी बदनामी होती हो तथा जिनसे देशकी म्याय व्यवस्थामें अशुचित हस्तक्षेप होता हो। प्रधान उपसम्पादक ऐसा अभिय और नयन सत्य सम्पादकसे सम्बन्ध लेकर सभी प्रकाशित होने दता है जब कार्रबानिक हितकी दृष्टिसे ऐसा करना आवश्यक होता है। कुछही तथा कुछहीका भण्डारण कर सम्पादक अपने पत्रका गौरव बढ़ानेका प्रयत्न करता है और कानूनोंमें दिए हुए अपवादोंका हवाला देकर अपने कृत्यका औचित्य प्रमाणित करता है।

किसी भी समाचारपत्रके लिए म्याय व्यवस्थामें बाधा डालकर या न्यायाधीशकी इमानदारीपर आक्षेप करनेके बाद वह निश्चयना बहुत मुश्किल होता है। न्यायालयकी अवहत्याका कानून ही ऐसा है कि उसमें अपराध प्रमाणित हो जानेपर तुरन्त भीर निर्दिष्ट रूपसे दण्ड मिळता है। 'न्यायका समर्थन' एक ही भाग है—बिना किसी छठके और बिना मीन मेषके समायाचना कर लेना। म्यायधीश उसे मंजूर करे या न करे वह उसकी इच्छापर है। यदि किसी सम्पादकसे कह बार ऐसी गलती हो जाती है तो सम्पादना यही है कि क्षमायाचना कर लेनेके बावजूद उसे अधिकतर अपराधकी सजा मिल जाय। यदि क्षमा याचना करते करते और पूरी तयारीके साथ कर ही जाय तो अन्तर

दृष्टिकोणसे जित्त दाखता है जिसकी ओर अन्य कार्योंका ध्यान ही नहीं गया था। कभी-कभी वह 'आगकी सम्भावना'का ही सम्प्रयोगमें सहजका स्थान देता है। नान बीजिये, मूख सम्प्रचार किसी पत्राधिकारोंके पदत्यागका है। उपसम्यक्क अब जा समाचार अगले पत्रमें देनेके लिए तैयार करेगा उसमें उस वर्तिका भी नाम व देमा जिसकी नियुक्ति उस पत्राधिकारोंके रिक्त स्थानपर होनेकी विशेष सम्भावना ही। हाँ, मरिम्मेके ऐसे अनुमानका प्रयोग वह अपने वृत्तान्तमें न करेगा जिसका खण्डन किये जानेकी आशंका हो।

सहयोगी पत्रोंसे बचकर किये गये समाचारोंकी छानबीन सतकतासे की जाती है और उगें बड़ी सावधानीसे नये वर्गमें जिसकर पत्रमें देनेका प्रयत्न किया जाता है। समाचारको पुनः लिखते समय वह केवल सम्प्रयोग ही नहीं बरकता बरन तारी कशानी नये सिले जित्त दाखता है और उसके प्रममें भी परिवर्तन कर देता है—नोबेका हिस्सा ऊपर, ऊपरका नीचे। प्रत्येक पिरा, प्रावा प्रत्येक वाक्य, वह नये वर्गमें लिखता है। और इस तरह कहानीको नया रूप देकर उसमें अधिक अच्छी लगाने वाली बिरोयता ला देता है। यदि क्या हुआ कोर बिबरन कम होला है तो वह उसका तृतीय-वा भाग्य कम कर देता है। वृत्तान्त छोटा हो तो उसमें और बात बढ़ाकर उसका विस्तार कर दिया जाता है। पुनर्लेखन द्वारा मूख समाचारका स्वल्प निश्चित रूपसे अधिक सुन्दर बना दिया जाता है। उसकी घेमी और भी हलचलही हो जाती है। उसका रूप निरुत्तर-सा ठठठा है। पीछ नपी छाने छापी है, और कभी-कभी उसमें नये वर्गोंका समावेश भी हो जाता है।

आपपर जिसका अच्छा अधिकार हो और सम्प्रचारोंका महत्त्व पहचाननेमें जिसकी बुद्धि प्रखर हो, ऐसा उपसम्यक्क वह काम करनेके लिए सबसे अधिक उपयुक्त होता है। अपनी छेलनीके बाधुत वह पुरानी पीछको नया बना सकता है, उसमें नवजीवनका सञ्चार कर सकता है।

मृत्यु हो जाती है। समाचार-संस्थाओं सम्बन्ध-रिक्त कारागृहोंमें इस घटनाका जो समाचार छिपा जायगा वह समान रूपसे सारे देशके उप योगके लिए हाथा। इतके अग्रभाग और शेष भागकी भाषा ऐसी नहीं रही अथवा नही जो देश भरमें पढ़ने हुए पाठकोंके विभिन्न समूहोंके लिए समान रूपसे उपयुक्त हो। जब यह समाचार उक्त संस्थाके नयी दिस्सी स्थित कारागृहमें पहुँचता है, तब वहाँ उक्त समय काम करते रहने वाले उपसम्पादक घुसटनामें मारे गये दिस्सीके कठोरपठकों मृत्युको पिछले महत्त्व देते हुए अग्रभागको नये सिरेसे छिन्न शकता है और इसी तरह मुख्य समाचारका बोधा भी ऐसा बना देता है जिसमें स्थानीय भाषाको अधिक महत्त्व एवं प्राधान्य प्राप्त हो जाय। स्थानीयताका यह पुष्ट चिह्न अनेक घुसटनाका विवरण हमारे पाठकोंके लिए अधिक सार्थक तथा महत्त्व बन जाता है।

एक और समाचार सीबिये जिसमें, कन्दन, दिसम्बर ११ को छापेला पड़ी हुई है। इसमें सर जॉन ब्रोकेनह्रॉफ़ी मृत्युका उल्लेख है। इन महाशयके सम्बन्धमें यहाँ किसको दिक्कतसी हो सकती है। और ये तथ्य हैं कीन्तु यह भाँटा पता चले। इस समाचारका रही-की टोकरमें एक दिशा जाना निश्चित है, किन्तु यदि उपसम्पादकको ध्यानकारी हो और वह नूतन समाचारमें इतना और बढ़ा दे कि सर जॉन ब्रोकेनह्रॉफ़ी मृत्युके एक मासके पूर्वकालीन गवर्नर ने जिन्होंने सन् १९१७ के भूकम्प तथा बाढ़से पीड़ित लोगोंका सहायता पहुँचानेके लिए अहिंसक उत्साहसे काम किया था, तो यह समाचार निःसन्देह महत्त्वपूर्ण बन जायगा। समाचार-संस्थाका उपसम्पादक किसी निर्दोष प्रश्नोंको उछल पछल कर समाचारके साथ जॉन ब्रोकेनह्रॉफ़ी संबंधी चीन्ही भी दे दें तो भारतीय पाठकोंके लिए इसमें सापेक्षता आ जायेगी। ब्रोकेनह्रॉफ़ी पुँज्या विषय हो जायगा और पुरानी स्मृतियों जागरित हो उठेंगी।

समाचार-समितिका उपसम्पादक हर एक समाचारपर कड़ी नजर

पड़ता है और सामग्रीकी दृष्टि भी उन्हें अपने आपको रैनिक पक्षोंके उचितारणसे संस्करणोंसे अधिक परिपूर्ण और विविध विषयोंके उत्प्रेत मुक्तिरत्न पड़ता है।

केलप्रधान पत्रिकाएँ पुरततके समय पड़ी जाती हैं, और पुरततके ही समय उनका रसास्वादन किया जा सकता है। उनकी सामग्री ऐसे समय मिली और जारी जाती है जब कामकी उठावमी नहीं रहती। ऐसी पत्रिकाओंका उपलब्धकर अक्षर कर तथा पढ़नेसे ही अपने आगामी अंकका बर्षा तैयार कर सकता है। उसके पास पर्याप्त समय होता है। समयकी सीमासेका मय उसे नहीं सकता। उसके पाठक क्या चाहते हैं, वह वह जानता है और उनकी इच्छित वस्तु वह उन्हें भेंट करता है।

प्रथम पुत्र सुन्दर और रंग-विरंग होता है। पाठककी निम्नोँर वस्तु उसकी ओर आकर्षित हो जाती है। भीतरका हिस्सा भी बैठा ही मनोमोहक होता है। अन्त-सूचो पढ़नेसे आशा बैचती है कि अन्तमें अन्तमें पढ़नेको मिलेगी, मनको मुस्तातु भीजन प्राप्त होगा। एक एक विषय बड़ी सावधानीसे तथा ठीक ढंगसे प्रस्तुत किया जाता है। शीघ्रक बड़े आकर्षक होते हैं और वे हमारी जिज्ञासाको प्रदीप्त कर देते हैं। समय और स्थलकी आवश्यकताके अनुसार उन्हें बनानेका बेव कर्मकारको है। केल या विषयके ऊपर वह सुन्दर दृष्टि से तय्यार करते हैं और उपशीघ्रक सामग्रीके बीच-बीचमें समाप्त करते हैं।

केल-विषयक पत्रिकाओंमें बहुतसे प्राक, नरको, हास्यविषय, अन्त विषय आदि रहते हैं और उनमेंसे कुछ तो पाठ्य-सामग्रीके बीचमें इस तरह समाहित करते हैं कि केलनेमें बड़े मजे मात्तम होते हैं। इनमें केलनेवाली कहानियाँ प्रायः श्रुत होकर एकद्वारमें समाप्त कर दी जाती हैं। पाठकको उनका तिसरिका तिसरकर अन्तिमाद्य हैंकनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। जिज्ञासा स्थान उपलब्ध होता है उसीके अनुसार कहानियों का मेक बैठा दिया जाता है या उनमें काट ऊँट कर दी जाती है।

होता है। इसी तरह किसी विशेष भाषावाले क्षेत्र या भौगोलिक इलाके के लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि तैयार करनेकी दृष्टि भी समाचारोंका फिरसे मिला जाना आवश्यक होता है।

समाचारपत्रका उपसम्पादक महत्वक अनुसार समाचारोंका प्रदर्शन करता है। रीडरका उपसम्पादक पढ़े जानवाले समाचारोंका दूसरे ढंगसे रखता है। प्रथम समाचार या अवश्य सबसे महत्वका होता है किन्तु दूसरा समाचार उसके बादके महत्ववाला हो ही, इसका काहू निश्चय नहीं। रीडरके उपसम्पादकन यदि मध्यम राज्यके किसी जिलेमें हुए उपद्रवके समाचारको एक स्थानपर रखा है तो बहुत सम्भव है कि सुनियारे अन्य हिस्सोंमें हुए पैसी ही पढ़नवालोंका समाचार भी वह इसीके साथ रखे और इस तरह समाचारोंके रूप या ढंगके अनुसार उनका वर्गीकरण करे।

यह फिर वह स्वदेशके अन्य समाचार भी उसी सिक्कसिद्धम है सकता है जिससे भौगोलिक परम्पराका भ्रम किये बिना समाचारोंका प्रवाह निर्दिष्ट रूपसे जारी रह सके। जिस तरह समाचारपत्रमें प्रकाशित समाचारोंमें विभिन्नता होती है, उसी तरह आकाशवाणी द्वारा प्रसारित समाचारोंमें भी। एक तरफ़के या मिलाते सुनते समाचार या फिर एक ही सत्रके सब समाचार एक साथ रख दिये जाते हैं और हर बारके प्रसारकमें समाचारोंके प्रायः तीन या चार गुच्छ या समूह होते हैं।

रेडियोका उपसम्पादक कथानकके दो अंश चाहूँ होता है जिनके कारण विभिन्न सम्प्रदायों तथा विभिन्न वर्गोंमें परस्पर दृष्टाका माय उत्पन्न होनेकी सम्भावना हो या जिनसे सरकारकी प्रतिष्ठाकी हानि होती हो भयवा जिनके कारण देशमें प्रचलित स्थितिके सम्बन्धमें गलतफहमी होने या प्रतिकूल प्रभाव पड़नेकी आशंका हो। किसी तरहका सन्देह उत्पन्न होनेपर समाचार-विभाग उस अधिकारियोंसे पूछ-ताछ कर समाचारकी पुष्टि करा लेता है। देश कीर समाजके हितोंकी रक्षाके

खण्डों या खोंवाले छीपक देते हैं जो प्रथम पृष्ठपर हो या होत अधिक स्तम्भोंमें फैल रहते हैं। अन्य सभ महत्त्वके समाचारपर वा या एक लघुखस छीपकका प्रयोग होता है, व भल ही दो स्तम्भमें फैले हो या एकम। कभी-कभी हल सामान्य नियमका अपवाद भी दिनाइ पड़ सकता है। विस्मयीसे प्रकाशित हानबाख अंग्रेजी दैनिक 'इन्डियन एक्सप्रेस' ने कुछ नयी बात फैला की हैं, बिद्यप्लवा छीपक पंक्तियोंके रूप और प्रयोगमें। मुख्य समाचारके साथ ता वह तीन मंच छीपक देता है जा दो या तीन बाजम तक फैल रहते हैं किन्तु और सब महत्त्वपूर्ण समाचारोंके ऊपर केवल एक मंच छीपक ही रला जाता है जा तीन काजमका, दो काजमका या एक काजमका भी होता है।

छीपक-पंक्तियोंके कारण समाचारपत्रके रूप, छाया तथा बनाव लजावमें मिनता आ जाती है आर इस प्रकार उसकी चमक-रमक बढ़ जाती है। यहाँसे बहोतक पैल हुए काळे-काख अक्षरोंकी छायासे उत्पन्न मनको उवा रनवाली एककपताका भग करनमें उनसे तहायता मिळता है। सड़कके ठसपार दीड़कर बल पकड़नेके लिए आतुर हुए पाठककी आँखोंको व अपनी ओर आकृषित करती आर अलवार लरीदनके लिए प्रारुहाहित करती हैं।

अखबारके लिए छीपक-पंक्तियाँ छीपा खी उन लिङ्कियोंका काम देती हैं जिनके भीतर लजाकर रल्य हुआ बिन्द्रीका माक देखकर दर्शकका मन खलखा जाता है और वह उस लरीदनको उत्तुक हो उठता है। व बिन्द्रीके माक अचान् अखबारके लल, प्रासमिक वृत्तान्त आदिका बिजापन करती है।

भारतीय पत्रोंस प्रकाशित होनेवाले छीपकोंमें एकसे सेकर चार खण्डोंवाले छीपक होते हैं। इन छीपकखण्डोंको एक दूछछे पूयक

छ छीपकमें अक्सर पढ़न अधिक माग या कण्ड हात हैं जिन्हें हम मंच (रेड) कह सकते हैं। मलेख मंच वा कंडमें एक मयवा पकसे अधिक पंक्तियाँ होती हैं।

समान अक्षर छाड़ा जाता है। यह अनास्था-सा खमनेवाला शीर्षक 'स्टेड्समैन' तथा 'इन्डियन एक्सप्रेस' के पाठकोंकी नज़रोंके खमने प्रायः नित्य ही आता रहता है।

अत्यधिक महत्त्ववाले समाचारके ऊपर भारतीय पत्रोंमें प्रायः पताका शीर्षक (पूठ-शीर्षक) दिया जाता है। यह माटे टाइटलको उस पार रखाका कहते हैं जो पूठके ऊपरी हिस्सेमें बाब सिरेसे दाहिने सिरे तक पूरे पूरे फैली रहती है। कभी-कभी समाचारके स्थिति यह पंक्ति शीर्षकके प्रथम मंच या भागका काम देती है। बड़े भार माटे टाइटलमें दिये गये ऐसे शीर्षक पोस्टरमें रंग दिये जाते हैं, जिससे छद्मके किनारे बिकनेवाले पत्रकी बिक्री बढ़ जाती है। मनसनीलेम अलवार इसके स्थिति ०२ पाइन्ड टाइटल (छा: टाइटल फेला) का प्रयोग करते हैं जो पाठकोंका ध्यान बरबस अपनी ओर खींच लेता है।

भारतीय पत्रोंमें सबसे महत्त्वपूर्ण समाचारका शीर्षक बहुधा तीन बार गाबडुम (इनचर्टेड पिछमिड) शीर्षकोंको मिलाकर बनाया जाता है। उल्लेखनीय यह है कि गाबडुम शीर्षकके साथ नीचेमें से कोई एक या एकधिक मंच या भाग जोड़कर मुख्य समाचारका शीर्षक बना सकता है—

(क) दाहिने-बायें पूरी फैली पंक्तियोंवाला शीर्षक (Flush right and left)

(ख) कटिरेखावाला शीर्षक (Waist Line)

(ग) पार रेखावाला शीर्षक या पताका शीर्षक (Cross Line or Streamer)

मुख्य समाचारोंके शीर्षक चौड़ाईमें प्रायः दो काष्ठमके होते हैं। गाबडुम शीर्षककी पहली पंक्ति अक्सर दो काष्ठमके मी अधिक चौड़ाई की होता है और दूसरी पंक्ति या तो दोनों तरफ समान स्थान छोड़कर बीच-बीच में रखा जाती है या फिर बायें या दाहिने दाहिने पार्श्वतक पूरी चौड़ाई पर उतनी ही जगहमें रखी जाती है जिसनी जगहमें अन्य मंच

या फोर पैका और शीर्षक गाबजुम होगा या और किसी तरहका, इत्यादि। बापीका सम्पादन हो चुकनेके बाद ही शीर्षक लिखा या बनाया जाता है। उस अक्षर अक्षर कागजपर लिखना पड़ता है। हाँ, यदि शीर्षक पैका या ग्रेट टाइटलमें विद्यमान १२ या १४ पाइंटके टाइटल हाता जिस मशीनसे मामूली मैटर कपाज हाता है उसीसे शीर्षक भी कम्पोज हो सकता है। अधिक बड़े टाइटलके शीर्षक या तो किसी दूसरी मशीनकी सहायतासे कम्पोज किये जाते हैं या फिर उन्हें हाथसे कम्पोज करना पड़ता है।

टाइटल खींचने नहीं होते—खींचकर या हटाकर उनका आकार हम बढ़ा या घटा नहीं सकते—और सम्मको खींचा पहलमें निश्चित होती है, इसलिए शीर्षक-पंक्तियों लंबे लंबे बिचारकर लिखनी पड़ती हैं जिससे वे ठीकी जायें आ जाय जो उनके लिए निश्चित हो। यदि किसी पंक्तिमें किसी बात टाइटलके बीच अक्षरों (या इकाइयों) की गुच्छाइयों हा तो उपसम्पादक किसी कम्पोजरसे यह आशा नहीं कर सकता कि वह उसमें एक इकाइके लिए और समझ कर दे। ऐसा करना किसी भी तरहसे सम्भव नहीं।

उपसम्पादक जानता है कि शीर्षककी किसी पंक्तिमें कितने अक्षर आ सकते हैं। यदि उसके पास शीर्षक पंक्तियों सम्बन्धी नकशा मौजूद नहीं रहता तो वह समाचारपत्रके पुराने अंकोंको देखकर अपने लिए स्वयं ही एक बना सकता है। इकाइयोंकी गणना करते समय उसे प्रत्येक अक्षरके लिए एक इकाइ माननी पड़ती है—केवल अंग्रेजीके दो अक्षरों एम तथा डबलके लिए चार इकाइके लिए भी डब डब इकाई ग्रहण करनी पड़ती है। हिन्दीमें ल, ख, ख, म, म, म, ल आदि उपसम्पादक इन्हें अक्षरोंसे अधिक स्थान देता है। पूनविराम अक्षर-

● सय मशीनमें इसकी गुच्छाई नहीं होती मर जहाँ समाचारों का मैटर हाथसे कम्पोज करना है वहाँ तो ग्रेट टाइटलके लिए भी जल्द टाइटलोंकी तरह अक्षरोंसे कम्पोज करनी पड़ती है।

कही गयी मुख्य बातोंके आधारपर धीपक-पंक्तिजो बनाता है। धीपकके पहले मध्यमें सबसे महत्वके प्रसंगका उल्लेख करता है और उसके बादके मध्यमें उससे कम महत्वकी घटनाओं या बातोंकी ओर संकेत किया जाता है। अक्सर किसी एक राज्य या राज्य-समूहका सबसे ऊपरके मंच (पंक्ति) में प्रथम स्थान मिलना चाहिये। उद्देश्य है तथा सामने रखना, ज्योंतक सम्भव हो सकोतक। विद्यमान महत्वकी बातका समावेश धीपक पंक्तिजोमें कर लिया जाता है। गांधी मंडल सामान्य धीपक दिया जाना साग पसन्द नहीं करते। अपनी व्यक्तिगत राय प्रकट करना भी निर्दिष्ट है किन्तु कभी-कभी इसका ध्यान नहीं रहता और इस तरहकी धीपक पंक्तियों पत्रोंमें देखनेको मिल ही जाती हैं जैसे 'पटनाम पुलिसकी आँखें गरदी'।

चतुर उपसम्पादक अतिशयोक्ति कभी नहीं करता और जरा का भी सन्देह होनेपर धीपकके सामने प्रश्नका चिह्न लगा देनेसे नहीं हिचकता जैसे 'सुभाष पत्रु मारकोमें ! किन्तु पत्रके किसी एक ही अंकमें यदि कई स्थानपर प्रश्नचिह्नका प्रयोग किया जाय तो इससे पाठकोंके मनमें प्रश्नका चिह्न देनेसे बचनेकी मरमक कोशिश करता है। वह उसका प्रयोग तभी करता है जब वह जानता है कि ऐसा करना निहान्त आवश्यक है।

किसी भी समाचार या विवरणमें पाठककी अभिरुचि 'क्या हुआ' यह जाननेमें ही होती है। किसी बातका होना केवल क्रियासे ही प्रकट हो सकता है। इसलिए उपसम्पादक जब कोई धीपक गढ़ने लगता है तब वह कोई ऐसा क्रिया शब्द ईँड़ता है जिससे समाचारमें वर्णित घटनाका दृश्य चोखन हो सके। कमवाच्यकी अपेक्षा वह कर्तृवाच्य क्रियाको अधिक पसन्द करता है। वह मंचकी पंक्तिजोमें मूल शब्द बहुत ही कम छोड़ता है। उनके बजाय वह पर्यायवाची शब्दोंका प्रयोग करता है।

सामग्रीका अन्तिम रूप देनेमें उसे सहायता मिलती है और पत्रका मूल-मोहक एवं पठनीय अंक प्रस्तुत करनेमें यह सहाय होता है।

भारतीय समाचारपत्रोंमें मेकअपका तरीका प्रायः निम्न होता है, दृष्टिपूर्ण सब काम बहुत आतानीसे चलाया रहता है। हाँ, यदि ऐन मीके पर कोई विशेष महत्त्वका समाचार आ जाय तो फिर सम्पादकीय विभाग के सम्बन्ध सहरयोंमें परस्पर सलाह मसविदा करना आवश्यक हो जाता है और मेकअपमें दरपार करनेका निश्चय पत्रभरमें करना पड़ता है।

प्रधान सम्पादक (सहायक सम्पादक) छाप्नेका अन्तिम आदेश देनेतक ठाक पहल बेंचे हुए पृष्ठके सगरे पृष्ठपर तरसरी निगाह बाध होता है। उसका अन्त्यस्त निगाह सड़कियोंमें जान लगी है कि एक ही समाचार या वार छप गया है, एक समाचारकी धीपक-पंक्ति किसी दूसरेपर रस ली गयी है, मुख्य समाचारके सम्बन्धित प्रधान व्यक्ति का जो चित्र दिया गया है उसका मुँह छपे हुए मँडरकी ओर न होकर पृष्ठके बाहरकी तरफ हो गया है, कहीं पर गलत तारीख दे दी गयी है किसीके नामके पहले 'काका' का प्रयोग 'साहब' छप गया है, इत्यादि। इनपर वह नौकी ऐम्बिससे निशान बना देता है। मुख्य आवश्यकतानुसार तशोफन कर देता है।

ज्यों ही सहायक सम्पादक दुकान देता है कि 'छापो', मशीन बक पड़ती है और देखते-देखते एक कमखार हो जाता है—समाचारपत्र जम्मा महज कर जाता है।

हम का समाचारपत्र पढ़ते हैं और जिसे इतना ज्वाला ज्वाला करते हैं, वह उस अपिस्मृत नीरकी उपज है जिसे हम 'उपसम्पादक' करते हैं। उसे कम ही लोग जानते हैं। समाचारपत्रकी सृष्टि उसके कम-रम और कपड़े-रका श्रेय पर्याप्त मात्रामें उलीखी है, और हम उसके आभारी हैं।

अनापचारिक, यहाँ तक कि धुम मितकर की जानेवाली बातचीतकी, शस्त्रीमें बिराह जाना चाहिये।

दोनोंमें जो अन्तर है वह बम्प बिपयका नहीं बरन् सिखने या बचन करनेके ढंगका है। किसी बिपयका बर्णन आप किस तरहसे करते हैं, इसीपर यह निर्भर है कि आपकी रचना खेतकी कोटिमें आयगी या 'फीचर' समझी जायगी। फिर भी कुछ बिपय ऐसे हैं जिनपर खेत सिखनेके बजाय 'फीचर' ब्याप्य अच्छे मिल जा सकते हैं। यदि कोई पत्रकार इस बातका बर्णन करे कि किसी मुगलद्वय व्यक्तिने अपना जन्म दिवस किस भूमधामसे मनाया, तो उसकी इस कृतिको खेत न कहकर 'फीचर' कहना अधिक उपयुक्त होगा। खेत प्रायः किसी समस्याके, या समस्याके किसी पहलूके, व्यापक अध्ययनका नाम है। बँधी हुई परि पायीके अनुसार उसका प्रारम्भ किया जाता है, उसी तरह उसका परि पाक होता है और उसीके अनुसार उसको समाप्ति की जाती है। व्यवस्था ही 'फीचर'में भी आदि, मध्य और अन्त होता है किन्तु इसमें कुछ भिन्नता होती है। उसका प्रारम्भ आरम्भ अन्त अप्रत्याशित ढंगसे या अकस्मात् हो सकता है। वह कोई विशेष परिभ्रमण और विस्तारके साथ तैयार की गया रचना नहीं होती। पीछे शब्दोंमें विवक्षित करना ही 'फीचर' की आन है, मात्मा है। अधिक शब्दोंके प्रयोग और इधर उधरकी बातोंके बचन से उसका मूल्य पट जाता है। 'फीचर' में एक ही स्थिति का बर्णन किया जाता है। गद्यमें लिखा हुआ वह एक तरहकी गीतिका (किरिका) है—मनकी एक छविक स्थिति जो शब्दोंमें संघटीत सज्जित कर दी गयी हो। खेतमें गम्भीरसे लेकर उल्लासपूर्णतक, दिव्यसे लेकर हास्यास्पदतक कई तरहकी मनास्थितियोंका बचन किया जा सकता है। खेत उस महलके सदस्य होता है जिसमें कई कमरे आर कई मंजिलें हैं लेकिन 'फीचर' की तुलना हम एक साफ-सुथरे, एक कमरेवाले छोटे घरसे ही कर सकते हैं।

खेत हमें पिछा देता है; 'फीचर' हमारा मनोरञ्जन करता है। खेत

त्रिभुजाको प्रवर्धित कर दिया, जो सभी ध्वान्त हुए अब मैंने तुम्हारे व्यक्तिपका पुनर्निर्माण करने योग्य काप्री मशाला इकट्ठा कर लिया ।

‘फीचर’ के मंत्र

भारतीय पत्र जगत्में शायद सबसे आक्रामक ‘फीचर’ यह है जिसे हम व्यक्तिप सम्बन्धी ‘फीचर’ कह सकते हैं । भारतमें, अन्य देशोंसे अधिक, यह मान्यता है कि जीवन-परिचर्याके विस्तृत रूपका ही नाम इतिहास है । उन महापुरुषोंका सेखर, जो जनताके मनमें पर कर चुके हैं, ‘फीचर’ लिखे जाते हैं, विशेषकर उस समय जब उनके अन्मात्सव मनानेका अवसर आता है ।

जीवन-परिचर्याके मिश्रित-सुखते ‘फीचर’ के तिया एक और प्रकार यह है जिसे हम पौराणिक ‘फीचर’ कह सकते हैं । प्रायः प्रति वर्ष दशहरा, दिवाली आदि पर्वोंक समय सेरक इन ठसठसोंका धार्मिक महत्त्व दिल करते हुए ‘फीचर’ छिलते हैं और उन देशी-देवताओंकी कथाओंका वर्णन करते हैं जिनको रमृति इन ठसठसों तथा मेरोंके रूपमें कायम रखी गयी है । पौराणिक ‘फीचर’ नीरस और निस्तस्व-सा लगने लगता है, क्योंकि अक्सर उसमें विचारोंकी एक रेंजी हुई परम्पराका ही अनुसरण किया जाता है ।

मनुष्यकी दिखन्वस्वी बहानेवाले ‘फीचर’ का जन्म अभी कुछ ही वर्ष पहले हुआ है । इसके उद्गम और प्रचारका भेष ब्रिटिश तथा अमेरिकन समाचारपत्रोंके प्रभावको है । भारतके सेलक भी अब ऐसे विषयोंपर छिलनेका महत्त्व समझने लगे हैं जैसे ‘पौजबी बार विवाह करनेवाला सी बपका बूझा’ या ‘शहरकी सड़कोंपर टांखते भड़नेवाला १९ इंचका पीना ।’ ‘मनुष्यने फुलका काट लिया’ जैसी कथाओंने अब अनोखी पटनाआके महत्त्वकी ओर नये छिरेसे हमारा ध्यान आकृष्ट कर दिया है । ‘फीचर’ छिलनेवाले सेलक अब ऐसी बारबायों या पीजोंको साज-फिरमें रखने लगे हैं जो भौतिक, विविध तथा असाधारण हों ।

विशेष ‘फीचर’ मो अब पसन्द किया जाने लगा है । इसमें उन

उत्पन्न हो गया था। उन्होंने 'इंकस थीकसी' नामक एक अक्षर पत्र निकाला है जिसमें अने सामाजिक कुरीतियों तथा दार्शिक उपहास करनेके लिए भी अने चित्रोंका प्रयोग किया जाता है। उनमें वे राज नीतिक नेताओंकी वृत्तलाओं तथा प्रकाशन सम्बन्धी गुरुद्वारा अपनी सुविधाओं से राजनीतिज्ञोंका प्रचलन करते हैं। उनके अन्वेष-विज्ञान, जो अब सिविलिज्ड द्वारा अन्य अन्य पत्रोंमें भी प्रकाशनाभ भेजे जाने लगे हैं, नये क्षेत्रकी ओर कदम बढ़ाया है जिसमें अधिकाधिक प्रगति होनेकी सम्भावना है।

'फ्रीप्रेस' दिल्लीमें बाधाएँ

"फ्रीप्रेस" दिल्लीकी कक्षाका मासमें अधिक विकास नहीं हो पाया है, इसके कई कारण हैं। निरन्तरता इसके लिए बहुत हदतक जिम्मेवार है। माँग होने पर हो पूर्ति की जाती है। "फ्रीप्रेस" के हमारे लिखे गये लेखोंकी अधिक माँग नहीं है, क्योंकि देशके हमसे कम ८५ प्रतिशत लोग समाचारपत्र ही नहीं पढ़ सकते।

स्वातन्त्र्य-संग्रामके समय देशके करीब-करीब सभी समाचारपत्र विविध प्रकारके विवाद एक आदमीकी तरफ संचालित हो गये थे। उनका अधिक स्थान राष्ट्रीय आन्दोलन सम्बन्धी समाचार, नेताओंके क्रिया कल्प और अंग्रेजी सरकारके बुद्धियोंका अपराध करनेमें लग जाता था। राष्ट्रीय माँग और राष्ट्रीय आकांक्षाओंका समयन करनेवाला सेल तथा विवरण प्रतिदिन निकलते थे। उस समय कुछ मनोविनोदकी दृष्टि से लिखे गये लेखोंके लिए गुञ्जाबूझ ही कहाँ थी ?

स्वातन्त्र्य-आन्दोलनके कारण लोग बराबर राजनीतिक विषयोंमें ही, उभीकी बधाईमें व्यस्त रहते थे। इसीसे वैज्ञानिक, सांसाहिक तथा सांस्कृतिक पत्रोंमें लेखोंके लिख जानेकी ॥ स्फूर्ति मिली। "फ्रीप्रेस" दिल्लीकी प्रगति, जिसमें जीवनके रक्तनकारी अंग, मानव पहलूका चित्रण होता है, वहाँके लेखकोंमें पढ़ने नहीं पायी। राजनीतिमें संचार रहना ही १५ अगस्त से १९४७ तक भारतीय पत्रोंकी विशेषता थी। स्वतन्त्रताकी

हेतुके दृष्टियों पत्रोंमें ये सब प्रकाशित हाथ रहें हैं किन्तु अब भी मैंने "पीपर" छिलनेकी पर्याय की पत्रोंमें मुझे यथार्थ प्राप्तिमान नहीं मिली। "पीपर" छिलने में बहुत कम ही पैसा प्राप्त कर सका। कभी-कभी ही मेरा वह स्वर्ण भी बहुत नहीं हो सका या मुझे किसी "पीपर" के तैयार करनेमें उठाना पड़ा। फिर भी "पीपर" छिलनेकी आरम्भ विघ्न आकाश है और मरु इरादा उसे छोड़ बैठनेका नहीं है। मेरा विश्वास है कि स्वतन्त्रताके इस उपलब्ध प्रभातके बाद ज्यों-ज्यों साक्षरता बढ़ती जायगी, पश्चिमके देशोंसे अधिकारिक सम्पर्क होगा तथा फोटो प्रार्थिका विकसित होता जायगा, त्यों त्यों "पीपर" छिलनेकी प्रवृत्ति भी बढ़ेगी और उनकी अधिक माँग होगी। अब मैं पीपर छिलने करूँ पत्रोंमें छपवा सकता हूँ। सम्पादकगण अब "पीपर" छिलनेको भी प्रोत्साहन देने लगेंगे।

भारतीय पत्रकारीका यह अभिप्राय है कि हमारे पत्रोंका ९० प्रतिशत स्थान लाभ बहुरूपों तथा उपाय देनेवाले व्यापारोंसे ही भर जाता है। उनके कारण पत्र विद्युत्क नौकर, एक ही रंगके और निष्प्राप्त प्रतीत होने लगते हैं। उनमें 'पीपरों' तथा बत्ताके छिद्र बहुत थोड़ी जगह बच पाती है। जो हा, जम्मे बहुरूपोंको अन्य कापी काट-छँटकर छापने की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिससे सम्पादकोंको छोड़ सख्तों आदि को भी स्थान दिया सके।

"पीपर" छिलनेवालोंको किसी तरहका पत्रप्रदशन छामर ही कभी प्राप्त होता है। उन्हें अपनी ही आन्तरिक प्रवृत्ति, ज्ञान और अनुभवका भरोसा करना चाहिये। उन्हें 'पीपर' तैयार करनेकी, और छत्र छिलने की भी कला या प्रविधि कभी सिखायी नहीं जाती। 'पीपर' छिलने की काँइ पुणनी परम्परा भी उनके सामने नहीं है। इस कलाके कोई अच्छे बहुरूप उपाहरण भी भारतीय उपलब्ध नहीं, जिनके आदर्शपर वे अपने 'पीपर' तैयार कर सकें या किन्हीं हेतुकर व आन्तरिक प्रेरणा प्राप्त कर सकें। 'पीपर' छिलनेवालाका इस कलाके सम्बन्धमें जो धारण

इनके लेखकोंको प्रोत्साहित करते हैं। मैंने एक बार एक मेहतरपर छाया या 'पीपर' छिछा था। केवल 'नेशनल हराल्ड' ने ही उसे प्रकाशित किया। ऐसे असाधारण विषयपर छिलनेके लिए कुछ लोगोंने पत्र भेजकर मुझे पचाइ दी। पाठकोंको इस बातकी विशेष खुशी हुई कि पत्रने मेहतरका विषय भी प्रकाशित किया जिसमें वह अपनी डाकरी तथा स्याहू लिये सजा था।

मध्यममें सेल तथा 'पीपर' छिलवाकर उन्हें विभिन्न पत्रोंके पास प्रकाशनाथ भेजनेका काम ठिकानेसे करनेवासी छापर ही चाह सत्या हो। कुछ लोगोंने ऐसी सरथा चढानेका प्रयास किया किन्तु उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली, क्योंकि सुझावनामा महत्त्वपूर्ण लोगोंसे लेल प्राप्त करनेमें वे असमर्थ रहे।

भारतमें, जैसा कि पश्चिममें भी होता है, यहाँ आदमीके सामूहिक से संस्कारों भी उस परिणाम सेप्राप्ते अधिक तरबीह भी जाती है जो क्वालि-भवनका प्रयत्न करनेवाले किसी नये संस्कार द्वारा किया गया हो। ऐसे पत्र छोड़े ही हैं जो 'पीपर' छापते हैं और 'पीपर' छिलनेवासे उनसे भी कम हैं। कुछ समाचार-संस्थाएँ कभी-कभी सेल भी भेज देती हैं किन्तु वे 'पीपर' छिलवाकर पत्रोंमें प्रकाशनार्थ भिजवानेकी व्यवस्था छापर ही करती हैं।

'पीपर' कैसे छिले जायें

अब प्रश्न यह है कि 'पीपर' तथा सेल कैसे छिले जायें। एक अच्छा प्रेसपुत्र भी (एफ० ए पाठ स्वार्थ) कितानोंकी सहायतासे अच्छा सेल छिल सकता है, यदि वह मेहनती हो तथा अपने विचार अच्छी तरह प्रकट कर सकता हो। किन्तु कोई स्वार्थ 'पीपर' पत्रों छिल सकता है जब उसकी निरीक्षणशक्ति सास तीरसे प्रकट हो तथा उसे मनुष्यों और वस्तुओंका अच्छा ज्ञान हो। 'पीपर' तैयार करनेकी अभेद्य सेल छिल साधना अधिक आसान है।

मान लीजिये किसीको जीवन-परित्र सम्बन्धी अपना कोई ऐतिहा

इच्छाहावास्में मैं बर्षोंतक अक्षर नेहरूजीके निवासस्थान, आनन्द भवन, जाया करता था। वहाँ मुझे बहुतो अच्छे विषय मिलनेके लिए मिल जाया करते थे। एक दिन प्रधान मन्त्रीकी पुत्री इन्दिरा देवीने मुझे बताया कि उनके परिवारका रसोइया मुझी, जो श्रीमती बिजयलक्ष्मी पण्डितके साथ मास्का गया था, उसके सम्बन्धमें बहुत-सी मनोरञ्जक बातें जानता है। वरत, मुझे पीपर मिलनेके लिए अच्छे विषय मिल गया, जिसका शीर्षक मैंने रखा 'बह रसोइया जो मास्को गया था'।

मैंने उसे अपने घर बुला लिया और बहुत देरतक उससे बातचीत की। उसने बहुत-सी मनोरञ्जक कथाएँ सुनायी और कुछ दिग्बल्लस घटनाओंकी भी ख्याली की। उसने अपने अनुभवोंका जो कथन सुनाया, वह विस्तृत ताजा था और मनोरञ्जक भी, क्योंकि राजनीतिक गुप्तियोंतक वह दूर था। वह अधिकतर भेषीका व्यक्ति था और उसके मनपर राजनीतिक विचारवादाओंकी भूछमुझैयाका काह प्रभाव नहीं पड़ा था। उससे बातचीत करनेके बाद मैंने जो 'पीपर' तैयार किया वह मेरे मिल सर्वोत्तम पीपरोंमेंसे एक था।

नेहरूजी जब भी इच्छाहावाद आते हैं, मैं मानव हृदयको स्पष्ट करनेवाली कथाओं और 'पीपरों' के लिए उनपर नजर रखता हूँ। एक दिन आनन्द भवनमें बैठे हुए उन्होंने धकानका अनुभव-ता करते हुए कहा कि मैं रातभर विभ्रम करनेके लिए ही अपने तमरमें खड़ा आया हूँ। मुझे लगा कि ठीक तो है, मेरे 'पीपर' का शीर्षक भी यही होगा—'केवल एक रात विभ्रम करनेके लिए।' मैंने उन्हें अपने नीकटसे मिलने और बातचीत करते देखे। बातमें कुछ तोड़ते ना पुराने साधियोंसे गपघप करते समय भी मैं नहीं था और जब वे अपने निजी कागज-पत्र देखने लगे तब भी मैं उनकी भावभंगी आदिका अध्ययन करता रहा। इधर उधरके कह अंश गुप्तित कर मैंने मानव भावनाओंतक ओतप्रोत एक कहानी मिलि बाँधी जो पढ़ने पर बड़ी मनोरञ्जक साबित

कि प्रीचरका प्रारम्भ कैसे किया जाय, 'प्रीचर' लिखनेमें कमी-कमी कुछ कथाकी प्रविधि या शैलीका प्रयोग भी सफलता दिखानेमें सहायक होता है।

यदि छेल्कमें अच्छी योग्यता हो तो मांजके साथ, धीरे धीरे आगे बढ़नेकी शैलीसे प्रारम्भ कर दाइमें उसे भस्म रूप दिया जा सकता है जिसकी परिणामाति चरम स्तिथिपर पहुँच कर हो। इस उपपन्न पाठक का ध्यान बराबर कथानककी ओर हो गया रहता है। और वह परिणामके सम्बन्धमें तरह-तरहके अनुमान ही करता रहता है किन्तु वह टैली है बहुत कठिन। एक जास तरहका 'प्रीचर' लिखनेमें हो इसका प्रयोग किया जा सकता है। 'प्रीचर' का प्रारम्भ तथा अन्त छप्पदार या आसकारिक मापामें करना हमेशा अच्छा होता है।

अच्छा प्रारम्भ और आनन्दमय अन्त, यही 'प्रीचर' लिखनेकी सफलताका मुख्य तत्त्व है, किन्तु 'प्रीचर' लिखनेकी कलापर छिले गये इस छेल्कका भी अन्त आसकारिक मापके प्रयोगकी वेशके साथ हो, यह आवश्यक नहीं है।

भी अपने कामसे चारों तरफ घूमते रहनेके उसके पुराने दिन (जब उसे रिपोर्ट देने कपहरी या सरकारी सूचनाकालाप, आदिकी जाना पड़ता था), बहुत पीछ रह जाते हैं ।

अप कोइ विशेष जिम्मेदारीका काम हो उसे छोपा जाता है । उसे बहुत कुछ आन्तरी रहती है और अपना स्वर्ण करनेकी प्यास मुबिधा भी । अस्सर उससे तथा पत्रके सम्पादकसे महीनों देखा देखी नहीं हो पाती और इस तरह वह अपने काममें जुद मुक्तार-ता रहता है । समाज तथा सरकार, दोनोंको उसका विशेष ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि उसमें उनकी सेवा करनेकी सामर्थ्य रहती है और जैसेआम उनका समाधा बनानेकी भी ।

भारतीय संविधानमें समानारपत्रोंको अन्य सब उद्योगों, वृत्तियों तथा रोजगारोंसे छुट्का रखा गया है और उन्हें किलने तथा मर प्रकट करनेकी स्वतन्त्रताका निश्चित आश्वासन दिया गया है यद्यपि उतना पूर्ण और पक्का नहीं जितना अमेरिकाके संविधानमें है । संविधानकी इस विशेष अनुकम्पाके कारण विधाय संवाददाताको संसदीय सदस्योंके बहुतसे अधिकार प्राप्त होते हैं—सार्वजनिक समारोहोंमें बैठनेका विशेष स्थान, सचिवालयोंमें प्रवेशकी मुबिधा; रेलगाडी सम्पत्ती रियायत, निवासकी मुबिधा, प्रधान मन्त्रोंसे (या मुख्य मंत्रियों आदिसे) मिलकर प्रस करने और उनका उत्तर देनेका अधिकार । सम्भवतः इन्हीं सब बातोंके कारण जेम्स गोरडन पेनेटने विशेष संवाददाताको “भाषा राजदूत तथा भाषा गुप्तचर” कहा था । उसे ससदके सदस्यसे भी अधिक स्वतन्त्रता रहती है क्योंकि उसकी निम्न किसी राजनीतिक दलके प्रति न होकर सारे समाज के प्रति होती है ।

उसे जो इतना महत्त्व प्राप्त है, उसका कारण यह है कि लोकतन्त्र-प्रणालीमें लोगोंके सामने सब तथ्य ही नहीं रहने चाहिये वरन् सब दृष्टि कोण तथा (किसी धारा, मजबूत आदिसे) विभिन्न व्यक्तियों द्वारा किये गये सब अर्थ भी होने चाहिये, वही वे सार्वजनिक हितके मामलोंमें या

साम्प्रो पहचानी जा सकती है, हमारे पत्रकार उम्मीदर अन्य प्रश्नों की अपेक्षा उसके लिए अधिक जोरदार उत्तरों को तैयार करता है।

भारतमें वह एक काम और करता है। वह उस सम्पादक या पत्रकार की भूमिका प्रस्तुत कर रहा है जिसके बारेमें वह जानता है कि संवाद समिति द्वारा इसका पूरा निबर्ण भेज ही दिया जाएगा। उसके भूमिका के कर्मों लिए गये अनुच्छेदों (पैराग्राफ) के कारण, जिनमें अत्यंत सारांश और अंशतः टीका-टिप्पणी रहती है, संवाद-समिति द्वारा प्रेषित कोर भी रिपोर्ट, जो इसीके बाद छपी जाती है अधिक आसानीसे पढ़ी और समझी जा सकती है, मसं ही वह कई टुकड़ोंमें आर अत्यन्त दृढ़ता के साथ न भेजी गयी हो।

पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने तथा अध्यापनका काम

अर्थ स्पष्ट करनेका जो अधिक बड़ा काम वह करता है, उसका वह एक छोटा व्ययमात्र है। पृष्ठभूमि सम्बन्धी जो सामग्री हँद-डोंपकर वह भेजता है, उसके कोर भी वृत्तान्त अच्छी तरह समझने आने के लिए बन जाता है, इसलिए उसकी रिपोर्ट अलग पत्र हुए पत्रकी तरह नहीं, बल्कि भूमिमें मजबूतीसे अभी कुछ अज्ञानवाले पत्रकी साम्प्रदायिक रूप पत्रके द्वारा देखा पड़ती है। यही उसका मुख्य काम है। विशेष संवाददाता ने इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा साहित्यमें जैसी शिक्षा हासिल की हो, उसीके अनुसार उसे इस कार्य में लगे रहना पड़ेगा। प्रत्येक विषयका परिचित होना उसके लिए आवश्यक नहीं है किन्तु इन विषयोंके जाने माने हुए साहित्यसे परिचित होना उसके लिए आवश्यक है।

संक्षेपमें, सम्पादक-समितिके, रेडियोके और सरकारके किसी कम आरीके विपरीत, विशेष संवाददाताको अपने निबर्णों, वृत्तान्तों आदिमें अपना व्यक्तिगत प्रकट करनेकी पूरी स्वतन्त्रता है, विशेषकर उस समय

जिन देशोंमें रेडियोका सत्ताकान् वीर-सरकारी संस्थाओंके हाथमें है, जैसे मिरानमें बर्होकी बात सूचरी है, क्योंकि वहाँ रेडियोपर भाषण करनेवाले आलोचक स्वतन्त्रतापूर्वक अपना विचार प्रकट कर सकते हैं।

एक तरह का सभ्य पत्रक, भी होता है। ऐसे सनाददाताओंको अपने सनादकोंके आवेष्टित पटना-प्रचार सुचित करनेवाले ऐसे विवरण या कथानक भी भेजने पड़ते हैं जिनके आधारपर सभासदकीज डेल तथा टिप्पणियाँ लिखकर किसी विषयकी जोरदार चर्चा की जा सके।

सामान्यतः कोई भी भारतीय पत्र अपने विषय सनाददाताको देण्डे सम्य पक्षोंमें लिखनेकी अनुमति नहीं देता किन्तु उन विदेशी पत्रोंका प्रतिनिधित्व करने देनेमें आर्थात् नहीं की जाती। बहुधा यह गौरवकी बात समझी जाती है। 'टाइम्स आफ इण्डिया' तथा 'स्टेन्समन' में ऐसे कितने ही पत्रकार काम करते हैं जिनके सम्बन्ध ब्रिटिश पत्रोंके साथ भी हैं और 'अमृतबाजार पत्रिका' तथा 'हिन्दू' में ऐसे आदमी हैं जो इनके सिवा अमेरिकन पत्रोंके भी प्रतिनिधि हैं। जो हो, मोटे हिसाबसे तो पश्चिमके बड़-बड़े दैनिक पत्र अपने ही देशके व्यक्तियोंको विशेष उपाय बतावा बनाते हैं और ऐसा बहुत ही कम होता है कि कोई भारतीय उनके कामके व्ययक्त समझा जाय। इसके विपरीत 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ब्रिटिश तथा अमेरिकन पत्रकारोंका काहिरा, सन्देश तथा न्यूयार्क जैसे महत्त्व-पूर्ण स्थानोंपर भी अन्ना विशेष प्रतिनिधि नियुक्त करता है।

समाचारपत्रोंमें काम करनेवाले पत्रकारोंमें यह प्रवृत्ति बढ़ रही है कि विद्युत् (यूर) समाचार दिया जाय, जो तथ्य हा वह निर्भीक रूपसे प्रकाशित किया जाय, परापि पाठकके मनमें अब भी ऐसे समाचार या वृत्तान्त पढ़नेका भूख रहती है जो विशेष दृष्टिकोणसे तथा नमक मिर्च लगाकर लिखे गये हों। विशेष सनाददाताओंको अभीतक जो बूढ़ मिली है, उसे पत्रके पाठक पसन्द करते हैं किन्तु इससे उन पत्रकारोंको मानो हम्मा होती है जिन्हें पटनाओं आदिका विद्युत् विवरण देनेकी सिवा और कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। जो हो, पाठकगण किसी विषयका अथवा अभिप्राय समझनेको ही अधिक उत्सुक रहते हैं, आँकड़ोंकी सूची पढ़नेको नहीं, विशेषकर विज्ञान और विस्मयकी उद्यतियों इस अतिरिक्त सुगम

संवाददाताओं के कामकाज को दूर प्रभावित किया उससे हमारे कितने ही प्रमुख समाचार भ्रमों में पड़ रहे गये—उन्होंने मुझकी इस आवश्यकताकी ओर ध्यान नहीं दिया कि यह काम ऐसे पत्रकारोंको सीखा जाय जो अपने भाव प्रकट करनेमें सुचारु हों और जिन्होंने यथेष्ट उच्च शिक्षा प्राप्त की हो।

अमेरिका और ब्रिटेनके समाचारपत्र जितनी जल्दी यह बात समझ गये कि केवल शीघ्रजिप तथा टाइपिंग जाननेवाले व्यक्तिसे यह काम नहीं किया जा सकता उसनी जल्दी भारतीय पत्र नहीं समझ पा रहे हैं। हमारे देशमें जो परम्परा चल पड़ती है, वह बड़ी देरमें ही टूटती है। भारत सरकारकी राजधानीमें पत्रोंके जो 'विशेष संवाददाता' नियुक्त हैं, उनमेंसे कितने ही बिल्कुल मामूली इंसानोंके हैं, यद्यपि कुछ उच्च योग्यता वाले भी हैं और इनकी संख्या धीरे-धीरे बढ़ रही है। ये लोग भाष्योंकी तथा स्थानीय घटनाओंकी भाव वैधी हो रिपोर्ट भेज देते हैं जैसी समाचार-समितियों द्वारा भेजी जाती है। वह पिछलेपन मात्र है जिससे विशेष संवाददाताके विवरणमें कोई 'विशेषत्व' नहीं रह जाता।

अमेरिका जैसे देशमें भाषण व्यक्तियोंकी स्थिति कितनेके लिए अत्यन्त व्यक्ति नियुक्त रहते हैं। उसके लिए ऐसी वृद्धभूमि तैयार करना विशेष संवाददाताओंका काम है जिससे वृत्तान्त बिल्कुल वास्तव प्रतीत हो, उसमें अपना निराशापन हो तथा पाठकका ध्यान अपनी ओर खींचनेकी शक्ति हो। अपने पत्रके लिए स्वयं प्राप्त कर कोई समाचार जल्दीसे जल्दी भेज देनेका आज उतना महत्त्व नहीं है जितना उसे प्रस्तुत करनेके अपने नियमोंके दंगका। विशेष संवाददाताको एक तरहका कहानी-लेखक या निरास उपभ्यास-लेखक-सा बनना पड़ता है जिसमें बारबार माथामें किसी चीजका ध्यान कर ऐसा वातावरण प्रस्तुत करनेकी क्षमता हो जिससे प्रमादित होकर पाठक वह अनुभव करे, मानो वह स्वयं प्रत्यक्षदर्शी रहा हो। ठीक ठीक जो कुछ कहा गया या जो कुछ पठित हुआ हो, विशेष संवाददाता उससे आगे बढ़ जाता है, वह बुझा उच्च दृष्टिकोण सृष्टि करता है।

विशेष प्रतिनिधि

हमने विशेष संवाददाताओं के स्थान बता दिए और यह भी देल दिया कि वह रिपोटर्स, सम्पादकों, संवाद-समितिके आदमियों, रेडियो के आम्बोयकों तथा स्वयं-सेलफोसे भिन्न होता है। उसका विशेषत्व कहाँ शुरू होता है यह हमने देल दिया। किन्तु अभी तक हमने समूचे वर्गका वर्णन किया है पर अब हम देखते कि उनके सेवा या प्रकारोंमें क्या अन्तर होता है।

विशेष संवाददाताओंका ही एक भेद 'विशेष प्रतिनिधि' भी होता है और यह भारतमें प्रायः नियमित रूपसे प्रचलित है। सन् १८९९ में लार्ड कार्बन के वाइसराय बनकर आनेके बादसे यहाँके प्रमुख दैनिक पत्रोंका रिवाज-सा चल पड़ा कि गर्मियोंमें जब कभी भारत सरकारका कामकाज कुछकुछसे हटकर छिमायमें जाता जाता था, तब प्रभावशाली और उच्चाधिकार-सम्पन्न व्यक्ति उनका प्रतिनिधिके रूपमें वहाँ नियुक्त कर दिए जाते थे।

यह रिवाज चल पड़नेका कारण यह था कि उस समय दिल्लीके क्षेत्रमें कोई भी प्रभाव-सम्पन्न दैनिक पत्र नहीं था। जो पत्र सबसे निकट पड़ता था वह था आहौरका 'विशेष एण्ड मिमिटरी गजट'। मद्रास, बम्बई और कलकत्तेके बड़े बड़े समाचारपत्र छिमायमें केवल समाचार प्रेषकोंकी नियुक्तिसे संतुष्ट न थे। वे उस महानगरीमें अपने प्रतिनिधि या 'एजन्टी' (राजनीतिक वृत्त) भी रखना चाहते थे। इनकी सहायतासे बहुत-सी भीतरी जानकारी ही प्राप्त नहीं की जा सकती थी वरन् कुछ रिवायत तथा सुविचारों पानेके लिए भी प्रयत्न किया जा सकता था।

इन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए ऐसे व्यक्तियोंकी आवश्यकता थी जो वाइसराय-भवनमें तथा सचिवालयमें आसानीसे प्रवेश पा सकते थे। पायोनिस् (इलाहाबाद) के भी होबह हैसमैन, केवल अपने पत्रके लिए उच्चाधिकारियोंसे मिलकर प्रभोत्तर द्वारा हाजिराख जान सेनेशाल प्रतिनिधिके रूपमें शीघ्र ही प्रसिद्ध हो गये। विशेष प्रतिनिधिके इस

आदिमें छप्पे विवरणके आधारपर, तैयार कर लिया जाता है। स्पष्ट है कि देशके कुछ पत्र तो सरकारसे प्राप्त सूचना-पत्रों आदिमें ही हुए राष्ट्रीय पत्रियोंतक ज्योंकी त्यों रहने देते हैं, उन्हें फिरसे अपन दृष्टिपर लिखने का भी कष्ट नहीं करते।

अब किसी विशेष संवाददाताको अपने पत्रके प्रधान कार्यालयमें बुर रहना पड़ता है और राजधानीमें उसको निपुणता होती है, तब वह विशेष प्रतिनिधि कहलाता है। ऐसे संवाददाताका अब स्वदेशके बाहर जाना पड़ता है और किसी देशकी राजधानीमें या संयुक्त राष्ट्रसंघ जसी अन्तर राष्ट्रीय संस्थाके प्रधान कार्यालयमें उसकी निपुणता होती है, तब उसे 'विदेशी या विदेशस्थ संवाददाता' की संज्ञा प्राप्त होती है। मूल रूपसे वही विशेष संवाददाता है जो राष्ट्रीय राजधानीमें 'राष्ट्रीय' संवाददाता, विदेशीमें विदेशस्थ संवाददाता तथा मुद्र-भ्रममें 'मुद्र-संवाददाता' कहलाता है। अपने सम्पादकसे जितनी बुर उसे रहना पड़ता है उसकी तरह मड़क तथा ठठका कर्जा भी उसी अनुपातसे बढ़ता जाता है। वह ऐसा नष्ट है जो वह आकाशमंथनकला देख पड़ सकता है और बहुतसे नष्टपूर्ण समारोहोंमें उसे निकटकी जर्जरी अगह बैठनेका मिलती है। हमेशा तो वह वर्तमान इतिहासका प्रत्यक्षदर्शी बना रहता है किन्तु एकाम बार वह इतिहास निर्माता भी बन जाता है, जैसे आर्च स्मोकाम्ब नामक पत्र-प्रतिनिधि बना जब उसने सन् १९१६ में परबरा जेलमें महात्मा गाँधीसे मद्र मुद्राकाव की—(इस मुद्राकावके सम्बन्धमें शुक्रमें ही वाइसरयने आत्मकामना की थी)—और यह समाचार प्रकाशित किया कि भारतका यह महान् नेता 'स्वतन्त्रताके सार भाग'से भी छन्दुष्ट हो आया। यही वह सिद्धान्त था जिसके आधारपर बातचीत आगे बढ़ सकी और सम्पत्तीता हो सका। ये ही आजके पता लगानेवाले तथा स्थितिकी गहराईतक जानेवाले व्यक्ति हैं। ये उत्तम श्रेणीके स्वामी नागरिक हैं जो राजदूतावासके सदस्योंकी टकराके होते हैं।

इस विवरणमें विशेषतः संवाददाताओंकी अर्थात् एक विशेष तरहके

उपाधिकारी—“मैं एक बात केवल अपने और तुम्हारे बीचमें कहना चाहता हूँ। यह लिखित विवरणके विष्फुट्य बाहरकी चीज है। तुम्हें मेरे व्यंग्यमें प्रतिष्ठा करनी होगी कि तुम्हारे सिवा किसी अन्य व्यक्ति पर यह प्रकट न होने पायगी।”

विशेष संवाददाता—“समा करें, महाशय, ऐसी गुप्त बात जाननेमें मेरी तनिक भी व्यक्ति नहीं है।”

ऐसे आत्म-नियन्त्रण तथा साहसकी आवश्यकता प्रायः ही पड़ती है। कई मामलोंमें तो इस तरहकी गुप्त जानकारीसे विशेष काम हो सकता है। किन्तु अन्य कितने ही मामलोंमें विशेष संवाददाताको निस्संकोच भावसे कह देना चाहिये—“कृपया अपना गोप्य रहस्य प्रकट न कीजिये क्योंकि मैं जुगुप्सी ही छाये रहूँगा, ऐसी प्रतिष्ठा मैं नहीं कर सकता।” बहुत बार तो ऐसा होगा कि ठक ‘रहस्य’ संवाददाताको पहले ही माखम हो चुका रहेगा। यदि नहीं हुआ तो भी १० से १ उदाहरणोंमें उसे अन्य जरूरियोंसे उसका पता चला जायगा, क्योंकि ऊँचे अधिकारी भी आखिर मनुष्य हैं और अपना प्रचार करनेके इच्छुक रहते हैं। इतकिय विशेष संवाददाताओंके लिए काह भी ऐसी गुप्त जानकारी किसी घर्ष या प्रतिस्पर्धके साथ प्राप्त करना बुद्धिमानी न होमी, जिसे उसके प्रतिस्पर्धी बिना घर्ष के ही किसी अन्य जरूरियेसे प्राप्त करनेमें सफल हो जायें और उसे उसके पहले ही प्रकाशित भी करे। उसे इस बातका पूरा ध्यान रखना चाहिये—समाचार प्राप्त होनेके महत्वपूर्ण सारोंके सम्बन्धमें भी—कि कोई उससे अपने प्रचारका ही काम न लेने लगे।

उसका सबसे बड़ा कष्ट व्यक्तताके प्रति होता है, इतकिय किसी व्यक्तिविशेषके प्रति, फिर वह चाहे जितना बड़ा क्यों न हो, उसका कष्टम् अपेक्षाकृत गौण ही माना जाना चाहिये। सबसे महत्वके गुण जो किसी विशेष संवाददातामें होने चाहिये, वे ये हैं—

१. व्यापक क्षेत्रके विभिन्न तरहके लोगोंसे सम्पर्क—सरकारी अफ-

हमेशा हिस्सा ग्रहण करते हैं, भले ही इसका उन्हें मान न हो। उनमें हम पार्टीका होना आवश्यक है—

विदेशी मापाओंका ज्ञान। (भारतमें अंग्रेजीके सिवा फ्रेञ्च तथा जर्मन, दूसरी मापाओंके रूपमें अधिक लोकप्रिय है किन्तु रूसी, चीनी तथा स्पेनिश मापा ज्ञाननेवाले व्यक्ति पत्रकारीमें अधिक काम कर सकते हैं, जैसे कूटनीतिक क्षेत्रोंमें भी)।

छन्द-विश्र प्रस्तुत करनेकी स्वामाधिक योग्यता।

यह ज्ञान देनेकी बुद्धिमत्ता कि कितने ही अन्तराष्ट्रीय सगर्बों तथा विवादोंका कोई सीधा और तात्काधिक समाधान नहीं होता चाप ही यह भी कि सगर्बों वस्तुतः न्याय और अन्यायका नहीं, दरन् न्याय और अन्यायका ही है और किसीका दृष्टिकोणसे प्रेरित हुआ वरन् न्यायोचित समझा जाता है, फिर भी वह हमेशा न्याय्य नहीं होता।

विदेशी सबादशासकों को कभी-कभी संशुभ ही कठिन काम सौंप दिया जाता है, विशेषकर ऐसे सुप्रसिद्ध साप्ताहिकों द्वारा जैसे 'न्यू स्टेट्समैन एण्ड नेशन' (लन्डन), तथा 'न्यू रिपब्लिक' (वाशिंगटन)। हमारी 'छन्दनकी चिट्ठी', 'वाशिंगटनकी चिट्ठी' या 'विस्कीकी चिट्ठी' से आशा की जाती है कि देशमें उस सप्ताह सबसे अधिक बर्षा किस बातकी रही, कौन-सा मुख्य प्रश्न उसके सामने था, इसका बयान उसमें हो। केवल एक ही वृत्तान्त या कथानक दे देनेसे काम नहीं चलता और जब केवल एक ही विषयका बयान किया जाता है, तब वह दसके छहोंपरि भावका सूत्रक माना जाता है।

यदि विद्यमुक्त 'मामूलीपन' तथा ऊपरसे देखने भरकी सबादसे बचना चाहे तो यह काम करना काफी कठिन है। ऐसी चिन्तियोंमें सुन्दर औरछर मापाका प्रयोग करना सफ़लताकी कुञ्जी है, क्योंकि यहाँ पत्रकारकी रन्ध्रा साहित्यकी ओर उम्मुल-सी होती जान पड़ती है। विदेशीने 'छन्दन टाइम्स' के बारेमें सन् १९४० में लिखा था—

'आश्चर्यकी चीज यह है कि 'टाइम्स' जहाँ मेरे मापका प्रशस्तीय

मित्रोंसे ही प्राप्त नहीं होत, सच्चाक्य व्यक्तियोंके विरोधियासे और स्वयं सच्चाचारियोंमें भी प्राप्त होते हैं। वे सबके सब विशेष संवाददाताकी बोझी सी सहायता करना चाहते हैं, इस आशासे कि जब मौका आयगा तब अपनी बात भी प्रकाशित करनेकी सुविधा उन्हें मिल सकेगी। मुख्य रूपसे उस जानकारी जोगोंसे का गयी अपनी वास्तविकता ही निभर रहना चाहिये।

सामान्य रिपोर्टरकी अपेक्षा विशेष संवाददाताके मार्गमें अधिक गहरे हैं और वे अधिक गहरे भी हैं। इच्छुक पैरा कर देनेकी अपनी शक्तिके कारण यह अपनेको आवश्यकतासे अधिक बड़ा समझने लग सकता है और यही उसके अन्तका प्रारम्भ है। फिर, यह भी समझ है कि यह जिन 'महत्त्वपूर्ण सूत्रों' से समाचार प्राप्त करता रहता है, उनकी अपनी इच्छाके अनुसार खोजी गयी बातोंको क्योंकी त्यों स्वीकार करने को भी इस तरह स्वयं निष्पन्न करने या भाषा घटनाओंके सम्बन्धमें पहुँचे हुए कुछ कह सकनेकी शक्ति लो बैठे। केवल ऊँचे जोगोंसे ही सम्पर्क बनाये रखनेपर उसके वृत्तान्त लोखले गने रह सकते हैं। महत्त्वके समाचार तो उनसे प्राप्त होते हैं पर उनका जसकी वत्त उन जोगोंके पास ही मिल सकता है जो उनका ज्योरा पैयार करते हैं। केवल ऊँचे जोगोंसे सम्पर्क स्थापित करनेका एक परिणाम यह भी हो सकता है कि वह एक दृष्टिके जोगोंके ही बीच में रहनेवाला व्यक्ति बन जाय और समुचित रूपसे अपने कृतकृत्यता पाठन करनेमें बीरे धीरे व्यतर्भ्य होता जाय। जब सब बातें आसान सी हो जायें, तब उसके लिए आवश्यक है कि वह अधिक कच्चाईसे काम ले।

भारतीय पत्रकारीमें विशेष संवाददाताका महान् युग अभी आने को है किन्तु भित्तिभर प्रकट होनेवाले नसबोंको देखते हुए तथा पाठकों पर अपने भित्तिभरका प्रभाव जमानेकी समाचारपत्रोंकी बढ़ती हुई प्रवृत्तिका ध्यान रखते हुए हम कह सकते हैं कि वह समय अब अधिक दूर नहीं, निकट ही है।

पिताजीसे पूछा—‘क्या ये भी पत्रकारी सीख रहे हैं ?’ उन्होंने मुसकियाते हुए कहा ‘जी हाँ ।’ भी हार्निमैनका मुनकर आश्चर्य हुआ और उन्होंने अपनी माँहें ऊँची करते हुए कहा “कहो, नटराजन, तुम तो इस पेरोकी सारे स्थिति जानते ही हो न ?”

पिताजीने बड़ी गम्भीरतासे कहा “मैं उस सम्बन्ध किसी कामके लिए तैयार भी तो नहीं कर सकता था, और न मेरी इच्छा ही थी कि वह कोई और पेशा अखिरवार करे ।”

हार्निमैन कुछ देर सोचते रहे, फिर बोले—“आप ठीक कहत हैं किन्तु भारतमें पत्रकारोंका जीवन बहुत ही कठोर है । मुझे यह बात बतानेकी आवश्यकता नहीं ।

अब इतने समय बाद उस घटनाका स्मरण करता हूँ तो जो चीज मुझे अनोखी जान पड़ती है, वह यह है कि मुझे यह देखकर आश्चर्य नहीं हुआ कि ये दोनों महाशय, जिनके विचारोंमें भारी असमानता थी किन्तु जो अपने-पैरेके उच्च विचारपर थे, पत्रकारीकी कठिनाइयोंसे इतने अधिक प्रभावित थे, वरन् मुझे आश्चर्य इसपर हुआ कि पिताजी क्यों इस मामलेमें इतनी दिक्कतस्वी लेते थे कि मैं यह वृत्ति ही ग्रहण करूँ । इस विषयपर मेरी उनकी कमी बातचीत नहीं हुई और यह तो स्पष्ट ही था कि ‘रिफॉर्मर’ के सम्पादनसे जीवन निवाहकी कोई आशा नहीं की जा सकती थी ।

पत्रकारीकी प्रथम शिक्षा मुझे ‘रिफॉर्मर’ से मिली—स्वभावतः छेत्तक तथा प्रूक-सद्योक्तके रूपमें । ‘बीहर’ के सम्पादक भी वी बार्ड पिन्तामजिने एक बार पत्रकारोंकी शिक्षाकी पर्चा करते हुए लिखा था कि उन्हें बहुत अधिक शब्दोंका प्रयोग करना चाहिये । ‘रिफॉर्मर’ ने शुरुआत इसको आखोफना की । माबोकी ठीक ठीक अभिव्यक्ति करनेवाले शब्दोंका प्रयोग करते हुए थोड़ेमें अपनी बात कहना, अनावश्यक विस्तार से बचना—यही इस पत्रकी परम्परा रही है । सन् १९४ में जब ‘स्टेट्समैन’के तत्कालीन सम्पादक भी आर्थर मूरसे मध्य परिचय करमा

इसमें सन्देह नहीं कि मेरे लिए तो उनकी तरफ देखनेकी आवश्यकता ही न थी। यदि मैं उन बाक्सोंको आवश्यक न समझता तो उन्हें दिखाता ही क्यों ? मैंने अपनी भावमंगीसे यह सुनिश्चित कर दिया।

फिर भी ऐसा करके देखा गया। मैंने यह नोट पढ़ा, पहले तो उन पंक्तियोंके साथ, फिर उन्हें निकालकर। मुझे यह जानकर भारी अपमान हुआ कि सचमुच उन बाक्सोंके बिना यह और भी अच्छा लगा, यद्यपि जब मैंने उन्हें दिखाया था तब मैंने उन्हें बहुत ही उपयुक्त समझा था।

एक बातकी परेशानी मुझे और रहा करती थी,—बार बार पूछे जानेवाले इस प्रश्नका उत्तर देना कि 'इसका क्या मतलब हुआ।' नतीजा यह होता था कि सभी अनावश्यक शब्द निकाल देने पड़ते थे और रचनामें अस्पष्टता का संदिग्धता नहीं रह जाती थी। अपनी ही रचनाको फिरसे होइराना मुझे बिल्कुल अच्छा न लगाता था और दूसरेके साथ बैठकर ऐसा करनेमें तो बुगुनी बगजाका अनुभव होता था। फिर भी इससे बड़ा काम पहुँचता था, इसमें कोई सन्देह नहीं। मेरा काम शुभ्यवस्थित नहीं होता और मैं सामूहिक अधिक परिश्रम करता हूँ, यह बात भी नहीं। फिर भी जब मैं पत्रकारी करनेवाले किन्ते ही व्यक्तियोंकी आपत्तें देखता हूँ तो मैं अनुभव करता हूँ कि मैं सचमुच बड़े काममें रहा। एक बात और जो मुझे कह देनी चाहिये वह है अमिनिबेणकी भुन जो मेरे पितापर हमेशा सवार रहती थी। ईश्वरने उन्हें असाधारण स्मरणशक्ति प्रदान की थी, फिर भी सन्देह हानपर व छोटी-छोटी बातके सम्बन्धमें भी फिरसे जाँच कर किया करते थे। मुझे स्मरण है कि एक बार एक बेलके नीचे कुछ जगह खाली रह गयी थी उसे भरनेके लिए मैंने ऐनतपियरका एक अक्षर दे दिया। जसरीमें उसके शब्दक्रममें कुछ भूल रह गयी।

उन दिनों भी बी. एस. मीनिबास शास्त्री 'रिप्लर्मेर' को प्रति दिन बड़े ध्यानसे पढ़ा करते थे। उन्होंने देर नहीं की और अक्षररजका शुद्ध रूप देते हुए पत्र दिखाया। शिवाजीने केवल इतना ही कहा—'पत्र आया—'

है, फिर भी प्रविधियाँ तो सीखी ही जा सकती हैं, उनका सहारा लिया ही जा सकता है। अब तो पहलेसे भी अधिक समाचारपत्र निकलने लगे हैं और सरकारी रिपोर्टों आदिको भी संख्या बढ़ गयी है।

लेखनके दो मौलिक तत्व जो मेरे मस्तिष्कमें अच्छी तरह प्रविष्ट कराय गये थे, वे हैं—कोई बात बड़ा-बड़ाकर कहनेके बजाय कुछ बड़ा कर ही कहना तथा इस तरहकी आधारभूत इमानदारी कि यदि किसी विषयपर उस जिसनेके लिए सामग्री एकत्र करते समय आप जो मत प्रकट करना चाहते हैं, उसके विरुद्ध भी कुछ ठक या तप्प मिला तो उनकी भी चर्चा लेखमें कर देना। मैं यह तो नहीं कहता कि मैंने हमेशा इन सिद्धान्तोंका अनुपादन किया है, फिर भी मैं कहूँगा कि जब भी मैंने उनकी अवहेलना की है, मुझे इसका बराबर प्यान बना रहा है। मुझे स्मरण है कि श्री एस. सदानन्दने, जिनके साथ-चार बपटक 'श्री प्रसन्न' में काम करनेका सुअवसर मुझे मिला चुका है, मेरी इस बातकी आर सकेत कर इसे मेरा दोष बतावा था। आश्चर्य तो यह है कि उन्होंने श्री कामाक्षी नटराजन्को ही अपनी इस रायके लिए प्रमाण माना कि अप्रमेयमें केवल एक ही इन्डिक्शनका प्रतिपादन होना चाहिये और उसमें निहित मत ही प्रकट किया जाना चाहिये (जिससे उनका मतभ्रम यह था कि उसमें विरोधी बातका समावेश न होना चाहिये)। अपनी इच्छाकी पूर्तिमें श्री सदानन्दने यह भी कहा "इस सम्बन्धमें वे मैथिली भाषाकी वे पंक्तियाँ भी बोधायन करते थे जिनमें कहा गया है कि जनता निश्चित और पक्की बात ही सुनना चाहती है।" मैंने आठनिगाकी कविताकी पंक्तियाँ देकर अपने मतका समर्थन करनेका प्रयत्न किया किन्तु श्री सदानन्दकी धारणा नहीं बदली।

'रिफ़र्मर' की एक बार विशेषता यह थी कि जो गतिरियाँ हाँ जाती थीं, पता चलनेपर—मैं ही उनका पता हम लोगाने स्वयं ही लगाया हो—हम उनका संशोधन पत्रमें निरसंकोच भावसे प्रकाशित कर देते थे। यह सिद्धान्त भी मैंने पत्रकारीके क्षेत्रमें बहुत उपयोगी पाया। अब आपने

ही जायगा, उतना अल्प पृष्ठोंके बख्तर नहीं हो सकता। नये, युवक सेलफको यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि जिन विषयोंपर भी टीका टिप्पणी करनी हो, उनमेंसे प्रत्येकके सम्बन्धमें नीतिका प्रश्न नहीं उठ सकता। वास्तवमें यह साम्प्रदायिक है कि नीतिका प्रश्न कम-से-कम मामलोंमें उठाया जाय और ये बिल्कुल साफ, निश्चित विषय ही हों। जो पत्र हर विषयकी टीका टिप्पणीका अपनी नीतिके दायरेमें रखनेका प्रयत्न करता है, वह कुछ ही समय बाद अनावश्यक अटिक्तताओंसे अपने आपको घेरता पा सकता है।

वही 'सम्पादकीय' तथा 'अग्रसेख' में अन्तर करना पड़ता है। स्वभावतः अग्रसेखोंकी संख्या (टिप्पणियोंकी तुल्यतामें) कम होती है। पत्रकारकला सम्बन्धी पुस्तकोंके अनुसार 'अग्रसेख' पत्रके मुख्य सेलफको कहते हैं किन्तु इसकी और भी परिभाषाएँ हैं जिनसे मति-विभ्रमका आभास मिलता है। एक सेलफका कहना है कि प्रथम सम्पादकीय सेलफ ही अग्रसेख कहना चाहिये किन्तु कुछ लोग 'अग्रसेख' (सीडर) का उस सेलफका घाटक मानते हैं जो पाठकोंका ध्यान बताने ('बीड' करने) का उनके नतुत्वका, काम करे। स्थान और सञ्चालनके दृष्टि से किसी सेलफका महत्त्व नहीं बढ़ सकता। सम्पादकीय सेलफके परम्परागत स्वरूपकी—उसके तीन हिस्सोंमें विभक्त होनेकी विषयप्रवेश, विकास, उत्तराधार—भी अब अक्सर रखा नहीं की जाती, फिर भी अनेक बार ऐसा होता है कि प्रथम द्वितीय उठका यह रूप आ ही जाता है।

विषयव्याप्तक या व्यापकभारमक अग्रसेखोंमें—और प्रायः इन्हींकी संख्या अधिक होती है—सामान्यतया यह डॉक्टरा कायम रखना ही पड़ता है। हाँ, किसी नीति या सार्वजन्य आर्थिक समर्पनमें अथवा उठकी आलोचना करनेकी दृष्टिसे लिखे गये सेलफमें इस शैली या ढंगके बहुर विज्ञान आनेकी अधिक संभावना रहती है। जिस अग्रसेखमें मानव-वृद्धिप्रश्नोत्तर करने वाली, मनुष्यकी अभिरुचि बढ़ानेवाली, बातोंका समावेश हो, वह अपने दृग्गन्ध निरुद्ध ही होता है। भारतीय पत्रोंमें ऐसा अग्रसेख कदाचित् ही

गम्भीरता नहीं होती, इसमें तो सन्देह ही नहीं—यही प्रेस जर्नलिस्टों की अनौपचारिक शैली, मासिकीयों के लेखकों तथा स्तम्भकारों के रूप तथा दैनिकों के तीसरे सम्पादकीयों के विनोदात्मक ढंग ऐसी चीज हैं जिनका अनुकरण अन्यत्र नहीं किया गया। बंगाल के पत्रों के लेख वृत्त से सरह के होते हैं—उनकी शैली कुछ गम्भीर-सी होती है जो पूर्ववर्ती युग का स्मरण दिखाती है। इन केन्द्रों के प्रमुख पत्रों के अग्रलेखों तथा मासिकीय राजधानी से निकलने वाले पत्रों के लेखों का अध्ययन करने से पत्रकारी की शिक्षा प्राप्त करने वाले व्यक्ति को यथेष्ट लाभ हो सकता है।

इसके सिवा विभिन्न सम्पादकों की अपनी अपनी सनक व्यक्त होती है जिसकी जानकारी किसी के व्यक्तिगत अनुभव से प्राप्त करने की आवश्यकता शायद नहीं है। जब मैंने 'पायोनिअर' में पंद्रह बार काम करना शुरू किया, तब मैं उप-सम्पादक था और उस समय जब भी मैंने कोई सम्पादकीय लेख लिखने की प्रेरणा की तबसे सहायक सम्पादकों की बहुत दिनों तक जाती थी—वे समझते थे कि मैं उनके लिए सुरक्षित भूमि में प्रवेश करने की अनधिकार चेष्टा कर रहा था। समाचार-सम्पादकों को भी यह बात बुरी लगाती थी, क्योंकि उनका स्वभाव था कि सम्पादकीय लिखनेवालों के पास यथेष्ट काम नहीं है, अतः किसी अन्य व्यक्ति के लेख लिख देने से उनका भार हल्का होने की, उन्हें राहत मिलने की, कोई बात नहीं।

किन्तु जब चार वर्ष बाद मैंने फिर उस पत्र में काम करना शुरू किया, इस बार सहायक सम्पादक के रूप में तब मेरा पाछा डेसमंड बंग जैसे पिछड़ आसामी के साथ पड़ा जो बहुत ही अन्याय्य बातों की मॉरा हम लोगों से किता करते थे। एक दिन तीसरे पहर मैं भारतीय इत्यादि सम्बन्धों में बहुत-सी बातों का पता लगाने की चेष्टा कर रहा था, इस बात से लेकर कि विज्ञापन-विभाग को सारा कम्पनी की सजाबना कन्वये रखने में अधिक दिक्कतसी तो नहीं है, इस बावत कि टैरिफ बोर्ड की रिपोर्ट में इत्यादि के उद्योगों के सम्बन्ध में क्या-क्या कहा गया है।

जाने स्मृति कि मैं किसी तरह भी प्रेस जर्नल के दफ्तर में जा पहुँचूँ। जब मुझसे बातचीत हुई तो पता चला कि अगले भूतल के लिए मुझे एक अप्र-
कृत स्थल देना है। यह भी स्पष्ट हुआ कि भी भूमिगत स्थल कह-
यते हैं कि मैं उनके लिए वह काम कर दूँगा। बस, इस व्यवस्था के
सम्बन्ध में मुझे पहले-पहल इतना ही विदित हुआ। मैंने इस निम्नेशरी से
कनेका प्रस्ताव किया किन्तु बाहर निकलने का कोई मार्ग सूत्र न पड़ा।

इस समय सम्पत्ति के ७॥ बज चुके थे और मुझे पूरा निश्चय के अनु-
सार ९ बजे रात में एक जगह मोड़न करने का जाना था। मैंने दफ्तर
वालों से कहा कि पत्रकी सभ्यता की फाइल एक दाहस्पृह और
दाह करने का कागज सम्पादकीय मेज पर रखवा दिये जायें। जब मैं
वहाँ पहुँचा, तब दफ्तर के उस छद्म के सिवाय जिसने मेरा स्वागत किया
थे कुछ तीन चोरे ही मुझे वहाँ देख पड़ी। दफ्तर में उस समय कोई नहीं
था, विला कि दो पाकिस्तानी बीच में प्रत्येक समाचारपत्र के कागजों में
सामान्यतया होता ही है। उस कमरे के एक कोने में टेब्लिप्रिन्टर
मशीन लटका कर रखी थी। मैं कुर्सी पर बैठ गया और फाइल उकट
कर पुराने भूत देखने लगा।

मुझे कोई भीत भिन्न नहीं। मैंने देख लिया कि इधर कुछ
दिनों के भीतर पाकिस्तानी सम्बन्ध में पत्र में कोई डीका-दिप्पनो नहीं की गयी
थी और जब मैं इसकी जाँच कर रहा था, तब मुझे 'दी प्रेस' की शेडीका
मी चौका सा आभास हो गया। आगे का काम सरल तो नहीं पर बहुत
कुछ धीमासा और सामान्य-सा रह गया।

अचानक ही मैंने यह नहीं सोचा कि मैंने कोई बड़ा काम कर दिया
किन्तु अचानक मैंने झिझक कर वहाँ रस ही दिया और साथ ही एक
पुरजेपर यह भी शिवाय कि यदि बाद में कुछ और रात बीतने
पर भी भूमिगत स्थल के देख प्राप्त हो जाय तो अचानक रोक दिया जाय।
निदान निर्धारित समय पर पहुँचकर मैं मॉन्टन में भी सम्मिलित हो सका।
मैंने इस कृतक भी सदान्तर के मन पर अन्धा अन्ध पड़ा और जब मुझे

कोई आदमी यदि इच्छापूर्वक चाहता एक काम ठठा डेठा है और उसपर डेंटा रहता है तो ओगोंको उसकी बात मुन्नी ही पड़ती है। फिर भी ऐसे पत्र यदि किसी संस्था या समूहसे सम्बन्ध नहीं हो जाते तो आधुनिक पत्रकारकक्षाके लिए जिन साधनोंकी आवश्यकता है, उनका हटाना उनके लिए सम्भव नहीं हो पाता। सचमुच इस पेटेमें कुछ ओगोंको मित्र-बुझकर काम करनेकी आवश्यकता होती है, मझे ही अत्यन्त कमसे ऐसा किया जाय, तभी मुख्य सेलकोंका एक अच्छा, मजबूत दल उनकी ओर आकर्षित हो सकता है।

आजके राजनयिक जीवनमें आहितीय क्षमतावाली कोई बड़ी हस्ती नहीं है, इसलिए गांधीजीके 'बंग इण्डिया' तथा 'हरिकन', भीमती एनी बेसन्तके 'न्यू इण्डिया' तथा श्री मुहम्मदअजमेके साप्ताहिक पत्रों जैसे अखबार निकलनेकी आशा हम नहीं कर सकते। अब किसी विचार वा सिद्धान्तके बजाय ज्ञानकारीपर अधिक जोर दिया जाने लगा है और कुछ मित्रकर यह झुमावह परिवर्तन है। हाँ, इस बातकी तावधानी हमें अचूक रखनी है कि विचारों और विधायकोंका ज्ञान व्यक्तिगत स्वाध्यायोंको न भिन्न जगह। १९३०-३१ के बादसे समाचारपत्रोंका स्वामित्व उस मध्य-वर्गके हाथसे निकलकर, जिसमेंसे राष्ट्रके भिन्नक तथा विविध नेता उत्पन्न होते थे, व्यवसायिकोंके हाथमें आ रहा है। उत्पादनका ध्येय बहुत अधिक बढ़ जानेके कारण यह काम सामान्य आदमीके बूतेके बाहरकी चीज बन गया है। ऊँचा स्तर बनाये रखना अब पत्र-काराज्यमें काम करनेवाले जेलकोंकी ईमानदारी एवं उच्च नैतिकतापर ही बहुत कुछ अवलम्बित है और अक्सर इस कामका बोझ इतना अधिक होता है कि यह उसे बरबाद नहीं कर सकता।

खिलनेकी कला

यह एक तरहसे शैलीका प्रश्न है। जैसे जैसे अंग्रेजी भाषाका विविध ज्ञान कम होता आ रहा है, वैसे वैसे आलेखनिक पत्रावलिमें तथा अस्पष्ट अर्थोंवाले पत्रोंका प्रचलन बढ़ता आ रहा है। कुछ जेलक एक ही

अच्छे ढंगसे उसे किया है अथवा आनेको कितना बड़ा विघ्न और जानकार दिखानेका प्रयत्न आपने किया है। सबसे पहले आपका धर्म उसकी समझमें आना चाहिये और यह जान लेनेमें उसे कठिनाई न होनी चाहिये कि आखिर आप कहना क्या चाहते हैं, आपका इतिशेष क्या है। सबसे अच्छे खेलके सम्बन्धमें यह धारणा या यह प्रतीति बादम ही होती है कि उसमें अपने विचार बहुत अच्छे ढंगसे प्रकट किये गये हैं। खेलककी प्रशंसाका भाव बादमें ही उत्पन्न होना चाहिये।

फिर भी मैं प्रत्येक भारतीय खेलकको उस कतरेकी खेलाकनी दे देना चाहता हूँ जो भारतीय पत्रकारोंमें उत्पन्न हो सकता है—यह है सीधी और सरल भाषाके नामपर प्राम्य या विपुल प्रान्तीय स्मृतियोंका प्रयोग करना। हमें अंग्रेजी ढंगकी इजिप्त भाषा या अनुपसुक्त मुहावरोंका भी प्रयोग न करना चाहिये। उदाहरणके लिए 'मेरे कन्बोंपर इसकी जिम्मेदारी है' के बजाय 'मेरे सिरपर, या मेरे ऊपर इसकी जिम्मेदारी है' बेहतर होगा। शुद्ध, सरल और मुहावरेदार भाषामें लिखना सीखनेमें आपको कुछ देर लग सकती है, किन्तु इसके पाठकोंके लिए बड़ी आसानी हो जाती है।

समाचारपत्रोंके प्रसारके कारण भारतीय भाषाओंकी ऐसी भव्य अधिक सरल और समझने योग्य हो गयी है या होती जा रही है। साहित्यकी भाषा या साहित्यकी ऐसी और सामान्य व्यवहारकी भाषामें भव्य अधिक अन्तर नहीं रह गया है। अंग्रेजीके खेलोंमें भी मैं अब ओरोंकी प्रशंसा अथवा स्थितिकी ओर धकनेकी बेल खा हूँ किन्तु मोड़ी-सो अपरवाहीके कारण इसमें कुछ बाधा पड़ रही है। यह सत्य है कि आज पहलेसे अधिक अंग्रेजीका यह विश्वास है कि हम कोई लेखादि लिख सकते हैं। यह बहुत अच्छी बात है बशर्त कि वे यह भी मस्तीमौलि समझ लें कि जो कुछ लिखा जाय, स्वाभाविक ढंगसे तमाम निम्न किन्ती आदम्बरके बिना जाय।

कि मैंने खुद ही अपनी यह गलती समझ ली जिससे अब दूसरोंको मो
इसकी हानि या अनौचित्य समझानेमें समर्थ हो सका ।

यह एक शुर्माग्यकी बात है कि आज यदि आप उस व्यक्ति को जो
रिपोटर बनना चाहता है यह बात समझा देनेकी चेष्टा करें कि उसके
लिए शीमकिपिका जानना आवश्यक है, तो बड़ी मुश्किलसे ही आप
इसमें सफल हो सकेंगे । लोगोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भारतीय
पत्रोंके ९० प्रतिशत रिपोटर ऐसे हैं जो शीमकिपि नहीं जानते । इसी
तरह पत्रकार बननेकी आकांक्षासे प्रेरित ऐसा व्यक्ति मिलना मुश्किल है
जो यह बताये जानेपर अपना मुँह न डटका कि उपसम्पादक बननेके
लिए प्रूफ-संशोधनका काम जानना, कापीमें कर्त्ता क्रियाका सम्बन्ध ठीक
करना, छिपा-सम्बन्धी गलतियों सुधारना तथा दूसरोंकी रचनाओंको
अच्छी भाषामें पुनः इस तरह लिख देना कि अर्थका अनर्थ न होने पाये
और अपनी श्लेष्कशक्तिका प्रयोग करते हुए भी किसीके ऊपर अपनी
राय न बोलनेका प्रयत्न करना परम आवश्यक है ।

इस छारी स्थितिका मुख्य कारण यह है कि शुर्माग्यवश भारतीय
समाचारपत्रोंका प्रारम्भ बहुत दंगले हुआ । शायद तत्कालीन परिस्थि-
तिबोधमें ऐसा होना अनिवार्य था । प्रारम्भमें समाचारपत्र ही वह जरिया
था जिससे सरकारकी नीतिके विरुद्ध माधन प्रकट की जा सकती थी ।
प्रामाणिक, पुरु मत् प्रकट करनेका साधन वह बादमें बना । फिर अन्ध
अन्ध मत् प्रकट करनेके मित्र-मित्र साधनके रूपमें उसका विभाजन हो
गया । सार्वजनिक मत्का संजीव साधन बनना थमी उसके लिए बाकी
ही है । इसकी संशुद्धिमें जो रुकावट पड़ रही है, उसका एक निष्क्रिय
कारण तो निम्नम्है यही है कि देशमें शिक्षित व्यक्तियोंकी धारा बड़ी
ही है । दूसरा कारण जो सक्रिय रूपमें इसके लिए जिम्मेदार है, भारतीय
पत्रकारीका प्रारम्भ करनेवाले पुराने महानुभावोंका इस बातपर जोर देना
है कि पत्रकारी कोई ऐसा न होकर जीवनका एक पवित्र स्वयं वा
—— है ।

हरेके कामसे भी छकाता है जो समाचारपत्रोंमें अभिकांक्ष रूपमें करना पड़ता है। इसके सिवा प्रायः यह भी होता है कि काम सीखनेके लिए भावे हुए व्यक्ति का ध्यान 'किसी अच्छे कामके लिए कुछ कर डालने' की हप्का तथा 'कुछ हथर-उथरकी' वाले साम्प्रदायिक व्याकरणके धीन में रखा जाता है।

अन्व किसी भी पेशेमें इतने अधिक परिश्रम और कठिन अध्ययनकी आवश्यकता नहीं पड़ती अन्व किसी भी पेशेमें इतने अधिक विषयोंकी तरफ ध्यान नहीं देना पड़ता और न असाधारण काम करनेके ऐसे अवसर ही आते; साथ ही स्पष्ट है कि घोर परिश्रम और गम्भीर अध्ययनके लिए इतना कम पुरस्कार भी सम्भव कहीं नहीं मिलता। मैं यह भी सोचता हूँ कि हम लोग जो समाचारपत्रोंमें लिखते रहते हैं, अन्तर यह भूख खाते हैं कि हमारे लिखनेका उद्देश्य यही है कि लोग उसे पढ़ें। भाषाके अंग्रेजी पत्रोंके बहुतसे लेखकोंका उस मापका ज्ञान औसत इन्हीं पाठकोंसे बहुत बड़ा हुआ है। 'संयुक्त कर्नाटक' के श्री एच बी मोहरे मुझे यह कहते कभी नहीं सकते कि इस देशमें अंग्रेजी पत्रोंका समाप्त होना निश्चित है, क्योंकि अंग्रेजीके लेखक यह सीधी सी बात समझ नहीं पा रहे हैं कि लेखकोंमें ऐसे कठिन कर्मोंका प्रयोग करना व्यर्थ है जिन्हें समझना पाठकोंके बूतेके बाहर हो।

देखी भाषाओंके पत्र इस दृष्टिसे विशेष सम्मन्वय स्थितिमें हैं क्योंकि वे ऐसी भाषाका प्रचलन कर रहे हैं जो बोझालकी भाषासे बहुत कुछ भेद लाती है। प्राचीन कालकी तुलनामें यह एक नया परिवर्तन हम देख रहे हैं। फिर भी मैं नहीं समझता कि समस्या इतनी सरल है जितनी ऊपरसे देखनेपर जान पड़ती है। दोष वस्तुतः ऐसे लेखकोंका है जिनके पास विचारों और तथ्योंकी कमी है, इसीसे वे ऐसी भाषा लिखनेको विवश हो जाते हैं जिसे समझनेमें लोगोंको कठिनाई हो। देखी भाषाके पत्रोंको यदि ऐसी क्षणिका सामना अभी नहीं करना पड़ रहा है तो दर, सबेर उन्हें भी यही दिक्कत उठानी पड़ेगी। सम्पादकीय लेखोंमें

समर्थ होता है। यह बड़े उत्तरदायित्वका काम है। विशेषज्ञ न होनेके कारण हम सभी लोग उन कठिनाइयोंको समझ सकते हैं जो इन विशेषज्ञों द्वारा किये जानेवाले कार्योंके कारण तथा उनके इस मासहके कारण उत्पन्न होती हैं कि हमारी और केवल हमारी ही बात सुनी जानी चाहिये। किन्तु इसका एक दूसरा पहलू भी है।

ओरडेगा इ गैसेट्टेने कहा है—“आजकल केवलक जब किसी ऐसे विषयपर लिखनेके लिए लेखनी उद्यत है जिसका उसने सम्पूर्ण अध्ययन किया है, तब उसे यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि औसत दर्जेका पाठक, जिसने कभी इस विषयका ज्ञान प्राप्त करनेकी चेष्टा नहीं की, यदि इस तरहका लेख पढ़ता है तो इस गरजसे नहीं पढ़ता कि लेखकसे वह कोई बात सीख सकेगा बल्कि उसका इरादा यही रहता है कि मामूली रोचकताकी बातोंमें जहाँ केवलक उसकी शरणाओंके विपरीत बात कहता नजर आवे, वहाँ उसे आगे हार्वा किया जाय।”

भविष्यका और अनभिज्ञता, विशिष्ट ज्ञान और अज्ञानके इन दो छोरोंके बीच भेद करनेके लिए ही समाचारपत्रको प्रयत्नशील होना चाहिये। वर्यपि समाचारपत्रमें काम करनेवाले प्रत्येक व्यक्ति का सहयोग इस कार्यमें अवस्थित है, फिर भी विशेष दायित्व उनपर है जो उसमें लेख लिखते हैं। और इस कामके लिए कोई भी व्यक्ति अपनी सामान्य शिक्षा तथा बराबर अभ्ययन करते रहनेकी प्रवृत्तिसे बढ़कर और किसी साधन या उपकरणकी आशा नहीं कर सकता।

इस तरहके मासिक पत्रको तो, उपयोगी एवं शिक्षात्मक होनेके लिए, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि उसमें **॥** तरहके विचार दिना किन्ती वक्रावर्तके प्रकाशित किये जा सकें और बड़ी सावधानीसे उन सबका संतुलन किया जाय। आजकलकी दुनियामें अक्सर यह होता है कि राज-विरोधकी ही सब सवसाधारणकी सब कहकर प्रचारित की जाती है, बिचनकर वहाँ वहाँ राजनीतिक सत्ताका प्रश्न उपस्थित रहता है।

वृत्तसे प्राप्त खेतीके सम्बन्धमें भी इसी तरह सावधानीसे विचार किया जाना चाहिये, जिससे विरोधकी दृष्टिकोसे प्रकट की गयी सब बिबुध एकतरफा या वस्तुस्थितिसे बहुत दूर न हो। हा०१८०के एक अमेरिकन खेतीके विरोधकी परिमाण्य दते हुए कहा है कि वह ऐसा व्यक्ति है जो 'कमसे कम वस्तुके सम्बन्धमें कमसे अधिकसे अधिक ज्ञान प्राप्त करता रहता है।' इसे हम अविरचित कह सकते हैं, फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि विरोधकी दृष्टि, बँधे हुए सेतक छोटेसे छोटे स्तरपर ध्यान संकेतित करनेके कारण, कमसे संकुचित-ही होती जाती है। इसी तरह उन विद्वान् खेतीकोंकी बात भीजिये जिनकी विद्वत्तामें अनुमान भी सन्देह नहीं, किन्तु जिनकी सब पक्षसे विद्यमान विरोधी भावना या पक्षपातमुक्त भावस रेंगी हुई रहती है। इन बातोंपर तथा ऐसी ही अन्य कतिपय बातोंपर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिये, तभी कोई खेती सम्बन्ध विषयपर सामाजिक रचनाके रूपमें प्रस्तुत किया जा सकता है।

निर्णयका मुख्य आधार

इसलिए वह बात स्पष्ट है कि मासिकपत्रके सम्पादकको मुख्यरूपसे यह देखना पड़ता है कि जो सामग्री प्रकाशित की जा रही है वह सम्मीर तथा उष्ण काटिकी हो, मझे ही उसमें विषयका विस्तार अधिक न हो। दैनिक पत्रका प्रधान उद्देश्य प्रायः सभी राज्यासे राजा समाचार और मठा मठ धौधौ किन्तु कोई भी महत्त्वपूर्ण तथ्य छोड़े बिना प्रकाशित करना है। उसके सम्पादकीय खेतीसे यह प्रकट होता है कि उक्त समाचारों का

यह है और इसकी एक बड़ी वजह यह है कि दैनिक पत्रोंके सम्पदककी गुञ्जनामें उसकी जिम्मेदारी या कामका विभाजन बहुत चौड़ा ही होता है। उसके पत्रके लिए उसकी निष्पादक बुद्धि, आत्मिकनात्मक समता तथा विषयोंकी जानकारीका बहुत अधिक महत्त्व है।

मासिकपत्रपर उसके सम्पदकके व्यक्तित्वकी छाप, अनेक दैनिक पत्रोंकी गुञ्जनामें काफी अधिक परिमाणमें दिखाई देती है। और इसमें वे सभी तत्त्व मौजूद रहते हैं जो सम्पादककी आत्माके सन्तोष या असन्तोषके कारण बनते हैं। मासिक पत्रमें छेत्नोंका प्रयोग अधिक संयत होता है, अर्थात् उत्तेजना या उत्साह उस तरह परम विभुपर नहीं पहुँच पाता जैसा कि दैनिकपत्रके स्वातन्त्र्यसे होता है। किन्तु साबरजनिक महत्त्वके सब मामलोंमें कारणमूलक तत्त्वोंका निष्पन्न करनेमें, रागीका निश्चय करनेवाले व्यक्तित्वकी तरह, धिन्ता होती है और साथ ही गहरा सन्तोष भी होता है अब यह पता चल जाता है कि जो निष्पत्ति निकाली गयी थी वह सही निकली तथा जो मत प्रकाशित किया गया था वह उचित एवं महत्त्वपूर्ण साबित हुआ।

पाठकवर्गके अधिक विचारणीय अंगको प्रभावित कर वा उसकी जानकारी बढ़ाकर ही मासिक पत्र जनताका समर्पण प्राप्त करता है। इसलिये खटोर बीमोंके लिए चटपटी चीजें मुहैया करानेका—छेत्नोंमें सनसनीखेज बात दिखानेका—सपास ही नहीं उठता। अर्थात् उत्तेजनाके उत्पन्न-फलनके लिये उन्हें धिस्तर या गहरी नाधियों इतमें धामर ही कमी देख पड़ती है जैसी दैनिक पत्रमें दिखाई देती हैं। मासिक पत्रके सम्पादकके हृदयमें जो तरंगें उठती हैं, उनकी गति अधिक मन्द होती है किन्तु मोटाह-चौड़ाईमें वे बड़ी दूर होती हैं।

इसके सिवा मासिकके सम्पादकको नये छेत्नकका ईर्ष्य निकालनेकी भी बड़ी खुशी होती है। मासिक पत्रमें जगहकी तथा सम्पादकीय आलोचनाकी काफी गुञ्जाइश रहती है जिससे प्रारम्भिक लेखकका बड़ी मदद मिलती है। सभी प्रसिद्ध लेखकोंके लिए साहित्यिक छेत्नों तथा कथ

इसलिए कहानी-पत्रिका के सम्पादक को अपने पाठकों के मनोभाव का महीमोति पकड़ लेना चाहिये। यदि उसका अनुमान ठीक निकलता है तो पत्रिका को विश्वी बद जाती है और उसकी अधिक प्रसिद्धि होने लगती है। सम्पादक का अधिक पाठक भी मिल जाते हैं और अधिक अच्छे तथा विश्वास के साथ भी अपनी रचनाएँ उसे भेजने लगते हैं। और यह सब केवल इसी बात पर निर्भर है कि वह कौन से कहानियों का चुनाव करता है और लेखकों को कसे सुझाव देता है।

महत्त्वपूर्ण विषयों पर लिखे जानवाले लेखों के सम्बन्ध में अच्छे अनुमानी लेखकों को छोड़कर अन्य सब लोगों का पत्रप्रकाशन करना सम्पादक के लिए आवश्यक है। लेखकों को चर्कें दिये गये हों तथा परिणाम निश्चित गये हों, उनमें कोई झूठ, असंगति या झुठिला नहीं है, यह देखने की योग्यता, कुछ लक्ष्य-विशेष की तरह, सम्पादक में होनी चाहिये। दैनिक पत्र की तरह जल्दबाजी तो उसे रहती नहीं, अतः इन सब दोषों या कमियों को दूर करने में उसे अपनी परिष्कृत बुद्धि का प्रयोग करना चाहिये। यदि लेखक बुद्धि और चर्क-संगत बातों का कायम हो तो महीमोति उसकी रचना का परिष्कार किया जा सकता है और वह पूर्ण बनायी जा सकती है। इसी तरह सम्पादक को यदि किसी विषय पर लेख तैयार करने के लिए उपयुक्त सामग्री नहीं देख पड़े तो उसे काटकर वा एकत्र कर किसी अच्छे लेखक के पास भेज देना चाहिये जिसका अभ्यस्त कर वह अपने परिष्कृत विचार लेखक कर उसके पास भेज दे।

अनुमानी सम्पादक इस तरीके से प्रायः सभी विषयों के अच्छे लेखकों का जमाव कर सकता है। निस्सन्देह इससे भी सरल उपाय सुप्रसिद्ध लेखकों के साथ एक तरह का ठेका कर देना है। किन्तु इसमें ज्यादा पैसा खर्च करने की आवश्यकता हो सकती है और मासिक पत्र के सम्पादक का प्रायः अधिक धन व्यय करने का अधिकार नहीं रहता।

इसलिए मासिक पत्र के सम्पादक को हमेशा नये लेखकों तथा नये आलोचकों को ठहाराते रहना पड़ता है और इसी प्रणाली से बिना मौजे

पढ़ जाने कायक सेज होने चाहिये जिससे उस दंगके पाठक आकर्षित हो सकें किन्तु किये उक्त पत्र निकाला गया है।

स्थानका प्रसन्न होनेकी अपेक्षा साप्ताहिकमें कम उठता है और उससे भी कम मासिकमें। किन्तु पाठक ऊपर न उठे इस दृष्टिसे केस यथासमय छोटा ही होना चाहिये, फिर भी उसमें सभी आवश्यक बातों की बचाई आ जानी चाहिये जिससे उसे पढ़ चुकनेके बाद पाठकको संतोष हो सके। पाठकका जो भी न ऊपर पाये और न उसको इस बातकी ही प्रतीति होने पावे कि केसका पढ़ना बेकार हुआ।

यहाँ यह बात समझ लेनी चाहिये कि बहुतसे केसक इन सब दृष्टियोंसे अपनी रचनाओंका मूल्यांकन करनेमें असमर्थ होते हैं और यही सम्पादकका सबसे आवश्यक कर्तव्य होता है। सम्पादक केसको द्वारा लिखे गये लेखोंको पढ़कर, उनके आधारपर, लेखोंकी सम्पूर्ण, दुर्गहके सम्बन्धमें निर्णय कर सकनेकी आवश्यकता उसे जाननी चाहिये। छोटे किन्तु अपनेमें पूरा लेखोंकी इन विशेषताओंकी ओर उसे पूरा पूरा ध्यान देना चाहिये और जिस किसी भी केसको वह प्रकाशित करना चाहता हो, उसे प्रेसमें देनेके पहले इसी कसौटीपर कसकर देख लेना चाहिये।

सभी केसोंमें जाहे वे विज्ञानपर ही या राजनीतिपर, यहाँ तक कि कहानियों आदिमें भी, सबसे अधिक वाञ्छनीय गुण जो देखा जाना चाहिये वह है कि प्रमुख चरित्रावलीसे ठीक ठीक और सही अर्थ निकल आता है या नहीं। यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि सम्पादकका मुख्य कर्तव्य पाठकके प्रति होता है, इसलिये उसे अपना पत्र सुपाठ्य एवं मनोरंजक ही नहीं बल्कि उपयोगी भी बनाना चाहिये। कोई भी पाठक एक छोटी-सी बात कहनेके लिए प्रमुख चरित्रावली और निरर्थक वाक्य पढ़नेमें अपना समय बरबाद नहीं करना चाहता और न उसे यही पसन्द आ सकता कि हमारे-हमारे तीन पैराग्राफ पढ़ देनेके बाद यही आकर मरहमकी बात समाप्तमें आये। एक जमाना था जब आदमी

पृष्ठोंके सिवा छेप भागमें विभिन्न विषयोंके दो-तीन या अधिक मुख्य लेख अथवा कहानियाँ होनी ही चाहिये। प्रबन्ध-विभागके लोग कभी-कभी ऐसे लेख प्रकाशित करनेपर भी जोर देने लगते हैं जिन्हें या तो पत्रकी किन्हीं बड़े या विकास प्राप्त हो। इसी तरह पाठक नयी जानकारी (नयी बातोंका ज्ञान) भी प्राप्त करना चाहता है या नयी प्रेरणा चाहता है अथवा केवल मन-बहलाव, जैसा उलझा भी पावे। इसीलिए संपादकों विभिन्न रुचियोंकी परिपूर्तिका ही उपाय नहीं करना पड़ता वरन् उन बातोंकी ओर भी ध्यान देना पड़ता है जिन्हें व्यवस्था विभाग आवश्यक समझता हो।

इन सब बातोंका मतलब यह हुआ कि पत्र या पत्रिकाकी एक-एक इंच जगहका भरपूर उपयोग होना चाहिये और इसीलिए संस्कोंकी व्यवस्थाका प्रश्न सामने आता है।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि संपादकोंकी बड़ी बहुतायतसे काम लेना पड़ता है, क्योंकि ऐसे बहुतसे लेखक तथा सम्पादक हैं—इनमें कई बड़े प्रसिद्ध होते हैं—जो अपनी संस्तनीसे निकले प्रत्येक शब्दको बहुमूल्य समझते हैं और जिन्हें अपनी रचनामेंसे एक वाक्यका भी हथ दिया जाना बहुत बुरा जान पड़ता है। संपादकोंको अनुभवसे यह बात सीखनी पड़ती है कि ऐसे लेखकोंको किस तरह मनाया जाय या ऐसे उन्हें बचा जाय।

पाठकोंको आकर्षित करना

पुसरी चीज जिस पर संपादकोंको विचार करना पड़ता है, पाठकोंका ध्यान अपने पत्रकी ओर खींचनेका प्रश्न है। इसका मतलब यह हुआ कि किसी एक ब्रँडके छिपे पुने गये लेखों या कहानियोंमें जो एकसे अधिक मनोरंजन या दिलचस्पीसे पढ़े जाने योग्य हो, उसे ही प्रमुख स्थान मिलाना चाहिये और यदि आवश्यकता हो तो उसके छिपे अधिक जगहकी भी गुंजाइश को जा सकती है। 'अधिक जगहकी गुंजाइश' से मरना नहीं प्रत्येक पत्रकी अपनी परम्परा या चरित्र पड़ी हुई प्रथाकी

पास बयेष्ट समय रहता है। बहुतसे लेखकोंकी प्रवृत्ति विषय तथा आद-
म्बरपूर्ण भाषा लिखनेकी होती है। इससे लेखका मूल्य पड़ जाता है
क्योंकि बहुधा ऐसा होता है कि सामान्य पाठक उसे आसानीसे समझ
ही नहीं पाता। इसलिये सम्पादकको लेखका अथवा अभिप्राय बढ़के
बिना बर्होतक सम्मिश्र हो बर्होतक उसकी भाषा सरल बना देना चाहिये।
फिर बहुतसे लेखकोंकी यह भी आवस्य होती है कि वे अपने लेखमें एक
ही दृष्टिकोण बार-बार दोहराते रहते हैं। इन पुनरुक्तिमोले पाठकको
भ्रम हो जा सकता है, इसलिये इन्हें दूर कर देना चाहिये। चौकमें
सम्पादकको देखना चाहिये कि कहानीका कथानक प्रस्तुत करनेका ढंग
सुन्दर ही न हो सरल भी हो। अक्सर ही यह बात मान ली गयी है
कि यदि कोई कथा परिवर्तन करना हो या अधिक मस निकाल देना ॥
तो लेखककी स्वीकृति पहलेसे लेनी चाहिये। सेखकसे पूछे बिना उसके
सेखमें नवी बात जोड़ देना या उसका कोई बड़ा हिस्सा निकाल देना
सम्पादकके लिये न्याय्य न होगा।

लेखों, कहानियों तथा यात्रा-वृत्तान्तोंका अब उपर्युक्त ढंगसे सम्पा-
दन हो जाय, एवं प्रश्न यह उठता है कि अक-विशेषमें कितनी सामग्री
ही जा रही है उसमें कौन सेख किछ असाह। किछ ठगरीबसे रसा जायगा।
कहनेकी आवश्यकता नहीं कि सबसे महत्वपूर्ण या उत्कृष्ट रचनाका
प्रथम स्थान मिहना चाहिये। उसके बादका लेख—द्वय, विषय या
कल्पकी दृष्टिसे—पहलेसे मिह होना चाहिये। कारण यह है कि पाठक
अब समस्त लेखोंपर सरसरी नजर डाले तो उसे एकतान्त्रिका अनुभव
न होने पावे—यह न प्रतीत हो कि इसमें एक सेख एक ही तरहके हैं।

ओगोमे वह धारणा प्रयक्ति है कि मासिक पत्रके सम्पादकका
धौकन और काम शान्त, स्थिर और नीरस-सा है। यह धार है कि
रेनिकों, साप्ताहिकों आदिकी अपेक्षा मासिक पत्रके कावाक्यमें आरम्भके
शाय काम करनेकी अधिक गुंजाहूत है। किन्तु इसका यह आशय नहीं
कि वह हमेशा या अक्सर हाफपर हाफ बरे बैठा रह सकता है। कितने ही

भाग तीन

सम्बन्धित क्षेत्र

१० जन-सम्पर्क तथा जन-संवेदन

भारतमें अभी जन-सम्पर्क तथा प्रचार सम्बन्धी कार्योंकी प्रारम्भिक अवस्था ही है। अमेरिकन संयुक्त राष्ट्रों ने दोनों विस्फुल्ल स्वतंत्र काम बन गये हैं। ब्रिटिश संयुक्त राज्यमें, यूरोपके अनेक देशोंमें तथा दक्षिण अमेरिकामें ये दोनों विज्ञापन प्रसारित करनेवाली दुनियाके महत्वपूर्ण अंग हैं। किन्तु भारतमें उनकी संभावनाओंकी कल्पना भी अभी मुश्किलसे की जा सकी है।

इसीसे ये क्या है, प्रवर्तन, विज्ञापन और प्रचारसे उनका सम्बन्ध क्या है, इस सम्बन्धमें बड़ी गड़बड़ी चल रही है। इसलिए यहाँ इन दोनों क्रिया-कलापोंमें, जो परस्पर बहुत मिल्ते-जुलते हैं, तथा जो अपनी अमूर्त-सिद्धिसे किए जायें ही समाचारपत्रोंका सहारा लिया करते हैं, अन्तर दिखानेकी चेष्टा की जा रही है।

प्रवर्तन (प्रोमोशन) वह क्रिया-कलाप है जिसका अभिप्राय जनताको भाग्यित करना है तथा जिसका परिणाम कोई व्यापारिक डेन देन—विप्री आदि—हो।

प्रचार कार्य, (प्रोपेगण्डा) हरिस्ट्यूट फॉर प्रोपेगण्डा एनालिसिस” द्वारा दी गयी परिभाषाके अनुसार, पूरा निश्चित व्यक्तियोंके सम्बन्धमें पृथक् पृथक् व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों द्वारा प्रकट की गयी वह राय या वह कार्य है जिसका उद्देश्य स्पष्टतः दूसरोंकी राय या कार्योंकी प्रभावित करना हो।

उद्देश्योंका अनुरोध ठीक तरहसे न समझ सकनेके कारण असन्तुष्टि और भी अधिक बढ़ि हो जा सकती है। सरकार भी, किसी व्यापारीकी तरह, चाहती है कि उसके निर्वाचक और समर्थक (सुबस्क्राइब और प्राइज) सतुष्ट रहें। इसी तरह अन्य सरकारोंसे भी उसके सम्बन्ध रहते हैं और वह चाहती है कि जहाँतक हो वे उसके लिए सम्तोपजनक बने रहें। तत्पर्य यह कि वह विभिन्न जन समूहोंसे अपने कार्योंका अनुमोदन चाहती है।

यह अनुमोदन तभी प्राप्त हो सकता है जब कार्यप्रवृत्तियाँ तथा योजनाएँ कूट सोच-समझकर निर्धारित या निश्चित की जायें और यह प्रबन्ध भी कर दिया जाय कि विभिन्न जनसमूहोंको उनकी जानकारी हो जाय और वे उन्हें अच्छी तरह समझ भी लें। इस व्यवस्थाका नाम ही जनसम्पर्कव्यवस्था है। इसे कार्यान्वित करनेका काम जिनके सिपुर्ह रहता है, उन्हें जनसम्पर्क सम्पादक, जनसम्पर्क-निदेशक या जनसम्पर्क अधिकारी कहते हैं। जनसंवेदन (पब्लिसिटी), संविज्ञापन (प्रेस एजेंड्री), विज्ञापन (एडवर्टाइजिंग), प्रवर्धन (प्रोमोशन) और प्रचार-कार्य (प्रोपैगण्डा)—इन सबका सहाय जनसम्पर्क विभागों द्वारा किया जाता है। सम्प्रचारपत्रों जैसी प्रविधियोंसे भी काम किया जाता है—सम्प्रचारोंके रूपमें कमबख्त विवरण भेजे जाते हैं, विशेष पत्र-पत्रिकाओंका सम्पादन किया जाता है, परचे और पुस्तिकाएँ छिप्टी जाती हैं और रेडियोके माध्यम तैयार किये जाते हैं। इनसेसे बहुतसे कार्य भारतमें भी छोटे पैमानेपर किये जाते हैं। रेडियोसे यहाँ उतनी उत्पत्तासे काम नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसपर सरकारका एकाधिकार है और पैसा बेकर विज्ञापन करनेका प्रयोग, मापाओंकी विविधताके कारण, सीमित रूपमें ही सम्भव है।

भारतमें जन-संवेदनका कार्य

भारतमें प्रधान रूपसे दो क्षेत्रोंमें—सरकारी तथा बड़ी व्यापारिक संस्थाओंमें—जन-संवेदन कायका विकास हुआ है। केन्द्रीय सरकारका

कोकमल दासनेम भीर प्रकाशनके लिए सद्भावना उत्पन्न करनेमें सहायक होता है ।

इस कार्यक्रमके अन्तर्गत सूचना विभाग समाचारपत्रोंके लिए छपुसेल (नोट) तथा बिस्तरियाँ, गैरसरकारी क्युसेल और प्रुडभूमि बताने वाले क्लस तथा फ़ीचर प्रचारित करता है । साक्ष्य लयमग तीन हजार ऐसी बिस्तरियाँ, क्युसेल आदि तैयार किये जाते हैं और प्रतिदिन कोई तीन सौ अल्लवारों, सबाददाताओं आदिके नाम भेज दिये जाते हैं ।

फ़ॉ, रिपोर्टे, पुस्तिकाएँ, फोटोग्राफ़, आदि तथा अन्य सामग्री उपलब्ध कर दी जाती है और उसी समयमें लगभग ५ • प्रकृतों या पूछ सकके प्रसन्नोका जवाब दिया जाता है । सरकारके कतिपय अधिकारियोंके लिए प्रति दिनको तथा प्रति सप्ताहकी बैठनाओंका क्रमबद्ध सारांश तैयार किया जाता है ।

एक बड़ा काम है सरकारकी गतिविधिके सम्बन्धमें प्रकाशित किये गये समाचारों आदिकी अल्लवारोंकी कठरन इकट्ठी करना । ऐसी भागोंके पत्रों तथा पत्रिकाओंके अथ अंग्रेजीमें अनूदित कर दिये जाते हैं । साक्ष्य कोई २२ हजार कठरनोसे ज़ाम उठाया जाता है ।

उक्त विभाग पत्र-प्रतिनिधियोंके सम्मेलनका भी आयोजन करता है, एक प्रेसकम तथा पुस्तकाख्य जलता है, बिस्तरिय सम्मेलनी भागका संचालन करता है और देशांतोमें तथा समाजोंमें दिखानेके लिए चित्र तैयार करता तथा उन्हें उपलब्ध करता है, पैसा षंकर सरकारी बिस्तरपत्रका प्रकल्प करता है, रेडियो बार्ता तैयार कर प्रसारित करता, बाहर या राज्यमें जानेवाले परिदर्शकोंकी आवश्यकताओंका स्याल रलता और सम्मेलनों, प्रद घिनियों तथा समितियोंका सीमित समयमें, गैरसरकारी स्वेदन करता है ।

इस काममें १० कर्मचारियोंका एक जलत रहता है—संचालक, उप-संचालक चार सहायक संचालक, भाषा-समूहोंके लिए तीन सवेदनाधिकारी, और रेडियो इंजीनियर । क्यके क्षेत्रकी सकल विभागके इन

याको ही है। पुरानी भारत और परम्परागत प्रशिक्षणके कारण सरकारी अफसर जनताको अपने कार्यों आदिकी जानकारी करनेसे बहुत हिचकते हैं।

एक व्यावहारिक उदाहरण

बुद्धिमत्तापूर्वक नियोजित अधिकांश जन-संवेदनकार्यके व्यावहारिक मूल्यका उदाहरण सन् १९५२ में हिस्साप काञ्चेज (नागपुर) के पत्रकारकक्ष विभागके प्रोफेसर हैरोल्ड ए० इन्सपवर द्वारा रखा गया था। "बर्ड कांठसिड ऑफ चर्चेज" से सम्बन्ध रखनेवाले दो सन्तुष्टोंके प्रथम परिचयार्थ सम्मेलनका प्रेस आधिकार (समाचार प्रसारित करनेवाला अधिकारी) बननेके लिए उनसे कहा गया था। यद्यपि इस कामके लिए उन्हें कभी समय पूर्व सूचना नहीं दी गयी फिर भी अमेरिकाके इस धार्मिक पत्रकार एवं संवेदनप्रधिकारीने एक प्रेस-कमेटी बना ली, कामकी पूरी योजना तैयार कर ली, प्रारम्भिक जानकारीकी कुछ बातें समाचारपत्रोंके पास भेजवा दीं और बैठक आरम्भ होनेके एक दिन पहले सम्मेलनका पहुँच गये, जहाँ दो सप्ताहसक उक्त सम्मेलनकी बैठक होनेवाली थी। उन्होंने समाचारोंके आदान-प्रदानके लिए एक 'प्रेस-क्लब' ठोक कर किया जिसमें दो टाइपराइटर रखवा किये, टेलीफोन और प्रतिलिपि तैयार करनेवाली मशीन रख ली और प्रतिदिनकी कार रेकार्डके पूरे पूरे समाचार भेजवाये गये।

उन्होंने पत्रोंके रिपोर्टरों, पत्रिकाओंमें विशेष लेख लिखनेवालों, प्रौढो सेनेवालों तथा अन्य पत्रकारोंकी अच्छी सहायता की, जिससे वे बैठकके पूरे पूरे समाचार भेजनेमें सफल हुए। इसीसे इस सम्मेलनकी काररेवार्डका मयेज हाजिराक सेवाकारियोंको निर्दिष्ट हो सका और सम्मेलन पात्रोंकी यह इच्छा पूरी हुई कि उनके कामका पता अधिकसे अधिक लोगोंको चले जाय। अन्य लोगोंके मो घेले कई सम्मेलन भारतमें हुए हैं किन्तु सर्वसाधारणको उनका कुछ भी हाक निर्दिष्ट न हा सका क्योंकि समाचारपत्रोंके साथ सहयोग करनेका कोई प्रयत्न नहीं किया गया।

आवगा, क्यों क्यों ऐसे पत्र-पत्रिकाओंकी भी संख्या बढ़ती चलेगी। अन्य देशोंमें भी राष्ट्रकी आर्थिक स्थितिके अनुपातमें ही उनका अस्तित्व हाता है। पहलेके अमानेमें जब राजगारकी चहक-पहल बढ़ जाती थी, तब ये पत्र भी अधिक देखा पड़ते थे और एक तरहसे शीकड़ी बाज समझे जाते थे किन्तु जब समय सराब आता था, तब इनकी संख्या घट जाती थी। किन्तु पिछले दशकमें स्थिति असन्तोषजनक होनार भी उनका अस्तित्व कायम रखा गया है, क्योंकि व्यापारिक संस्थाओंके प्रबन्धकोंने जन-सम्पर्ककी दृष्टिसे उनका महत्त्व समझ लिया है।

इन पत्रोंका काम कारखानोंमें काम करनेवालों तथा माछिनोंका पारस्परिक सम्बन्ध सुचारु और किसी व्यापारिक संस्थाके प्रति उसके ग्राहकों या छोटे व्यापारियोंमें सम्बन्धना बढ़ाना तथा अधिक मात्र विक्रयानेमें इन छोटे व्यापारियों एवं वितरकोंकी सहायता करना है।

अन्य पत्रोंकी तरह इन पत्रोंके उत्पादनमें भी सम्पादकीय कौशलकी आवश्यकता पड़ती है और जन-सर्पक तथा जन-संवेदनके मौलिक सिद्धान्तों का समझना भी आवश्यक होता है। समाचारोंका संग्रह करने तथा जो खेल उनमें प्रकाशित होते हैं उन्हें लिखवानेके लिए रिपोटरों और खेलकोंकी आवश्यकता होती है। काफीका सम्पादन करने और व्याक बनवानेके लिए फोटो बित्रोंका चुनाव करने तथा ऐसे ही अन्य कामोंके लिए सम्पादकोंकी आवश्यकता पड़ती है।

सातथ मध्यम इन्डस्ट्रियल एम्पाइ कारपोरेशन, विरचिराप्सस्कीके जन-संवेदनाधिकारी भी बार-परगासराबीने प्रवर्धनीमें भाषण करते हुए कहा था कि नैतिकताका निर्माण करनेकी दृष्टिसे अधवा प्राविधिक तथा शैक्षिक जानकारीका प्रसार करनेके साधनके रूपमें और कमियों एवं प्रबन्धकोंके बीच सीद्दा बढ़ानेकी दृष्टिके रूपमें “संस्था-पत्रिका एक बहुमुख्य उपकरण है।”

भीपरगासराबीने पुन अपनी ही कम्पनीके पत्र इन्डस्ट्रियल एम्पाइ की तरफ की ओर कहा कि यदि इस पत्रके कारण जनताके एक छोट भागने

किन्तु इस तरहकी विशेष रंगकी पत्रकारी भारतमें अभी छोटे पैमानेपर ही रेश पड़ती है। जो लोग इस बुद्धिका अनुसरण कर रहे हैं, उनमें अभी प्रेसोंकी प्रबल मायना व्यगसित नहीं हुई है और न वे अपनी कोई कल्याण स्थापित करनेकी आवश्यकताका ही अनुभव करते हैं, क्योंकि इन सम्पादकों तथा जन-संवेदन या जन-सम्पर्कके संचालकोंको एक सूत्रमें गठित करनेके लिये अभी तक किसी संस्थाका नियोजन नहीं हुआ है।

कमी-कमी उससे थोड़ी सी हानि भी हुई है, उदाहरणके लिए उस समय जब फोह पत्रकार ऊपरी दिशावेके फेरमें पड़कर अपनी विवेकबुद्धिका भी कुछ भाग खो बैठता है।

भारतीय समाचारपत्रोंके कम रंग आदिकी समीक्षा करनेसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनकी शैली, छपाई और समाचार देनेका ढंग आदि पश्चिमके पत्रोंसे बहुत कुछ भिन्नता जुड़ता है। ताजे और मुख्य समाचार प्रथम पृष्ठपर, अग्रलेख आदि बीच-बाछे बाईं ओरके पृष्ठपर, खेक-कूके समाचार अन्तिम पृष्ठपर, आदि बात प्रायः सभी पत्रोंमें समान रूपसे पायी जाती है, यद्यपि पत्र-संचालकोंकी दृष्टिकोणोंके अनुसार तथा पाठकोंका आकर्षित करनेकी गरजसे इसमें थोड़ा हेर-फेर भी कर दिया जाता है।

छपाईकी परिभाषा

मुद्रण वा छपाईका क्या अर्थ है, यह भी हम बता देना चाहते हैं जिससे ऊपर कही हुई बातें और स्पष्ट हो जायें। मुद्रण, उसके प्रत्येक रूपमें, एक आदर्श या धारसे आदर्शियोंके विचार वा विचारोंको बहुतसे जोगोंतक पहुँचानेकी दृष्टिका रूपक रूप है। यह दोहरानेकी ऐसी क्रिया है जिसमें आवाज तो एक स्थलसे दूसरेतक नहीं पहुँचानी वा सकती किन्तु उसके संकेत फिरसे उत्पन्न किये जा सकते हैं। जिसमें किसी वस्तु वा घटनाका वास्तविक दृश्य तो स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता किन्तु भिन्न-भिन्न और वर्णनमें उसकी वादवाप्यको फिरत्पायी बनाने का बुद्धिसंगत तरीका फिरसे उत्पन्न किया जा सकता है। यह विधित करने या सोचकर उसकी आदि बनानेका काम नहीं कर सकता किन्तु यह रंगकर वा सोचकर बनाये हुए चित्रका आकारों आदर्शियों द्वारा देखा जाना संभव बना दे सकता है जिसे साधारणतया वे कदापि न देख सकते। इसलिये जब किसीके प्रकट किये हुए विचार (यद्यपि और भव्यनीकी सहायतासे) इस रूपमें बहुतसे पाठकोंके पास, उन्हीं आकृष्ट करनेके लिए, पहुँचा दिये जाते हैं तो इसे ही हम 'मुद्रण' कहते हैं। वे

और वह मुख्य वा यूक्युल जो आपने स्वयं छितकर भेजा है। यन्त्र सञ्चार करनेवाला आदमी, जो अपने पत्रकी पद्धति जानता है, चाहे वह दैनिक पत्र हो या मासिक-साप्ताहिक शीर्षकोंको ठीक करता तथा उनके बगलमें छित देता है कि किस तरहका और कौन दृश्य उनमें दिया जायगा।

दो-चार तरहके मासिक या साप्ताहिक पत्र यदि ठट्ठाकर देखें तो आपको विहित होगा कि बनाव-सञ्चारके, सुन्दर ढंगसे छपनेकी पद्धतिके, किन्तु अधिक प्रकार सम्भव हैं। सचमुच यह कहना कोई अविश्वस्योक्ति नहीं है कि उन सब बन्धनों तथा बकायोंके बावजूद जिनका ध्यान दायर मासिक सञ्चारके रखना पड़ता है, कोई भी दो आदमी आपसे छेद, शीर्षक और ढंगके लिए बिछकुछ एक ही तरहका बनाव सञ्चार निवारित न करेंगे।

प्रत्येक पत्रका अपना एक निराक्षर ढंग या तरीका होता है—या कमसे कम होना चाहिये। यदि न हो तो फिर पत्रका धारा रूप रंग मुद्रककी कृपापर निर्भर रहता है। वह यदि प्रशिक्षित एवं कुशल व्यक्ति न हुआ तो फिर ईश्वर ही सँभरे।

अतः शीर्षकका दायर ठीक किया जाता है और कम्पोजिटर उसे कम्पोज करता है, तबतक जबकी सेरा भी कम्पोज होता रहता है जिसमें अमिश्रित बङ्गानेके लिए प्रसंगोंके ऊपर उपशीर्षक भी रहते हैं। निश्चय जब धारा मैटर तैयार हो जाता है तो पक्षी बार उसका मूक स्थापित होता है। जब उसका संशोधन आविष्ट हो चुकता है तो किसी एक पृष्ठपर आपका छेद, अन्य केषोंके साथ, बैठा दिया जाता है (हो, यदि आप इतने भाग्यशाली हुए कि धारा पृष्ठ आपको ही मिल जाय, तब बात दूसरी है।) और यदि पत्र बड़ा तथा साधनतन्त्रन हुआ तो पृष्ठका द्योतियो बना किया जाता है। यह एक तरहकी अक्षरचन्द्राकार पक्षी-सी होती है, जिसमें एक बारमें एक पृष्ठ आता है, और जो ठीक ठीक करनेके बाद मुद्रण-कर्मके सिक्किटर (बेकन) के चारों तरफ

गड़ना और बाध है तथा नागरी बधमाय्याके ६०० सकेतोंके लिए बिना संकेतितने हो ऊपर, नीचे या बगलमें रखे जाते हों, टाइपोंके रूप बनाना बिल्कुल दूसरी बात है। फिर इसके साथ यह भी विचार कीजिये कि भारतमें एक-दो नहीं, दर्जनों मापाएँ हैं जो संस्कृत या अरबी लिपिपर आश्रित हैं और प्रायः हर एकमें सीधी या टेढ़ी छकीरों तथा मोड़ार्हवाले सकेतोंमें मिश्रता है तो माहसुस होगा कि देशी मापाओंके समाचार पत्रोंको हाथसे कम्योज करनेके सम्भवतिवाले तरीकोंसे मुक्ति दिखानेका कार्य कितना महान् था। सचमुच ही यह दुनियामें मुद्रणकी बड़ीसे बड़ी सफलताओंमेंसे एक है।

नूतन यन्त्रावलीका प्रयोग

द्वितीय महायुद्धके बादके वर्षोंमें भारतका मुद्रण सम्बन्धी आधुनिक यन्त्राकी स्थापनाका अवसर मिला। पश्चिमकी रेषा माक बंजनेके लिए ठसुफ़ ये और पूरववाले माक मँगानेको, इसीसे मुद्रण सम्बन्धी नवीन यन्त्राके मामलेमें भारत अपनी स्थिति अधिक सुदृढ़ बनानेमें समर्थ हो सका। अइनोटाइप, इंडरटाइप तथा मोनोटाइप मशीनोंकी सहायतासे कम्योजिंगका काम अधिक सुविधाके साथ किया जाने लगा है। टैक्स्टा नहीं वो दर्जनों अक्षरागोम रोटररीसे छपाई होने लगी है और अक्षरा अक्षरा कागजके बजाय खेसन्की तरह छोटे छोटे कागजका प्रयोग किया जाने लगा है। रोटररी मशीन बहुत पत्रकारियोंकी उत्कृष्ट कारीगरीका नमूना है किन्तु ये काफी महँगी पड़ती है इसलिये कुछ ही अक्षवार इन्हें मँगा सकते हैं। कम्योजिंग आधिकारिक कामोंमें सहायता पहुँचाके लिए अल्प मशीनोंका भी प्रयोग होने लगा है, जैसे स्टीरिंग बनानेके उपकरण, इंडिंगके लिए लकड़ो तथा एलरीड, ब्लक तथा यार्डर, इत्यादि। इनके सिवा, और भी कई तरहके यन्त्रोंसे काम किया जाने लगा है जिससे भारतीय छापेस्तानोंकी स्थिति अधिक अच्छी हो गयी है। वे मशीने हैं—मॉडनेकी मशीन, सिट्टाईकी मशीन, किनारा काटनेकी मशीन, मूक उठानेके साधन, कैमरा और प्लाक बनानेवाली मशीन इत्यादि।

इस तरह अपनी जाती है कि पाठक उसकी ओर आकृष्ट हो जय। पृष्ठ कैसा हो, यह बहुत कुछ उसके पाठकपर निर्भर है, ठीक उसी तरह जिस तरह पाठक कैसा हो, यह बात उक्त पृष्ठपर अवलम्बित है। ज्ञेय हुए पृष्ठमें शब्दोंके बीच काफी जगह (स्पेस) रखती है, छीपक, स्तम्भ, विज्ञापन, रुक तथा बाइर, मोटा टाइप, सादा टाइप, इटेब्लिक, हस्तीर्षिका टाइप, चित्र, पाइठिप्पचिर्बो तथा बेछूटे आदि रखते हैं, यद्यपि सब चीजें एक साथ नहीं होतीं और सब पृष्ठोंपर नहीं होतीं। मुख्य बात यह है कि अपनेकी कम्पोज की हुई सामग्री रखती है और उसके नीचे कागज रखता है—दोनोंकी एक तामस्यपूर्ण इकाई होती है। यदि दोनोंमें सेक और अनुरूपता न हो तो इसमें अवश्य ही किसी न किसीका बाप होगा।

किसी पत्रकी छपाई और सजावटका ढंगमात्र देखकर बताया जा सकता है कि वह कौन-सा पत्र है, भले ही उसका नाम नहीं देखनेको न मिले। कनाब टनाब बहुत कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि सामग्री किस नियमकी है। पढ़कर केवल एक दिन रखे जानेवाले दैनिक पत्रकी छपाई सफाईका ढंग स्पष्ट मासिक पत्रसे कुछ होता है जिसके अधिकारमें सेल तथा आलोचनात्मक निबन्ध आदि रखते हैं।

सनसनीखेज समाचारके लिए अधिक आकर्षकप्रण प्रदर्शनकी आवश्यकता होती है—पृष्ठके एक किनारेसे दूसरे किनारेतक पताका शीपक, बड़ा अक्षर, मोटे मोटे उपशीर्षक फोटो चित्र, दो कार्डमके शीर्षक और वास्तव या भ्रूया (स्तम्भके बीचका ऊपर नीचे रुक लगा कर पृष्ठके किया हुआ समूह या शिखपट्टकी शकलका वह स्थान जिसमें अधाधारण महत्त्वके समाचार दिये जाते हैं)। यदि कोई वैज्ञानिक खेल हो, जिसमें बुद्धिमत्ता शर्त या कपन हो, आँकड़े हों, अतिनिर्देश हो, तो उसका प्रदर्शन शान्तिमय ढंगसे, अध्ययनकी बातचरयके उपयुक्त, देना चाहिये। यह स्पष्ट ही है कि भिन्न भिन्न पत्रोंमें भिन्न भिन्न बुचान्त

हमेशाके लिए कर गया किन्तु भारतमें अब भी पृष्ठोंके बनाव ठनावमें कल्पनासे बहुत कम काम भिन्ना जाता है।

तस्से मनहूँस-सा दिखाइ पड़नवाला पृष्ठ सम्पादकीय पृष्ठ होता है। अन्य पृष्ठोंकी तरह इसे भी, बिना किसी दिक्कतके, आकरक बनाना चाहिये किन्तु प्रायः ऐसा किया नहीं जाता। उनसनी फैलानेका प्रयत्न किये बिना भी विभिन्नता आसानीसे दिखाइ जा सकती है किन्तु हमारे दैनिक पत्रोंमें अभी यह नहीं हो रहा है।

किसी पत्रके बनाव-ठनावमें एक मुख्य वस्तु यह भी है कि कौन-सा और किस आकारका टाइप चुना गया है। यह बनाव-ठनाव पम्पके कसियव मैग्नेटी पत्रोंके 'ठोस मार' डगसे छँकर बहुसंख्यक दैनिकों तथा साप्ताहिकोंके 'शान्त प्रशान्त' डगठकका हो सकता है। आज विभिन्न तरहके शीर्षकवाले टाइप तथा उपयोगी वेक-बूटे (बॉर्डर) प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं है और पैसा भी अधिक नहीं देना पड़ता।

मासिक पत्रिकाओंका मेक अप

मासिक पत्रोंका बनाव ठनाव दैनिक पत्रोंको अपेक्षा अधिक सरल होता है, यद्यपि दैनिक भी चाहे तो अच्छे प्रशिक्षित मुद्रण-विश्वकर्मी सहायतासे, रूप-रंग आदिका अपना विधिस्तम्भ—यह सूत्रमूल जो जेलों, सम्पादकीय शीर्षक और टाइपोंके प्रदर्शनके संयुक्त प्रभावसे उत्पन्न होता है—अभुव्य बनाने रखते हुए भी, कान्तिमय सुभार कर सकता है।

मासिक पत्रोंके शीर्षक पुरस्तके साथ ठीक किये जा सकते हैं। समझकी बाधा न होनेसे उभम बैसी कोई कठिनार्ह नहीं होती। हर तरहके टाइप और विभिन्न प्रकारके डग अपनाकर देखे जा सकते हैं और अन्तमें जो सबसे अधिक सन्तोषजनक तरीका जान पड़े उसे ही रखनेका निश्चय किया जा सकता है। बहुतसे दैनिक पत्रोंके लिए इसके निकटतम पहुँचनेका केवल एक ही तरीका है—अपनी विशेष शैली या शैलिका अनुसरण करते रहना और शीर्षकोंके लिए सुन्दर टाइपोंका प्रयोग करना। 'न्यूयार्क टाइम्स' तथा 'क्यून्ट टाइम्स' को देखनेसे

हीमिये और नामके प्रत्येक अक्षरके दोनों तरफ, बीचमें, थोड़ी थोड़ी स्पेस (जगह) छोड़ बीचिये, तो किसी तरहकी थोड़ मरोड़ किये बिना ही पत्रिका महत्व बढ़ जायगा।

बस्तुतः सब तरहका टाइप बैठाने या कम्पोजिंगका काम सामान्य-पूर्ण मेक बनाये रखनेका काम है। अच्छी कम्पोजिंगमें एक तरहका ऐसा 'सुकाव' छा होता है जिसकी परिभाषा करना तो कठिन है किन्तु जब यह मीनूड रहता है तो उसे पहचानना कोई कठिन काम नहीं। यह केवल सन्तुलनका प्रश्न नहीं है, क्योंकि आजकल कम्पोजिंगके अधिक आधुनिक तरीकोंमें सन्तुलनका प्राप्त होना कदाचित् सबसे अन्तिम प्रभावकी बात होगी। फिर भी उसमें एक तरहकी छय या सामान्य तो है जो जिसमें उचित ढंगसे उतार-चढ़ाव हो। टाइप बैठाने और बनाव-टनावके सम्बन्धमें कह पाठ्य-पुस्तक दिल्ली का चुकी है। पुस्तककी किसी भी बड़ी छूकानसे पत्र मेककर उन्हें मैगा घेना कठिन न होगा।

'शीपक' शब्द आजकल समर्थार्थनाम (मिसनरी) हो गया है। इण्डियन प्रिंट एण्ड पेपर' के एक लेखमें कहा गया था कि 'शीपक नामकी कोई चीज ही नहीं रह गयी है' और यह दिखा देनेके लिए उसमें केवलका शीपक शीर्षस्थान माने ऊपर न बकर छल्लके अन्तर्में नीचे दिमा गया था, जो ठीकतगत्त था और किसी भी तरह बिसंगत्त नहीं कहा जा सकता। क्योंकि इन्कर कुछ बपोंसे ऐसे बहुतसे नियम जो पहले अनुसंधानीय माने जाते थे, परिवर्तन कर दिव गये हैं और इसका परिणाम पाठकके लिए बड़ा आश्चर्यकारी हुआ है, भले ही वह मुद्रण-रीत्यके बारेमें कुछ जानता हो या न जानता हो।

बनाव टनाव करनेवाले व्यक्तिको मासिक पत्रिकामें हो सम्म होनपर चुनाव करनेका अधिक मौका रहता है। यहाँ यह बिचारोंके अधिक बड़े दावरोंके काम के सकता है। दोनों स्तम्भोंके आर-पार एक सिरेसे दूसरे तक, या पक्षी पंक्ति दो काष्ठार्थ तथा दूसरी केवल एकमें रखी आय; शीपक ऊपरकी ओर और और उपशीपक फूटके नीचे या शीपक प्रथम

भारतीय पत्रकारकक्ष

टाइप

कपोज करनेके नये तरीकेकी खयाल करनेके पहले, जहाँ बीच बाँध पहलके निबर्तोंका बार बार उत्सर्जन किया जा रहा है इसे ठीक मुद्रण बस्य, टाइप के ही सम्बन्धमें विचार कर लेना चाहिये, जिसका उत्सर्जन ऊपर कह बार आया है। यह ऐसा विषय है जिसका खपन करनेमें कई मिस्ट्री मरो जा सकती हैं और जिसका न आकषण समाप्त होता है और न कुछ नयी शिक्षा देने, नवी जनकायी करनेकी समता।

और नये नमूनों या तबका टाइप। तीस वष पहले टाइपके जो नमूने प्रचलित थे उनका प्रापाम्ब उसके पहले व्यापक पचास बगोसे बस्य आया था। इसके बाद परिवर्तन हुआ, इतना व्यापक कि मुद्राधिक और मुद्रातिष्ठित घाटपाओपर कठोर आपात हुआ, फिर भी उसमें व्यापकी अपनेकी इतनी धाँक थी कि टाइपोंका प्रयोग करनेवालोंको स्थितिपर गम्भीरतापूर्वक विचार करना पड़ा और अपनी विशिष्ट पद्धतियोंमें इस हलचल सम्पन्न करनेको बाध्य होना पड़ा जिसकी उन्होंने पहले कल्पना भी न की होगी। परिवर्तन पहले यूरोपकी मुख्य भूमिपर शुरू हुआ और जब प्रथम महानुद्घकी सम्पत्तिके साथ प्रथम आपातका अन्त हुआ तब 'हर चीज मध्यमें तथा सब पद्धतियों समान स्तरपर रखने' का तरीका अत्यासी रूपसे परिवर्तन कर दिया गया और उसका स्थान दिया 'परिबर्तनके लिए कुछ भी अपनाने' को नयी अनौखी प्रविधिने। धीरे-धीरे साम्यकी स्थिति उत्पन्न हुई और तब यह अनुभव किया गया कि दोनों नमूने या प्रकार साथ साथ सञ्जाकनापूर्वक चल सकते हैं।

परिवर्तन और उसका कुछ अद्य स्थिति करनेके लिए नये टाइपके नमूने सामने आये। पहले तो उन्हें देखकर लोगोकी भीड़ पड़ गयी और उनसे उन्हें कुछ परेशानी सी हुई किन्तु परिवर्तन रोकना सम्भव न था। आज यह मुद्रणका अंग बन गया है जिससे उसकी सम्पन्नता बढ़ गयी है और उसकी धाँक भी।

किससे उसकी सीमावर्तीय आलोचकोंका भी सम्बोध हो सके—मुद्रकोंका तथा प्रकाशनकार्य करनेवालोंका ।

कलाके पत्रोंमें धीरे-स्तम्भी और सामान्य, प्रधान्य धीरे-धीरे दिन-प्र-दिन अधिक महत्त्व दिया जाता है, धीरे-धीरे बढ़ते रहते और समाप्त हो गये । कल्पनाकी पूरी छूट मिल गयी है ।

विशेषोंको अधिक महत्त्व दिया जाता है, धीरे-धीरे बढ़ते रहते और समाप्त हो गये । कल्पनाकी पूरी छूट मिल गयी है ।

गोस हासमें प्रहार काटते रहते हैं लेखका मूल भाग माना बादमें समीक्षा करनेपर मासूम होगा कि स्वतन्त्र और सरल बनाम तनाव होता है । इस तरहके बनाम-तनावम टाइप, प्लॉक तथा सदेष्ट, चीनोंकी ओर एक समवेत पूर्णरूपके रूपमें अधिकसे अधिक ध्यान देना आवश्यक होता है । वह एक धन एक, धन एक भिन्नकर तीन होने ही नहीं, वरन् उसके कुछ अधिक वस्तु है । वह एक ऐसा समूह पदार्थ या पूजा होना चाहिये जिससे वह मासूम होना हो कि जो कुछ कहा गया हो और उसका जो कुछ भाव्य हो, पाठक टाइप वा प्लॉककी स्थापनाके बिना उसका अनुसरण कर सके । मसलन वह कि पाठक द्वारा, याक अचेतन रूपसे, वह सब कुछ एक ही इकाईके रूपमें स्वीकार कर लिया गया हो ।

पाठकने देखा होगा कि हासमें एक तरीका यह पता पड़ा है कि प्लॉककी छपाई कागजके किनारेसे आगे बढ़ जाने की जाती है । इसके क्रिय धीमे-धीमेका विधिष्ट शब्द है 'प्लॉक माफ' (वह निश्चयना) । जब पहले पहल वह देखा पड़ा तो समस्त मुद्रणजगत्में इसकी मरमार हो गयी, जिससे उसमें एक नवीनता एक वाजगी आ गयी जिसकी पड़ी भाव-स्पष्टता थी । सामान्य छपाईसे इस 'बहिर्गमन' की छपाई में अधिक लाभ पड़ता है, क्योंकि कागजके मामूली किनारेसे बाहरतक प्लॉक छपता है । यदि कागजके किनारेके बाहर प्लॉकका बनाव आपनेवाले पेन्सिल पर बराबर पड़ता रहे तो धीरे-धीरे मुद्रण पट्टि होनेकी सम्भाव-

एक पत्रर मिश्रीके रूपमें अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया, इसीसे कमाकारको इसमें प्रवेश करनेका अवसर मिला। विराप्पन-समितियोंने छात्राईके काममें कई तरहसे सहायता पहुँचायी है और भारतमें इस कर्म की उन्नति करनेमें यथेष्ट रूपसे अग्रगण्य किया है।

भारतमें इन पत्र-पत्रिकाओंका भविष्य

उत्पादनकी दृष्टिसे भारतमें सेतों सम्बन्धी इन पत्र-पत्रिकाओंका भविष्य कैसा है। इस प्रश्नका यथोचित उत्तर देनेके लिए कई बातोंपर विचार करना आवश्यक है।

सेतों सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओंके उत्पादनका भविष्य भारतमें इन समय दुनियाके प्रायः अन्य किसी देशसे अधिक उज्ज्वल है, प्रचार संस्थाकी दृष्टिसे भी और प्रत्येक बँकके सुन्दर बनाव टनाककी दृष्टिसे भी। इसके लिए काफी विस्तृत क्षेत्र पड़ा है इतना विस्तृत कि उसपर घायब किसीका विश्वास ही न हो।

पहले हम कह चुके हैं कि मुद्रणकी कला अन्तराष्ट्रीय है। यह ऐसा कथन है जिसकी समस्त उस प्रत्येक स्थान या देशमें स्वीकार की जाती है जहाँ जहाँ छात्राईका काम होता है। कायकका ठिकानसे प्रयोग, यथावित्त ढंगसे रोचनाइ छगाना और मशीनपर छापना, बढिया जिस करने करना आदि ऐसी चीज हैं जो दुनियाके एक भागमें ही नहीं, हर भागमें अच्छी समझी जाती हैं। किन्तु इसका यह आशय नहीं कि एक देशकी छात्राई और वृत्तरेकीम कोई अन्तर नहीं होता। भ्रम रिकाकी छात्राई इंग्लैण्डकी या फ्रांस, इटली और जर्मनीकी छात्राईसे मापाभा सम्बन्धी अन्तरकी ओर ध्यान न देते हुए भी स्पष्टतः भिन्न होती है। किन्हीं मो बाँ देशोंमें छात्राईकी समान विशेषताएँ नहीं होतीं वीक उसी तरह जिस तरह व्यर्थ सांस्कृतिक विषयोंमें नहीं होती। साकी को कोई भी व्यक्ति टबीइकी पोशाक समझ लेनेकी शूक नहीं कर सकता। एक पूर्वी है, वृत्तरे पश्चिमी। अपने स्थानपर प्रत्येक ही प्रशसनीय है और पहनावा यह भी है, यह भी है। फिर भी कोई यह नहीं कह सकता

कड़वाही खुदाईमें, चोरीकी कर्तन और मुख्यर रोगमी बन्ध तैयार करनेमें और पुनरुत्थार की गयी जनताकी कष्टमें प्राण है। उसे ऐसे व्यक्तिमोंकी आवश्यकता है जो इस देशकी सामग्रीका अध्ययन करने और छापाइ तथा बनाव-सजावमें उसका उपयोग करनेको तैयार हों। उस ऐसे आदमी चाहिये जो छापाइकी कलाके विकासमें अपने आपका अर्पित करे, केवल रुपया कमानेकी गरजसे ही उसमें प्रविष्ट न हों और उस ऐसे सस्थाई चाहिये जो देशके लिए अपने धामका कुछ हिस्सा छोड़ देनेको तैयार हों ताकि वह मुख्यकष्टमें अपने भाव प्रवर्धित करनेकी प्रवृत्तिको विकसित कर सके।

उत्पादनमें शिक्षियोंकी आवश्यकताके साथ साथ अभिव्यक्त या सजावट करनेवाले ऐसे आदमी भी चाहिये जो टाइपके प्रेमी हों और उसकी अनुशासित अभिव्यक्तिकी सौन्दर्यसे भी जिनका प्रेम हो। बनाव सजाव करनेवाले आदमियोंको, उन तथाकथित अनावश्यक व्यक्तिमोंको नियुक्त न कर भारतके समाचारपत्रोंने शोचनीय भूल की है। विकासमें उन्हींने टाइप बैठानेकी कलाकी छीकाछेदर कर डाली है और अस्वर ऐसे वित्र जो नाममात्रको फोटो विभागे मिट्टे-पुकड़े हावे हैं, काफ़ी अच्छे समझकर स्वीकार कर लिये जाते हैं। छोटे-छोटे समाचारपत्र और पत्र-पत्रिकाएँ ही जिनके पास पैसेकी कमी हो इस दृष्टिसे सबसे बड़े अपराधी हों, यह बात नहीं। जबकि प्रचारवासे बड़े पत्रोंका इसमें सबसे अधिक दोष है। अन्य पत्रोंका नेतृत्व करनेके बजाय वे सरल सागपर मस्तानी पाकसे पकते रहे और इस प्रकार उन्होंने अपने आपको आत्मसम्पन्न बना डाला। भारतमें धारक ही कोई ऐसा पत्र हो जिसपर वह दोष न लगाया जा सके कि उसने मुख्यसौन्दर्य सम्बन्धी अपनी जिम्मेवारी ग्रहण करनेसे मुँह मोड़ लिया। टाइपोंके चुनावमें कोई विशेष सजाव नहीं किया जाता और ऐसे फेस वाले टाइप रखकर पत्रक दमक बढ़ानेका काम जिनमें सौन्दर्यके साथ उपयोगिताका मेक हो, कम मुख्य पत्र-पत्रिकाओंके लिए छोड़ दिया

की सेवाके लिये कर सकें जिसे उन सब चीजोंकी आवश्यकता होगी जो उसके पत्र तथा पत्रिकार्थ उसे दे सक ।

मानेवाले परिवर्तन नौके कारण भारतीय पत्रोंको अपने इतिहासमें सर्वोत्तम अवसर प्राप्त होगा किन्तु उन परिवर्तन नौका साम्ना करनेके लिये अधिक गहराईकी और अधिक व्यापक दृष्टिकोणकी आवश्यकता होगी । उस अश्वितीय स्थितिके लिये उन लोगोंको पहलेसे तैयार रहना चाहिये जो मुद्रणकलाकी उन्नतिमें रुग्णता व्याप्त हैं और उन लोगोंको भी जो छपाईका काम सुचारु रूपसे कर सकें और अपने पक्षे पैमानेपर कर सकें जिससे समस्त देशकी ही आवश्यकता न पूरी हो जाय वरन उन हजारों भारतीयोंका भी काम बख्त जाय जो देशकी सीमाके बाहर अन्य अन्य स्थानोंमें निवास करते हैं ।

करना शुरू कर दिया है, जैसा कि इ० एस० फोर्स्टर, जेम्स स्टीयन्स, चिल्ड्रेन्स सासोयन, तथा कई मेकनीक विलका चुके हैं।

केन्द्रीय-विद्याके बोर्डोंसे अनुपायियोंकी तुलनामें आकाशवाणी सुनने-वालोंकी संख्या कहीं ज्यादा है, चाहे वे छात्र हों या निराश्र (विद्योपकर इस देशमें जहाँ १४ प्रतिशत लोग ही पढ़े-लिखे हैं)। इसके सिवा गण-संघके लोक-सचिव संविधानमें विद्यालय अथवा कक्षातक पहुँचना निराला आवश्यक है, अतः इन दो कारणोंसे मापणियोंके लिए अधिक अवसर प्राप्त होनेकी सम्भावना है।

ध्वनि-प्रसारणका प्रारम्भ

भारतमें तुम्हबलित कम्पे ध्वनि-प्रसारणका प्रारम्भ ५ मई १९३२ को हुआ। भारत सरकारने निश्चय किया कि देशमें ध्वनि प्रसारणका कार्य सरकारी प्रबन्धमें चलाया जाय। इसके पहले इस विद्यामें कई प्रयत्न स्वामी तौरसे किये जा चुके थे किन्तु वे सभी निष्फल हुए। १६ मई १९२४ को मद्रासमें आकाशवाणी प्रसारित करनेके लिए सबसे पहली संस्था 'हि रेडियो क्लब' स्थापित हुई। उसी साल ३१ जुलाईसे उसने ध्वनि प्रसारणका कार्य शुरू कर दिया, किन्तु अक्टूबर १९२७ में उस इससे हाथ सीध छना पड़ा।

इसी बीच 'इण्डियन ब्राडकास्टिंग कम्पनी' नामक एक संस्था बन चुकी थी और २३ जुलाई १९२७ को उस समयके वाइसरय लार्ड इरविनने कम्पनीके बम्बई केन्द्रका उद्घाटन किया, जिसमें १५ किमी बाटवाला मीडियम-वेवका ध्वनि-विद्योपक ब्रज बैठाया गया था। संबोधित नहीं पहला ध्वनि-विद्योपक ब्रज का जो भारतमें स्थापित किया गया था। कम्पनीके पत्र 'हि इण्डियन रेडियो टाइम्स' का प्रकाशक भी (बम्बेजीमें) इसी समय निकला। कम्पनीका दूसरा ध्वनि विद्योपक-ब्रज (द्वारा मिटर) — यह भी १५ किलोवाट का, मीडियम वेव, था — बंगाले महीने फरवरीमें प्रतिष्ठित किया गया और 'बैतारकला' नामक बंगाली आकाशवाणी सम्बन्धी पत्र सितम्बर १९२९ में प्रकाशित हुआ।

१९१७	
१९१८	५०,९८
१९१	५४,८८०
१९५२	१२,७८२
	६,९७,११०

युनैस्को की संस्था लगभग ४० साल है।

८ जून १९१४ को 'दि इण्डियन स्टेट प्राइवेटिंग सर्विस' का नाम बदलकर 'आख इण्डिया रेडियो' कर दिया गया।

जब कि १९१२ में ध्वनि-प्रसारण के क्षेत्र दो केंद्र थे—रम्पूर तथा फर्रुखा—प्रत्येकमें १५ किलोवाटका मीडियम वेव स्तर लगाया गया था, वहाँ अब १९५३ में देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक २१ केंद्र स्थापित हो चुके हैं जिनमें ४८ वृत्त-विद्युत यंत्र, विभिन्न डिवाइसों के ध्वनि-प्रसारणका काम कर रहे हैं। ध्वनि प्रसारण के क्षेत्रमें अब युनिस्को के रेडियो सम्बन्धी पत्रकारी

समाचार देना, समाचार या समाचारोंका नोट्स इत्यादिका रूप

देना, समाचारोंकी समीक्षा तथा वितरण के अन्तर्गत अपने समाचार प्रसार करना—इसे ही रेडियो सम्बन्धी पत्रकारी कहते हैं।

यै सब कार्य किस तरह किये जाते हैं इसकी खोज करनेके पहले मेरे लिए यह आवश्यक हो जाता है, और मेरा यह कथन भी है कि मैं यह समझ दूँ कि 'समाचार' क्या है जिससे यह विषय स्पष्ट हो

जाय और आगे बढ़कर इसका अधिक विवेचन किया जा सके। यह कोई सरल काम नहीं है, क्योंकि 'समाचार' क्या है, इसकी सामान्य रूपसे विश्वसनीय परिभाषा करते समय कोई भी दो आदमी एक दूसरे के निकट नहीं पहुँच सकते। (पौधा अप्पाय देखिये)।

फिर भी आइये इस 'अपरिमाण्य-सी वस्तु' का तत्त्व समझने के लिए हम कोई भी एक काव्यनिक उदाहरण ले लें। म्यासके एक समान उदाहरणसे, अथवा यों कहिये कि समाज-सुधार वाहनेवाली एक

हो अथवा जो, मायाके प्रतिकूल, किसी कारणसे न हुए हो न हो स हो और धायक न होनेवासी हो ।” (पृ० १७१)

श्री ग्वाइडने विभिन्न सम्माननामोंका व्याख्य रलते हुए अपनी परिभाषामें एक श्रेणीका तथा ठीक ठीक अपका अनुसरण करनेवाला तरीका आजमाया है किन्तु उन्होंने “दिखलस्पीकी घटना” का अर्थ स्पष्ट नहीं किया है, जो सम्मानकी मुख्य कठिनाई है ।

राउलिंग डेवरबुडने ‘जर्नलिज्म ऑन दि एयर’ नामक पुस्तकमें लिखा है— ‘समाचार किसी घटना, स्थिति, अवस्था या मरका वही वही और समयपर दिया गया विवरण है—बढ़ विवरण जिसमें उन विधिघ्न लोगोंकी दिखलस्पी होगी जिनके लिए वह दिया गया है ।’ *

आहे किंतु तबसे आप इसकी परिभाषा कीजिये, इसके निकट पहुँचने, व्याख्या करने, के तरीकेमें कोई न कोई कसर रह ही जाती है । फिर भी यहाँ जो कुछ कहा गया है उससे उसका स्पष्ट रूप हमारे सामने आ ही जाता है । दोष बात तो व्यक्तिगत रूपसे समझनेकी है और किसी विशेष विषयपर व्यक्तिके निजी निर्णयकी है ।

भारतमें रेडियो सम्बन्धी पत्रकारीका प्रारम्भ रेडियोकी व्यवस्था होनेके कई वर्ष बाद हुआ । यद्यपि देशमें पहला रेडियो क्लब सन् १९२४ में मद्रासमें स्थापित हुआ और रेडियोका पहला केंद्र बम्बईमें जुलाई १९२७ में खोला गया, फिर भी आकाशवाणी द्वारा समाचारोंका टिकानेसे बचना १० वर्ष बाद तक शुरू नहीं हुआ । किन्तु १९३९ से पम्बई तथा कलकत्ताके केंद्रोंमें समाचारोंका वह साराध सुनाया जाने लगा जो समाचार-समितियाँ द्वारा उनके पास मेज बिना जाया था और जो ‘संक्षिप्त, अलम्बद तथा अक्षर पुणन’ होता था । ये संक्षिप्त समाचार पत्रोंमें छापनेकी दृष्टिसे तैयार किये जाते थे, ज्वनि विशेषक वत्र द्वारा प्रसारित किये जानेके लिए नहीं । न तो उनका ‘सम्पादन’ हो पाया था और न

प्रसारित की जाने लगी। बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, अहमदनगर और पेशावरले इनका पुनः प्रसारण किया जाता था। इसके सिवा बम्बई तथा कलकत्ता से दो बार तथा अन्य क्षेत्रों से कमसे कम एक बार समाचार रिक्त समाचार भी अँग्रेजीमें प्रसारित किये जाते थे।

अब द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हुआ, तब आन्ध्र-प्रदेश राज्य के क्षेत्रीय-समाचार-संघटन तुलजानेवाले उस शिशु के सदृश था जो अम्मी चम्का सीखनेका प्रयत्न ही कर रहा था।

युद्ध के कारण सामान्यतः सब लोगोंमें, विशेष कर भारत सरकार के मनमें, रेडियो के उपयोग और प्रसारणकारिता के सम्बन्धमें नयी धारणा हुई। परिणामतः लोक गतिसे उसका विस्तार किया जाने लगा। कम धारा बढ़ा दिये गये और अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओंमें समाचारों की और भी विवरणकार्य प्रसारित की जाने लगी। समाचार प्राप्त करने के लिए विभिन्न युद्ध-क्षेत्रोंमें युद्ध-संवाददाता भेजे गये।

एक बात और हुई। आन्ध्र-प्रदेश रेडियो ने अब विदेशों के लिए भी विदेशी जनता को विशेष रूपसे आश्वस्त करते हुए, समाचार प्रसारित करना आरम्भ कर दिया। समाचार सम्पादक श्रीमान्द समाचारों तथा विदेशी समाचार-प्रसारण व्यवस्था के संवाक्य बना दिये गये।

इतना होते हुए भी देशका रेडियो अभी तक न तो अपना काम निष्पादित कर सका था और न अपने भावी जीवन के सम्बन्धमें कोई वाकना या रूप-रेखा ही बना सका था। वह बड़ी करता था जिसे करनेका आदेश तत्कालीन ब्रिटिश शासक अपने जसकी पूर्ति के लिए, उसे दिया करते थे। वह स्तब्धमें पड़नेवाले वाक्यों के सदृश था जो अनुशासन की धर डॉट डपटकी गृह-कार्यों से बँधा हुआ था और जो यह जानता था कि कसबकी व्यवस्था होने पर देशका भागी अवश्य बनना पड़ेगा। वह बिलुप्त क्षेत्रों में परिभ्रमण तो करता था किन्तु उसका

* इण्डियन डिसेनर (१९४९) के पृष्ठ ६९ से रेडियो के समाचार संवाक्य भी एम० एच० वाक्य द्वारा उद्धृत।

आत्ममयकके मिन्ट मिन्टके समाचार विशेष व्यवस्थाके अनुसार प्रसारित किये जाने लगे। सीमाप्रान्तकी ओरल आनवाले आत्ममयकारिकोंसे कस्मीरकी रक्षा करनेके लिए भेजे गयी भारतीय सेनाके भौनगरमें ठहरनेके बाद दूसरे दिन ही एक सवाददाता अमियान सम्बन्धी समाचार प्रेषित करनेके लिए हवाई जहाज द्वारा दिल्लीसे वहाँ भेजा गया। महात्मा गांधीकी मृत्यु सम्बन्धी सारे समाचार उस कमरेसे ही प्रेषित किये जानेकी व्यवस्था की गयी थी वहाँ मृत्युके समय वे लेटाय गये थे।

भारतीय रेडियो पड़ोसी देशोंके सम्बन्धमें भी स्वतन्त्र रूपसे (बिना किसीके कुसहाये) दिखानेकी चेत्ने लगी। क्या तथा जंकाके स्वातन्त्र्य महात्सवके समाचार भटनास्थलसे ही सीधे प्राप्त करनेकी व्यवस्था की गयी। ऐसे प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनका, जिसकी बैठक दिल्लीमें हुई या किसी पड़ोसी देशमें हुई, विशेषरूपसे ध्यान रखा गया।

यह भी आरम्भ इण्डिया रेडियोके विकासकी प्रगति।

इस प्रकार १९५२ के समाप्त होते-होते आरम्भ इण्डिया रेडियोके २१ क्षेत्रोंसे जो सारे देशमें फैले हुए थे, प्रतिदिन २४ घण्टोंकी अवधिमें १४ देशी और १ विदेशी भाषाओंमें समाचारोंकी ७२ विवरणिकाएँ प्रसारित की जाने लगीं। स्वदेशवासियोंके लिए १९ घण्टोंके कालमें ४० समाचार विवरणिकाएँ इन भाषाओंमें प्रसारित की जाती हैं—अफगानी, बंगला, अग्नेजी, गोरखाली, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़ और मराठी, कश्मीरी, मल्यालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, तमिल, तेलुगू और उर्दू।

विदेशी समाचार व्यवस्थामें प्रतिदिन इन भाषाओंकी कुछ ३२ विवरणिकाएँ प्रसारित की जाती हैं—अफगानी, अरबी, बरमी भाषा, केन्द्रीय, अग्नेजी, फ्रेंच, हिन्दपधियाह भाषा, कुवायू, फारसी तथा पुस्ता, और विदेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंके लिए इन भाषाओंमें—बेगरी, गुजराती, हिन्दी, कश्मीरी तथा पोटवारी।

बिना भूरेजोंकी ओर ध्यान करके समाचारोंकी ये विवरणिकाएँ प्रसारित की जाती हैं, ये ये हैं—पूर्वी तथा दक्षिण पूर्वी-

के लिए बोझाबकी शैली, जिसमें किसी तरहकी अधिप्राप्ति न आने पाये, सबसे अच्छी होगी। “इस तरह किसिमसे मानो आप कुछ आश्चर्योंसे जोरसे कुछ कह रहे हों”—यही सामान्य सिद्धान्त होना चाहिये। लेकिन बहुत व्यापक सादगी भी ठीक नहीं, क्योंकि पढ़नेमें ऐसी रचना कुछ जड़-पट्टा सी लगने लगती है।

रेडियोके लिए सेसार्सि लिखनेकी विधेय विधि या पत्राधिक सम्मन्धमें यह पुस्तक छिली जा चुकी है किन्तु केवल क्लोर अनुभवसे ही यह बात जानी जा सकती है कि कौन सी लिखित रचना अधिक प्रभावशाली होगी। वास्तवमें अन्तमें रख गये विद्येष्टा-सूचक शब्द (जैसे ‘यह बात प्राधिकृत रूपसे बात हुई है) पाठकी अप्रगति को कुण्ठित सा कर देते हैं। निवेद्यात्मक समाचार कभी-कभी निवेद्यात्मक कथनसे अधिक जोरदार माखूम पड़ता है और हमेशा ही उसकी ठप्पे न की जानी चाहिये। भिन्न भिन्न तरहसे पुनरुक्ति करना रेडियोके लिए प्रस्तुत की गयी रचनामें एक अच्छा गुण समझा जायगा, किन्तु शब्द समूहोंकी पुनरुक्ति न होनी चाहिये और न अनावश्यक शब्दोंका प्रयोग ही।

सम्पादकोंका प्रसारित किया जाना न तो सरल है और न जटिल रहे। गोल गोल निकटतम अंक देना हमेशा बेहतर होता है। बोझाबकी शब्द कभी-कभी तो बरकर जोरदार से माखूम होते हैं किन्तु अस्तर कानोंको जटिलते हैं। समाचारोंके विवरणमें उचित क्रमके कितने अच्छे पड़ते हैं, उसने बुभाव्यसे रंग तथा वर्णन नहीं। फिर भी यह कभी पूरी करनेके लिए वर्तमान काकमें कन्तु वाक्यकी उपयुक्त क्रियाओंका प्रयोग अधिक अमर्यादक हो सकता है।

ये शास्त्रीय सिद्धान्त मूर्खों पढ़नेसे बचनेके लिए तथा अच्छी रचना तैयार करनेके लिए विश्वसनीय संकेत स्तम्भ हैं। किन्तु इनके कारण ऐसी अनि प्रसारण व्यवस्थापर काफी जोर बार परिश्रम पड़ता है जिसमें एक या दो भाषाओंका नहीं, (भारतकी तरह) २४ भाषाओंका प्रयोग,

सकते, जो दैनिक पत्रके अग्रभाग एक काबजकी सामग्रीके बराबर होते हैं।

स्वमायता: सीमित संख्याके महत्वपूर्ण समाचार ही विवरणिकामें शामिल किये जा सकते हैं। इसलिए इनके चुनावमें जैसे दरजेकी मूल्य-अनुरूपता, निष्पापक बुद्धि तथा सुबनिकी आवश्यकता होती है। समाचारोंका तुलनात्मक महत्व समझ सने, चुनाव कर सने और सबाद समितियों, सबादशाखाओं सरकारी सूचनाकार्यों, अन्य देशके रेडियो आदि विविध स्रोतोंसे प्राप्त समाचारोंकी काफी फिरसे क्लिष्ट होनेके बाद सब अंशोंको एकमें जोड़ने और महत्वके अनुसार उन्हें क्रमबद्ध करनेकी प्रक्रियासे काम किया जाता है जिससे विवरणिकामें एक तरहका समन्वय तथा एकसमता कापी जा सके।

इसके सिवा, विष्णु एक-दो मिनट पहले तकका समाचार भी चख अना चाहिये और कमी-कमी वा, उदाहरणार्थ प्रधान मंत्री द्वारा अचानक दिये गये किसी वक्तव्यके कारण, सारे विवरणिकाका रूप ही बदलकर फिरसे उसे नये तरीकेसे सुम्नवस्तित करना पड़ता है।

एक बात और। राज्य द्वारा उपाखित समाचार-प्रसारण संस्थाकी विमोचकियों वृत्तीय कौशलको नये संक्षेपे टाकनेका उपक्रम करती है। उसकी समाचार सम्वन्धी नीतिका सब बातोंमें देशकी सरकारकी नीतिके पारों तरह केन्द्रित होना अनिवार्य है, फिर भी सरकारी नीतिकी आलोचनाकी उपेक्षा यह नहीं कर सकती। लोकतन्त्रीय शासनमें, जैसा कि भारतका शासन है, जनताकी आलोचना ही उन नीतियों या कार्य प्रवृत्तियोंका केन्द्रविन्दु तथा आधार है जो जनताके विचारोंको प्रति पक्षित करती हैं।

हालके सार्वजनिक निवाचनमें, जिसने मतदाताओंकी संख्या और गणना क्षेत्रके विस्तार आदिकी दृष्टिसे अन्य सब निवाचनोंको मात कर दिया था, आज इण्डिया रेडियोने देशके प्रत्येक राजनीतिक दलकी नीति तथा उसके नेताओंके वक्तव्यों और भाषणोंका प्रसारण किया—इस

दात द्वारा। यह भीख उठते मो क्यादा है जिसका हावा अमेरिकन रेडियो कम्पनियों कर सकती हैं। रेडियोका एक ही कार्यक्रम और है जिसके सुननेवालोंकी आनुपातिक संख्या इससे अधिक अर्थात् १० प्रतिशत है और वह है फिन्मी गानोंका प्रसारित किया जाना। मुझे उन कारणों के विवेचनकी आवश्यकता नहीं है किन्तु मैं यह कह देना चाहता हूँ कि सूचना और प्रसारण विभागके सभी डाक्टर फैसले उल्टे धेपीके संगीतको प्रोत्साहन देनेके लिए यदि फिन्मी गानोंके सुनावे जानेमें कमी करनेका आदेश दिया है तो उचित ही किया है।

फिर भी ऐसे कितने ही काम हैं जो ज्विष्ठ रेडियो तथा अमेरिकन रेडियो कम्पनियों करती हैं किन्तु जिन्हें आखिरी रेडियोकी समाचार व्यवस्थामें स्थान नहीं मिला है, शायद इसीलिए कि यह सरकारी संस्था है। यहाँ रेडियो-वाचों प्रसारित करनेवाले 'विशिष्ट व्यक्ति' नहीं हैं और आवाजोंकी संख्या तथा दिक्कतसे बढ़ानेके लिए इनके निमाषका कोई प्रयत्न भी नहीं किया जाता।

प्रत्येक केन्द्रसे सप्ताहमें केवल एक बार, अनिवार्य लेखके किसी व्यक्ति द्वारा, समाचारोंकी सीमाका की जाती है और वे समाचारोंके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करते हैं—विचार जिन्हें सरकारी नोटिफिकेशन बना देनेके लिए विशेष परिचालित कर दिया जाता है जिससे किसी भी व्यक्ति, संस्था या देशको परेशानीमें न पड़ना पड़े। नहीं तो संभव है कि सरकारी संस्था होनेके नाते आखिरी रेडियोको किसी अन्तराष्ट्रीय घटनाक्रम के तब जाना पड़े।

भी जे एन० साहनी तथा प्रेम माटिया (अंग्रेजीके) वह अच्छे समाचार-विभागक हैं जो र में स्वतः उनकी वाचा सुननेके लिए बहुत उत्सुक रहता हूँ किन्तु रेडियो-वाचामें पट्टे विशिष्ट व्यक्तियोंका निर्माण करना सदा ही आखिरी रेडियोका अन्त नहीं है। इससे आवाजोंकी संख्या बढ़नेमें सहायता तो मिलती है किन्तु इसमें व्यापारिकताकी गंध आने लगनेकी संभावना है। इसके सिवा अभी तक शायद ही कोई

चारोंका केवल सारांश ही मुना ठकता है, जब कि समाचारपत्र उन्हें पूरे स्मारके साथ छापते हैं।

स्पष्ट है कि यह विचार अब इसके समाचारपत्राभिरोंके मनमें भी चारे-बीरे प्रवेश करता आ रहा है और इस विषयकी आर उठना ध्यान भी नहीं दिया जाता, सिवाय इसके कि रीडियो द्वारा समाचार कुछ पहले प्रकाशित कर दिया जाता है। समाचारपत्रोंने तथा रेडियोंने यह बात मान ली जो है कि दार्जी ही मित्रतापूर्वक साथ-साथ काम कर सकते हैं।

किन्तु रेडियो सम्बन्धी व्यक्तिगत निर्माणमें दोनोंकी एक राय नहीं हो सकी। कुछ वर्ष पहले जब आठ इण्डिया रीडियोने व्यक्तिगत बाबा अंग भी शामिल करनेका निश्चय किया और समाचारोंकी विश्व-सनीयता दिखानेके लिए अपने संवाददाताओंके नाम भी बताना शुरू किया, उन पत्रोंके कुछ बड़ अधिकारियोंने तुरन्त इसका विरोध किया और कहा कि सरकारी संस्थाके लखसे रेडियोके संवाददाता गढ़ आ रहे हैं जब कि समाचारपत्रोंको अपने समाचारोंकी विश्वसनीयता दिखानेके लिए ऐसा करना आवश्यक नहीं प्रतीत हुआ।

समाचार प्रेषित करनेवालेका नाम जाननेमें भावकी दिक्कतस्वीका होना, समाचारकी प्रामाणिकताके लिए भाताओं द्वारा संवाददाताका अभिज्ञान (पहचान), तथा अण्डेले अण्डे समाचार भेजनेके अपने कदम ब्यसे विपक्षित न होनेके लिए संवाददाताको प्रोत्साहन, जिससे आठ इण्डिया रीडियोको अपने संवाददाताओंसे केवल बड़का शीख हो प्राप्त हो सके—इन सब बातोंका महत्त्व सम्भवतः कोई नहीं गया। इसीसे सरकारको छुक जाना पड़ा। जो विचार आग और संपुट किया आ ठकता था और जो विद्यालय जनताको पसन्द भी आता, वह अपने जम्मके केवल दो ही महीनोंके भीतर सम्पन्न हो गया।

निजी रेडियो संस्था होती या स्थापित रेडियो निम्न होता तो ऐसा विरोध-प्रदहन केवल प्रतियोगिताका सूचक ही माना जाता, इतसे अधिक और कुछ नहीं।

निहित स्वार्थसे सम्बन्ध 'उदरपूर्तिवाद' के मार उसकी उपेक्षा भी की जाने लगी। स्वातन्त्र्य ध्वनि-प्रसारण-निगममें प्रतिभावान् व्यक्तियोंको, उदरपूर्तिवादियोंकी अपेक्षा, अधिक व्यवसर प्राप्त होना अवश्यभावी है।

अगले चार वर्षोंमें २॥ करोड़ रुपये लगाकर प्रसारण-व्यवस्थाका विकास किया जानावासा है। इससे स्पष्ट है कि अब प्रतिभासम्पन्न स्त्री पुरुषोंके लिए, जिनमें वृत्तक दखनेकी क्षमता, मौलिकता, बाल्याधिक निष्ठापक मुक्ति और मुक्ति हो अधिक अवसर मिल सकेगा।

अब प्रस्तावित उम्मीदों ध्वनिप्रसारण यन्त्र—समुत्तरगोवाले तथा मध्यम तरंगीवाले, दोनों—प्रतिष्ठित कर दिये जायेंगे और छः नवे केंद्र शुरू जायेंगे जो इस समयके मध्यम तरंगीवाले प्रसारणयन्त्रों सहित देशके १५ करोड़ वगसीस क्षेत्रमें लगभग एक तिहाई क्षेत्रमें अपना काम शुरू कर देंगे, तब किसी भी नवयुवकके सामने ऐस अवसर आयेंगे जिनसे वह काम उठा सकता है।

प्रसारण-व्यवस्थाके विकासाय सन् १९५१ में जा बैज्ञानिक परामर्श समिति स्थापित की गयी थी उसने सिफारिश की है कि परोक्षरूपसे सार पर एक दूरदर्शनकाही यन्त्र प्रतिष्ठित किया जाय। जल्द है कि इसे कार्यान्वित करनेका प्रयत्न भी आरम्भ हो गया है। अब दूरदर्शन यन्त्र अन्तर्में काम करना शुरू कर देगा, तब भारतके राष्ट्रीय रेडियोकी सेवाके अब तरंगोंके लिए आकाश ही अन्तिम सीमा होगी।

आवश्यक न था, इसलिए इन दोनोंकी ओर व्यर्थात् पत्रके व्यावसायिक अंगकी ओर अभी अभी तक अधिक ध्यान नहीं दिया जाता था।

उपर्युक्त कारणसे ही इनसे अधिकतर पत्रोंके प्रबन्ध-रूप भी प्रायः किसी न किसी राजनीतिक दल—कांग्रेस, उदारदल (लिबरल), मुसलिम तथा अमीन्दार या व्यवसायी दल—के साथ रहनेका प्रयत्न करते थे।

कई वर्ष बीत जानेपर, विशेष कर स्वातन्त्र्य प्राप्तिके बादसे और जबसे इन 'अनुर्य उग्रसि' (समाचारपत्रों) की वास्तविक पता चल गई, तबसे अन्वहारो व्यवसायिक सम्बन्धमें पहलेकी विचार स्पष्ट रूपसे बदल गये हैं। फिर भी यह बात किसी प्रतिबादके मर्यादें बिना कही जा सकती है कि भारतीय पत्रोंके व्यावसायिक अंगकी अभी काफी उन्नति करनी होगी तब कदां सामूखी रूपसे उसकी तुलना अमेरिका, कनाडा तथा इंग्लैण्ड जैसे उन्नत देशोंके समाचारपत्रोंके व्यावसायिक अंगत की जा सकेगा। इन्हीं बातों से हमने इस विषयकी भूमिकाके सम्मेलन कही।

अब हम इस सम्बन्धके मुख्य विषयकी ओर आते हैं। उस बात अन्वजे तरह समझनेमें सुविधा हो। इन दृष्टिसे इसे इन तीन दिशामें बाँट देना बेहतर होगा—प्रदन्ध, प्रचार तथा विज्ञापन। 'प्रदन्ध' शब्दमें, जैसा कि मोटे तीरसे भारतमें उसका अर्थ समझा जाता है, प्रचार तथा विज्ञापनका काम भी आ जाता है, क्योंकि प्रबन्ध-रूप या शक्ति ही प्रचार एवं विज्ञापनके वाक्यकी देखरेख करते हैं। फिर भी इस परिच्छेदकी सुविधाके लिए समाचारपत्रोंके व्यावसायिक अंगकी इन तीन मुख्य बातोंकी क्वा हम अलग अलग धीरे-धीरे नीचे करेंगे।

प्रबन्ध-विभाग

प्रबन्ध विभागसे हमारा आशय उस विभाग या कार्यालय कहते हैं जो इस उद्योगका संचालन करे। मोटे तीरसे हम भारतीय पत्रोंकी प्रबन्ध व्यवस्थाके तीन मोड़ कर सकते हैं—(१) एक व्यक्ति या एक दलके पत्रकी व्यवस्था (२) एक परिवार द्वारा की जानेवाली व्यवस्था तथा

उनके सम्पादक मण्डलमें भारतीय व्यवसायिक-वर्गके बड़े-बड़े लोग शामिल थे। जिस दिन उनका जन्म हुआ, करीब-करीब उसी दिनसे उ ई भरपूर विज्ञापनका और प्रकाशके योग्य साहस संस्थाका आशासन मिला जुड़ा था। और इन सबसे बड़ी बात यह थी कि उनके साधन भी बहुत अच्छे थे—पत्रकार जगतके चुने हुए काबकला और प्रचुर धन। किन्तु इन सबके बावजूद पत्रोंके अस्तित्वकी रक्षा नहीं की जा सकी।

परिवार द्वारा उन्नायित पत्र, जिसका एक विशिष्ट उदाहरण मराठा का 'दि हिन्दू' है, अपने वगका निराशा ही होता है। उसका अन्तर्भाव हो माना जाना चाहिये। 'हिन्दू' का यह बड़ा भारी सीमाश्रित था, जैसा बहुत कम देशमें आता है, कि उसके जितने भी सम्पादक स्वामी हुए वे सब एक ही परिवारके थे और उन्होंने बड़े परिश्रमसे पत्रका अभिरक्षक कर उसे उसके वक्तमान आकार, रूप और स्थितिमें पहुँचाया।

प्रबन्धकोंके मुख्य कार्य वे हैं—(१) पत्रका आरम्भ करनेके लिए प्राथमिक पूँजी जुटाना—या तो खुद अपनी पूँजी देकर या फिर किसीके साथ साझेदारी कर, या संयुक्त स्वयंसेवक बनाकर अपना धन किसी राजनीतिक दल द्वारा इस कामके लिए अलग कर दिये गये कोष से लेकर, (२) पत्रके लिए कार्यालयकी स्थापना करना; (३) अच्छे छापाखानेमें छापाईकी व्यवस्था करना या अपना छापाखाना खोलना (४) अक्षराली कागज बराबर मिलत रहनेका निश्चित प्रबन्ध करना, और (५) सम्पादन, मुद्रण प्रकाशन, प्रचार एवं विज्ञापनका काम करनेके लिए सुयोग्य कर्मचारियोंकी नियुक्ति करना।

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उससे स्पष्ट हो जाना चाहिये कि ऐनिक पत्रके उद्योगमें सफलताकी निश्चित आशाके लिए इशरात पैदा, अच्छा छापाखाना और अच्छे कर्मचारियोंकी नियुक्ति ही पथात नहीं है। सबसे बड़ी आवश्यकता इस बातकी प्रतीत होती है कि मनुष्य और रुपये-पैसेके इन साधनोंके कामका, एक अभिनेदार और सुयोग्य व्यक्तिके निरीक्षणमें, ठीक ढंगसे सम्पन्न तथा एकीकरण हो। इस

पाठ—कैदक पक्षी-झिली जनता तक भी—नहीं पहुँच सकता। अंग्रेजी पत्रोंमें अभी तक सबसे अधिक प्रचार-संख्या 'ग्रहम्ब ऑफ इण्डिया', 'स्टेट्स मैन', 'हिन्दू', 'हिन्दुस्तान ग्राहम्ब' और 'अमृत साप्ताहिक' की रही है किन्तु यदि क्षेत्रोंके अनुसार इनकी प्रचार-संख्याका अपेक्षा-कन किया जाय तो पता चलेगा कि कुछ पत्र क्षेत्र-विशेषमें तो अधिक लोकप्रिय हैं किन्तु अन्य क्षेत्रोंमें उनका प्रचार बहुत कम है। भारतके स्वतन्त्र होनेके बादसे देशी मापकोंके पत्र अपना उचित स्थान प्राप्त करते जा रहे हैं। अंग्रेजी का गौण स्थान दिने अपनेसे तथा मापकोंके आधारपर अधिकाधिक ग्रान्तोंका निमाण होने पर उनका महत्व घटनेके बजाय बराबर बढ़ता ही जायगा। राष्ट्रमापकों परफर हिन्दीके अभिवृद्धि कर दिने अनन्त यह बात ताफ दिलाई जाती है कि हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाओंका सर्वाधिक बहुत उज्ज्वल है और अंग्रेजीके बाद ये पत्र ही सारे देशमें प्रचलित होनेका बौद्धा-पाठ्य दावा कर सकेंगे।

महाँ यदि हम कुछ सामयिक पत्रों, विशेषकर कुछ विशिष्ट विषयोंके पत्रोंके, का प्राचा अंग्रेजीमें निकलते हैं, प्रचारके सम्बन्धमें भी दो शब्द कह दें, तो यह असंगत न होगा। उदाहरणके लिए अंग्रेजीमें प्रकाशित होनेवाले किसी आर्थिक या वित्तीय विषयोंके पत्रको लें लीजिये। उसकी माहक संख्या ४-६ हजारसे अधिक नहीं हो सकती; क्योंकि अंग्रेजी जाननेवाले ही, और उनमें भी केवल बही किन्हीं विश्व सम्बन्धी विषयोंमें दिलचस्पी हो, उसे पढ़ सकते हैं। इनमें भी केवल ये ही इस मेंग सकते हैं जो इस तरहके पत्रोंके अपेक्षाकृत अधिक मूल्य दे सकनेकी क्षमता रखते हों।

भारतमें पत्रोंकी प्रचार-संख्या अधिक न होनेका एक और बाधक सारे देशमें एक सिरसे दूसरे सिर तक पैछे हुए पुस्तकाओं तथा बापना क्योंकि जान है। बहुतसे लोग जो इन पुस्तकाओंमें जाते हैं, विशेष रूपसे सभरेके या सामके समानाएव पढ़ने जाते हैं और इससे पत्रोंके प्रचारपर प्रतिकूल प्रमाण पड़ता है। इसी तरह एक ही अक्षरारत हो,

रूपमें समर्पित प्रतिमों (स) भी कम कर दीजिये। वात्सर्व यह हुआ कि विशुद्ध या वास्तविक प्रचार-संस्था सूत्र रूपमें इस प्रकार रसी जा सकती है—'छ—यिना वि प्र स'।

यद्यपि विशुद्ध ग्राहकसंस्थाको ही विज्ञापनदाता अपना आधार मानते हैं, फिर भी अक्सर 'समस्त पाठकसंस्था' को भी यथेष्ट या समान महत्त्व दिया जाता है। उदाहरणके लिए प्रथम श्रेणीके व्यावसायिक या व्यापारिक पत्रोंमें, जिनका मुख्य अधिक होता है, विज्ञापन-दाता प्रायः वह हिसाब लगानेका प्रयत्न करता है कि प्रत्येक मंकके पाठकोंकी सम्भावित संख्या क्या हो सकती है। कितने ही ऐसे पत्र हैं जिनके अंककी एक एक प्रति १०-१ या १२-१२ व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है। जितनी प्रतियाँ कुछ बिकी हों उतनेमें प्रत्येक प्रतिके पाठकोंकी संख्याका गुणा करनेसे 'समस्त पाठकसंस्था' प्राप्त की जा सकती है। यहाँ एक बात और कह देनी चाहिये। केवल यही हेतुना आवश्यक नहीं है कि किस पत्रके कितने पाठक हैं बल्कि पाठक किस काठिके हैं, कितने प्रभावशाली व्यक्ति हैं, यह भी विचारणीय है; विशेषकर व्यावसायिक, वित्तसम्बन्धी तथा अन्य विशेष विषयोंके पत्रोंके लिए।

सन् १९४९ तक किसी समाचारपत्रकी ठीक ठीक प्रचारसंस्था जाननेका कोई उपाय न था किन्तु उस वर्ष ए. बी. सी.—अर्थात् आन्डिड न्यूरो ऑफ सरकुलेशन—के स्थापित हो जाने तथा समाचारपत्रों सम्बन्धी अन्य पुस्तक (ईवर बुक्स) एवं निदेशिकाओं (माइरोकटरोज) के प्रकाशित होने लगनेसे अब विशुद्ध ग्राहकसंस्थाके निश्चिनीय आँकड़े प्राप्त करना मुश्किल नहीं है। यदि लोगोंका इन आँकड़ोंपर विश्वास करना अभीष्ट हो तो इस कार्यके लिए इस तरहकी कोई स्वतंत्र संस्थाका होना आवश्यक है, जैसी कि अमेरिका तथा ब्रिटेनमें है, जहाँ एक समय (विज्ञापन प्राप्त करनेके लिए) बड़ी बड़ी प्रचारसंस्थाका हटा दावा करनेकी जाह सी पड़ गयी थी। कहते हैं कि अमेरिकामें इन आँकड़ोंको प्रकाशित करनेकी पहली बार कोशिश की गयी, तब कितने ही प्रकाशकोंपर गलत

आठ-पासके स्थानोंमें पत्रका वितरण करनेका जिम्मा ले लेती हैं। (इनमें एक दो मण्डलियों तो बृहत्तर सम्प्रदाई शहरकी जगहों तक अपनी वितरण-व्यवस्था फैलाये रखती हैं।) प्रचार व्यवस्थापकमें इतनी योग्यता होनी चाहिये कि वह इस बातका निर्णय कर सके कि सबसे अच्छी पत्रवाही कौन है और उसीका चुनाव वह करे।

इसके सिवा अलखार बेचनेवाले छद्मके भी होते हैं जो शहरके जन संकुल भागोंमें घूम-घूमकर, विद्योपकर दफ्तरके कामके समय, या जम्मे मन्त्रके अङ्गुपर जा जाकर अलखार बेचा करते हैं। प्रचार-व्यवस्थापक का वह काम है कि वह इनमें जो सबसे ठेक हों, ऐसे छद्मकोंपर नजर रखे और उन्हें कुम्भकर अपना काम निकाले। फिर कुछ मण्डलोंको बेतनपर नियुक्त करना या पत्र पहुँचानेवाली गाड़ियों किरायेपर ठग करना भी आवश्यक हो सकता है, जिससे दूर-दूरके ऐसे स्थानोंमें रहने वाले महावपूष व्यक्तियोंको भी अलखार मिल सके जहाँ ट्रेनवे, ट्रामवे या सबसे पत्र भेजनेकी व्यवस्था आसानीसे न हो सकती हो। इस सारी व्यवस्थाको हम उसका स्थानीय वितरण व्यवस्था कह सकते हैं।

जितनी प्रतियाँ बाहर भेजनी होती हैं उनके सम्बन्धमें किसी भी अच्छे प्रविष्टि पत्रके प्रचार-व्यवस्थापकके पास प्रत्येक नगर तथा ग्रामके माहकोंकी सुवर्णीकृत तथा सम्पक् रूपसे अनुक्रमित अद्यावधिक सूची तैयार रहनी चाहिये और उसे प्रयत्न करना चाहिये कि प्रेषितम्ब स्थानोंके छिपे जहाँ जितनी प्रतियोंकी आवश्यकता हो, उतनी प्रतियाँ पाठावाचके छिमाविधिप्र जा साधन उपलब्ध हों,—बस रेल स्टेशन या विमान—उनसे तुरन्त भेज दी जायें।

जहाँ जहाँ हवाई जहाजसे प्रतियाँ भेजनेकी माँग प्राप्त हो वहाँ वहाँ उन्हें प्रेषित करनेकी ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये जिसमें कोई गलती न होने पाये और इस बातका भी ध्यान रखना चाहिये कि प्रतियाँ हवाई जहाजके पहुँचते ही ले ले जायें और अधिकतम उनका यथागुरुत्व वितरण कर दिया जाय। उन पत्रोंके सम्बन्धमें जिनकी उत्तरण अम्ब रहे

भारतीय पत्रकारकला
देखें या समझें या नना लेना चाहिये किन्तु व्यवस्था-विभाग काम
उठा सके।

प्रचार-व्यवस्थापकका एक काम अपने मातृभाषा पाठकों तथा मातृभाषा
पाठकोंके हाथ पत्र बंधकर उसकी वह कोप्ति देना है कि समाचारोंकी
हस्तित तथा सम्पादकीय विचारोंकी हस्तित उसीका पत्र सबसे बढ़िया है।
पत्रके काळोंमें स्थान सुरक्षित करनेवाले (विज्ञापनदाता) जानते हैं
कि प्रति सेकंडा किन्तु व्यक्ति द्वारा, विचार अपना पन्ना मेन्ते पढते
हैं, उसीसे पता चलता है कि पत्रका प्रचार पूरा सन्तोषजनक है या
नहीं। पुराने माहकामे प्रतिशत अधिकसे अधिक व्यक्ति अपना पन्ना
पिरेसे मेज ह, यह देखते रहना प्रचार व्यवस्थापकका ही काम है।

नये पाठक और माहक प्राप्त करनेके लिए प्रचार व्यवस्थापकको
यह बात बराबर दिलाते रहना चाहिये कि पत्र हमेशा उपयोगी सामग्री
मिलती रहेगी। इसके लिए प्रमाण देनेकी आवश्यकता है। केवल मुँहसे
कह देनेसे काम न चलेगा। केवल दलीलें बलपर विज्ञापन तथा नये
माहक प्राप्त किये जा सकते हैं। इसलिये प्रचार व्यवस्थापकको अपने
पत्रकी सभी महत्वपूर्ण बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये किन्हीं बात
कर, समझाकर वह पत्रकी विपरीत बड़ा सके।

विज्ञापन बढ़ानेका प्रयत्न करनेवाले प्रचार-व्यवस्थापकको हमेशा नये
विस्तृत विज्ञापन (माहक) और प्रचार-संख्या प्रस्तुत करनेके नये-नये
नाटकीय ढंग सोचते रहना चाहिये ताकि जो लोग देखना चाहें कि
पत्र विशेषका प्रचार किस ओर या किस वर्गमें पढ़ा जा रहा है वे देख
सकें और अपनी तलस्वी कर सकें।

विज्ञापन

यदि प्रचार ही समाचारपत्रकी ताँत और उसकी जान है तो विज्ञापन
पत्र समाचारपत्र की मकनकी मेहराबमें जानवाला बीचका फर है।
'इष्टित' एडवरटाइजिंग नामक पुस्तकके लेखक तथा विज्ञापन-कलाके
माम्य विशेषज्ञ जान ह० कनडीके कथनामुसार "विज्ञापन आर कुछ नहीं,

टाइम्स ऑफ इण्डिया' के बत मान सम्पादक फ्रंक मारेडने ठीक ही कहा था कि "विज्ञापनदाता न रह तो समाचारपत्र चल नहीं सकते।" जिस तरह अपनी अधिकांश आमदनीके लिए समाचारपत्र विज्ञापनदाताओंपर अवलम्बित रहते हैं, उसी तरह विज्ञापनदाता भी उन क्लबों या उन सेवाओंका विज्ञापन करनेके लिए जिन्हें वे लोगोंके हाथ बेचना चाहते हैं विज्ञापनका सच प्रस्तुत एवं सर्वोत्तम साधन समझकर किसी अच्छे प्रचारवासे पत्रका सहारा लेनेको विवश होते हैं। विज्ञापनदाताओंका यह बात हमेशा स्मरण रखनी चाहिये कि विज्ञापन करनेके कितने ही नये-नये साधनोंके निकल आने पर भी समाचारपत्रका स्थान अब भी सबसे आगे है। सन् १९५१ में अमेरिकामें विज्ञापनका सबप्रथम साधन समाचारपत्र ही था, जैसा कि विज्ञापनके विभिन्न साधनोंपर किये गये स्वचके निम्नलिखित आँकड़ोंसे स्पष्ट है—

समाचारपत्र	१,११,८६,५२,६२९ रुपये
सामान्य पत्रिकाएँ	८८ ६४,५८,१०१ ,,
रेडियो	६१ ७१,७६ ३७९ ,,
टेलीविजन	४६,९८,६८, २१ ,,

आन पड़ता है कि ब्रिटेनमें भी विज्ञापनका सर्वोत्तम साधन समाचार पत्र ही समझे जाते हैं, क्योंकि सन् १९९२ के प्रथमाद्धमें विज्ञापनके समस्त साधनोंपर जितना खर्च हुआ, उसमेंसे १० करोड़ १८ लाख ७१ हजार रुपये केवल समाचारपत्रोंमें दिये गये विज्ञापनोंपर खर्च हुआ। कहा गया है कि १९९१ की उसी अवधिकी तुलनामें यह व्यय १७ प्रतिशत अधिक हुआ। तुर्माग्यवश आपने देखके ऐसे तुलनात्मक आँकड़ोंके उपलब्ध नहीं हैं फिर भी यह जानकर सन्तोष होता है कि बम्बरेमें 'इण्डियन सोसायटी ऑफ एडवरटाइजर्स' नामक जो संस्था हालमें ही स्थापित हुई है उसने ऐसे आँकड़ोंका संग्रह करना अपना पहला काम घोषित किया है।

विज्ञापनदाता अब सभी जगह अधिकाधिक मात्रामें अपना महत्व

संस्था द्वारा विज्ञापन छपवाना ही अस्तित्वगत्य अधिक सम्भवदायक होता है। कुछ मामलोंमें तो अपने विज्ञापनोंकी देखरेख स्वयं करनेकी प्रवृत्ति व्यावसायिक संस्थाओंमें इस कारण उदय हुई कि ये विज्ञापनक संस्थाओंका दिया ज्ञानवाञ्छा कमीशन (वर्चन) अपने लिए ही बचा लेना चाहते थीं, किन्तु जबतक विज्ञापन छपवानेका काम इतना बढ़ा-बढ़ा न हो कि उसके लिए पूर्ण रूपसे सक्रिय एक पूरक विभाग रखना आवश्यक हो, जबतक यह प्रयोग करनेसे कोई काम नहीं।

विज्ञापनक एजेंट या विज्ञापनक संस्थाएँ विज्ञापन भेजवानेके बढ़ते समाचारपत्रोंसे कमीशन जिवा करती हैं। ये एजेंट या ये संस्थाएँ विज्ञापन इकट्ठा ही नहीं करती, बल्कि अन्य कामोंके साथ यह भी करती हैं कि विज्ञापनको ठीकसे सजा देना जहाँ जरूरत हो वहाँ ब्लॉक बनवा देना, ठीक रंगके अलवारका चुनाव करना और उन्हें इस बातकी हिदायत करना कि कौनसा विज्ञापन किस स्थानपर रखा जाय, विज्ञापन दाताओंसे प्राप्ति (बिलों) का रूपया वसूल कर शोध ही—भार यह काम बड़ी जोखिमका तथा जिम्मेवारीका होता है—उन उन समाचार पत्रोंको चुका देना जिनमें विज्ञापन छपवाया गया हो।

विज्ञापन-संग्राहक दो तरहके होते हैं—मान्य तथा अमान्य। मान्य संग्राहक (एजेंट) वे हैं जिन्हें समाचारपत्रोंकी संस्थाओंने—जैसे इण्डियन एण्ड ईस्टर्न न्यूज पेपर सोसायटी—मान्यता दी हो। इनके अम्मीकी अवेरेंस अधिक अच्छी चालें या रियायतें मिलती हैं—कमीशन उनसे अधिक जाने। प्रतिशत तथा पत्रोंकी व्यवस्था विभागको रुपयेकी अवधिगीके लिए अधिक समय (९० दिन) मिलता है*।

प्रत्येक समाचारपत्रमें विज्ञापनोंकी देखरेखके लिए पूरक विभाग होना चाहिये। इस विभागका अधिपति होगा विज्ञापन-अवधारणक। समाचारपत्र या मासिकपत्रकी कार्यश्रेण और रूप-रस आदिसे इसके कर्तव्योंका पनिड सम्बन्ध है।

* जब यह अवधि ७५ दिवस कर दी गयी है।

चाहिये और उसके मिलने जुलने, बातचीत करने आदिका डंग धानना दायक तथा फुलका छेनेवाला होना चाहिये। योहेमें उसे अपने पत्रकी बकायत इस तरह करने चाहिये जिससे किसीकी भी संसख्ये हो जाय और जो माली ग्राहक विरोधी रुख धारण किये हो या हिचकिचा रहा हो वह भी समुचित आश्वासन तथा प्रोत्साहन पाकर अपना विचार बदल दे।

विज्ञापन छपवानेकी प्रवृत्ति बराबर बढ़ रही है। भारतमें उसका भविष्य उठना ही महान् है जितना पत्र-पत्रिकाओं आदिका। जिस तरह हमें पत्रकारको प्रशिक्षण देनेकी आवश्यकता है, उसी तरह हमें अपने युवकाका विज्ञापन सम्बन्धो नीकरियों या काबोंके लिए भी प्रशिक्षित करना चाहिये। यह ऐसी चीज है जिसकी ओर केवल समाचारपत्रों, विज्ञापनदाताओं तथा विज्ञापन संस्थाओंको ही नहीं बरन् शिक्षा विद्यार्थी, माता-पिताओं तथा देशके युवकाको भी ध्यान देना चाहिये।

इस छोटेसे अध्यायमें कागज़की इन घासाभोंका थपैरेबार वर्णन करना सम्भव नहीं। फिर भी प्रारम्भिक सिद्धान्तोंकी ज़रूरत यहाँ की जा सकती है।

अपमान-लेख तथा मानहानि ✓

मानहानिकर अपराध हमेशा ही समाचारपत्रों द्वारा किया जानेवाला मुख्य अपराध माना गया है। यह अपराध अधिकारोंके अन्तर्गत सब तरहके उच्छेदकर्मसे गुज़रता है जिसके लिए कोई समाचारपत्र दोषी ठहराया जाय। पत्रकारोंको आवेक्षित व्यक्तिोंकी प्रतिष्ठा और कीर्तिकी ज़रूरत करनी पड़ती है—चाहे वे तन्मकी बात लिख रहे हों, अभिक्रमण और आरोप कर रहे हों, सम्पादकीय टीका लिख रही कर रहे हों, स्वातन्त्र्य समाचार दे रहे हों, धीपक बना रहे हों या ऐसा ही अन्य काम कर रहे हों।

‘मानहानि’ अधिक व्यापक शब्द है जिसका प्रयोग उन अपमानजनक वस्तुओं या कथनोंके लिए होता है जो मौखिक रूपसे अथवा लेखके रूपमें दिये जा किये गये हों। किसीकी मानहानि करनेवाली जो बातें समाचारपत्रमें प्रकाशित की जाती हैं उन्हें ही हम ‘अपमान लेख’ (आइवल्) कहते हैं। अपमान-कथन (लेख) मौखिक रूपसे की गयी मानहानिकी ओर संकेत करता है।

‘अपमान लेख’ समाचारपत्रोंके लिए भयंकर मुख्य कारण होता है। किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें ऐसे झूठे और अपमानजनक वस्तुओंका प्रकाशित किया जाना ‘अपमान-लेख’ कहा जाता है, जो लिखा गया हो, छपा हो या संकेतों-चिह्नों द्वारा या किसी ऐसे रूपमें प्रकट किया गया हो जो स्थायी हो तथा जिसे प्रकाशित करनेके लिए कोई विधिक भीति न हो। उसके सम्बन्धमें यह समझा जाता है कि जिसके लिए वह प्रकाशित किया जाता है उनमें व्यक्ति विशेषके विरुद्ध अपरोप फैलानेका प्रयत्न किया गया है या उससे उसके स्वाध्याय, पद या राजस्वका हानि पहुँची है, या उसे दुःख, अपमान तथा उपहासका पात्र बनाया गया है अथवा इस तरह विचारधीन और अन्धे भाव

(५) वह घाहीके सम्बन्धमें ही दिया या किया गया हो ।

अपमानजनक वक्तव्य या कथन इन चार हिस्सोंमें बाँटे जा सकते हैं—

(१) धृष्टा, अवस्था या विरस्कारका भाव उत्पन्न करनेवाले व्यवहार उपहास करानेवाले;

(२) वे जिनके कारण समाजके भाग बाँटीसे दूर-दूर रहन या उसकी संगतिमें आनेसे बचनेका प्रयत्न कर

(३) पेशा हानि या परापर प्रभाव डालनेवाले

(४) व्यापार या कारोबारपर प्रभाव डालनेवाले ।

जिन वस्तुओंके कारण किसी व्यक्तिकी वैयक्तिक स्मृतिको क्षति पहुँच, उनसे उसकी ईर्ष्या होती है या भोग उससे छूटा करने लगते हैं, उसकी अपेक्षा करते हैं । यदि किसीपर बुराचार या दुस्स्वस्विकारका आरोप लगाया जाय और वह आरोप झूठा हो तो वह व्यक्ति ध्येयोंकी धृष्टा, अवस्था तथा विरस्कारका पात्र बन जाता है ।

किसी व्यक्तिके बारेमें झूठमूठ यह प्रकाशित कर देना कि उसने अपनी माताकी हत्या कर डाली है, किसी बँकका रुपया उड़ा दिया है, या यह कि वह चराही है, अपनी पत्नीको बहुत पीटता है, या यह कि वह गंभीर रूपसे भयानक किसी अन्य सम्बन्धमय रोगसे पीड़ित है, अथवा यह कि काह भीरव असली है, कोई बकील कानून नहीं जानता, कोई बेल नकली विकसित है,—यह सब अपमानकारी है ।

किसी व्यक्तिकी तुलना ऐसे किसी पक्षसे करना जिसकी भावना या विशेषता सम्बन्धमय धृष्टा उत्पन्न करनेवाली, उन्मत्त होनेवाली या गुस्सा दिखानेवाली हो—उदाहरणके लिए उस 'काही मेक', 'घातमें छिया लॉप', 'सिमार' या 'सुमार' कह देना—अपमानकारी है । इसी तरह किसी मासिक पत्रिकामें परिया मेककी कोई कहानी किसी सुविस्मृत सेलककी नामसे प्रकाशित कर देना, यद्यपि वह उसकी किसी दूर न हो, अपमानकारी समझा जाता है । समाचारपत्रमें कोई ऐसा वृत्तान्त प्रका

व्यंग्याक्ति

कुछ शब्द अपने दूसरे अर्थमें अपकीर्त्तिकर हो सकते हैं—अर्थात् अपने सामान्य अर्थमें यद्यपि वे अपकीर्त्तिकर नहीं होते किन्तु कभी-कभी विशेष अपमान-जनक अर्थोंमें उनका प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा कोई प्रकाशित लेख या वक्तव्य देखनेमें बिनाकुछ निरोप और अपकीर्त्तिकर अर्थोंमें रहित प्रतीत हो सकता है, फिर भी परिस्थिति-विशेषमें उससे किसी व्यक्तिकी कोर्त्तिको हानि पहुँच सकता है।

अन्य अपमान-लेख

व्यक्तियोंके जन्म, मरण, मँगनी, विवाह आदि सम्बन्धी गलत सूचनाएँ अपमान-जनक हो सकती हैं, उदाहरणके लिये किसी ठाँव कुख्यात सम्मान्त महिम्नके किसी भुत्र बाति या भुत्र फ्यातिके व्यक्तिके साथ विवाहकी सूचना। यदि किसीके नामके पहलेके अक्षर गलत हों, विदेशी अर्थ या नामकी अशुद्ध प्रतनी छाप हो जाय, तो इससे किसी अन्य व्यक्तिका घातन होकर उसका अपमान हो सकता है।

इसलिये यह बहुत ही जरूरी है कि समाचारोंका समग्र करते समय और उनके सम्पादनमें ठाँव खरकी सावधानी रखी जाय जिससे किसीका नाम, विवरण आदि गलत न जाने पाये। विवरण या कथानकर्त्ता अन्तर्वस्तुमें अपकीर्त्तिकर बातका होना कितना बुरा है, उतना ही शीघ्रक पत्रियोंमें ठहरा रहना बुरा है। अपमानजनक शीर्षक पत्रियों देनेसे सम्पादकीय विशेषाधिकार समाप्त हो जानेकी अवकाश रहती है। समाचार पत्रोंमें शीघ्रक-पत्रियोंके सम्बन्धमें थोड़ी सी खतरा उठानेकी प्रवृत्ति रहती है जिसके कारण किसी भी दिन संकट उपस्थित हो सकता है। किसीके चित्रके नीचे गलत पत्रियों देना भी अपमानजनक हो सकता है। किसी भी अपमानजनक विवरणके साथ 'कहा जाता है कि' या 'संभव मिथी है कि', 'सुना गया है कि' आदि शब्द रख देनेसे ही बचाव नहीं हो जाता। उससे केवल हरबानमें कमी हो सकती है। अपमान लेख यदि लोकबार्त्ताके छद्म रूपमें रखा जाय तो इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं।

किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्तियोंपर भिनकी निरिपठ रूपसे पहचान की जा सके, कोई अभ्यारोप किया गया हो। यदि नामका उल्लेख न भी किया गया हो तब भी यह साबित करना होगा कि अभ्यारोप किसी खास आदमी या आदमियोंको कल्पित किया गया है भिनकी शिनाख्त की जा सकती है। अपमान-लेखके सम्बन्धमें इपदा या वह उद्देश्य जिससे शब्द लिखे गये हों, सामान्यतः महत्वहीन समझ जाया है।

यदि लेखके कुछ छिल देनेसे सम्मुख बादाकी कीर्तिपर आघात हुआ है, तो वह दापी है, मते ही उसका इपदा ऐसा करनेका न रहा हो, और जब उसने वे शब्द लिखे थे तब उसकी मनमें ऐसी कोई बात न रही हो। प्रकाशन मित्र तथा अपकीर्तिकर हो सकता है, यद्यपि वह संयोगसे या कथनकी सचाईमें विश्वासके कारण भनयने ॥ गया हो। हाँ, यह बात अवश्य है कि इस स्थितिमें हरमना बदा दिने अपनेमें इच्छे बड़ी सहायता मिलती है। जो समाचारपत्र अपमानजनक बात प्रकाशित करता है, कुछ जोखिम उठाकर ही ऐसा करता है।

पचावकी दलीलें

अपमान-लेखके किसी मामलेमें पचावकी ये मुख्य दलीलें उपस्थित की जा सकती हैं—

- (१) कल्पकी सत्यताका प्रमाण।
- (२) विशेषाधिकार (परम या अबाधित तथा मयाधित)
- (३) उचित टीका या आलोचना।

विशेषाधिकार—समाचारपत्रोंको कोई अबाधित या परम विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। यह केवल इन लोगोंपर लागू होता है—विधान मण्डलके सदस्य, बकीय, गयाह या बादी प्रतिवादी, या राज्यके कार्य या उनकी संयोजनाएँ (कम्यूनिकेशन)। प्राथमिक दृष्टिसे इनके कल्प आदिके प्रकाशनका अबाधित अधिकार समाचारपत्रोंको नहीं है।

“इनकी काररबाइयोंकी जो रिपोर्टें पत्रकार देते हैं, उन्हें वह उम्मुक्ति

जाय उसे भी उसे मुन लेने या जान लेनेमें कोई स्वार्थ सिद्धि या कर्त्तव्य की बात न हो। इस पारस्परिकताका होना आवश्यक है।

जहाँतक समाचारपत्रोंका सम्बन्ध है, इस मर्यादित विशेषाधिकारके प्रयोगका समस्त महत्त्वपूर्ण अवसर यह है जब उन्हें संसद या विधान मण्डलोंकी कम्पका न्यायालयोंकी काररबाह छापनी पड़ती है। जनताको यह जाननेका अधिकार है कि न्यायालयोंमें या विधान मण्डलोंमें क्या हो रहा है।

विधिक नियम यह है कि जब उपरि उंगले गटित न्यायिक अधिकरण (जुडिसनल ट्रिब्यूनल) के सामने, जो कुछी अद्यक्षमें अपने क्षेत्राधिकारका प्रयोग करे, किसी मामलेपर न्यायिक काररबाह हो तो उक्त अद्यक्षके सामने जो कुछ कहा-मुना जाय, उसकी निष्पत्ति और सही रिपोर्ट, बिना किसी द्वैपभावके प्रकाशित करना विशेषाधिकारके अन्तर्गत आता है (उक्त रिपोर्ट प्रकाशित करनेका विशेषाधिकार समाचार पत्रोंको प्राप्त है) जब पहले पहल किसी शिकायतके सम्बन्ध या बादपत्र की रिपोर्ट प्रकाश की जाती है, तब उसे प्रकाशित करनेका विशेषाधिकार पत्रोंको नहीं होता। बहुतसे अवसर अवसर यह महत्त्वपूर्ण नियम भूख जाते हैं और कभी-कभी उन्हें इसकी कीमत भी चुकानी पड़ती है।

द्वैपभाव—बन्द कमरेमें उपरि उंगले की गयी अद्यक्षकी काररबाहका विवरण प्रकाशित करना, चाहे यह किन्ना ही निष्पत्ति एवं सत्य क्यों न हो, विशेषाधिकारकी परिधिमें नहीं आता (अतः समाचार पत्र भी उसे नहीं छाप सकते)। किन् काररबाहोंकी रिपोर्ट प्रकाशित करने का विशेषाधिकार किसी प्रकाशकको प्राप्त हो, उसके सम्बन्धमें यदि यह पता चल जाय कि उसने अनुचित उद्देश्यसे प्रेरित होकर ऐसा किया है, तो उसका यह विशेषाधिकार या विशेष मुविधा समाप्त हो जाती है। मर्यादित विशेषाधिकार एक प्रमाण मिलते ही समाप्त हो जाता है। जो वक्तव्यादि मर्यादित विशेषाधिकारके अन्तर्गत प्रकाशित किये जाय हैं, जनताके हित तथा समाजके कल्याणकी दृष्टिसे काफ़ी उनकी रक्षा करना

सनसनीलेख या अतिरंजित हो तो विशेषाधिकार समाप्त हो जा सकता है।

उदाहरणके लिए ऐसी शीर्षक-पंक्तियाँ न देने चाहिये—‘हत्याए पकड़ा गया।’ शीर्षककी पंक्तियोंमें ऐसे शब्दोंका प्रयोग करना—‘विश्वासघातक’, ‘झूठा’, ‘बेईमान’ या ‘सम्पन्न’ आदि—विवरण देनेके अन्तर्गत नहीं आता, वह तो टीका टिप्पणी करना हुआ। विवरणसे यह प्पनि न निकलनी चाहिये कि पकड़ा गया आदमी (अवस्थामें) अपराधी है। सुकदमको मुनबार्डके वृत्तान्तमें भी कोई टीका न होनी चाहिये। फेरफार हो जानेके बाद ही टीका-टिप्पणी की जा सकती है।

एक गवाहका प्रति-परीक्षण करते हुए किसी बकीअने पूछा—“जिस कम्पनीके प्रतिनिधि आप है, क्या वह शहरमें सबसे बड़ी नहीं है?” गवाहने जवाब दिया—जी हाँ। इसपर विरोधी पक्षका बकीअ बोला उठा, ‘और वह शहरमें सबसे अधिक बेईमान भी है।’ यह अभ्युक्ति कम्पनीके लिए अफकीचिकर समझी गयी, अदालतकी काररवाहके विरयसे इसका कोई सम्बन्ध न था और यह बकीअके कसबसे बाहरकी चीज थी। इस तरहके कथनों या अभ्युक्तियोंको प्रकाशित करनेकी छूट कानून नहीं देता। (रहीमवसूला बनाम बन्नाखान, ५१ अखारा ५०९)।

पत्रकारको अपनी ओरसे कोई बात जाहक़र, जिससे टीका संभव हो, रिपोर्टको मनोरंजक बनानेके प्रयत्नमें से बचना चाहिये। पत्रोंके तबादलाताओंको अक्सर पहली सूचना सम्बन्धी रिपोर्टें आरोपपत्र, घपघपत्र, वादपत्र आदि देखनेकी अनुमति दे दी जाती है। उनका प्रयोग केवल नाम, पता या ऐसी ही अन्य बातें ठीक करनेके लिए किया जाना चाहिये। छाप गये विवरणोंमें इनका निवेश नहीं देना चाहिये, जबतक कि वे अदालतमें पड़े न जायें और नियमों साक्षरके रूपमें न प्रस्तुत किये जायें।

सम्पर्ककी काररवाहका प्रकाशित किया जाना उठी खरपर रखा गया है जिसपर मध्यवर्गकी काररवाहका प्रकाशन। छपी गयी रिपोर्ट पक्ष

मुद्रक का सबसे उच्चतम रतन है जिससे एक तरफ़ ता अपकीर्ति फैलाने और दूसरी तरफ़ स्वतन्त्रतापूर्वक सार्वजनिक कपसे खर्चा करनेके मुहूर्त अधिकारसे नीति का सुवर्णपत्र अपनाया जा सकता है।” निष्पक्ष आलोचना का आवश्यक तत्व यह है कि जिस विषयकी आलोचना की जाय वह सार्वजनिक हितका विषय हो। उसे स्पष्ट रूपसे कथित तर्कोंपर आधारित एक तरह का मानसिक मूल्यांकन होना चाहिये और कुछ तथा भ्रष्ट उद्देश्योंके किसी तरहके अन्वयरोपसे मुक्त होना चाहिये। किसी व्यक्तिकी सचमुच जा राय हो, उसीका परिणाम टीका टिप्पणीके रूपमें प्रकट होना चाहिये। राय होयते उसे मुक्त होना चाहिये। टीका-टिप्पणी करनेका विधेयाधिकार लोकहितकी दृष्टिसे ही प्राप्त होता है, निजी भावनाओंकी परितुष्टिके लिए नहीं। किसी व्यक्तिकी आलोचना न कर उसके कार्य या व्यवहारकी आलोचना करनी चाहिये। आप अपने विषयकी धन्यवादें उड़ा दे सकते हैं, मगर ही उससे किसीकी कीर्तिपर आपात होता है, फिर भी ऐसी आलोचनाके लिए जो सोमा बाँध दी गयी है, उसके भीतर ही आपका रहना चाहिये।

“कोई छिद्रान्वेषण या गाँधी-गाँधीजको ढँकनेके लिए ही आलोचनाका प्रयोग न होना चाहिये।” आलोचना केवल उन्हीं बातोंकी की जाती है जिनकी ओर सवसाधारणका ध्यान जाता है या जिनके सम्बन्धमें सार्वजनिक टीका-टिप्पणीकी आवश्यकता होती है। वह किसी सार्वजनिक कार्यकर्ताके निजी जीवनतक उसका पीछा नहीं करती और न उसके पारिवारिक मामलोंके ही भीतर घुसनेका प्रयत्न करती है।

अपकीर्ति

पूर्वके अनुच्छेदोंमें हमने नागरिक अपराधके रूपमें ‘अपमानलेख’ की चर्चा की है। अपकीर्ति फैलाना राज्यके विरुद्ध किया जानवाला अपराध भी मना जाता है और भारतीय दण्डनीति संहिताके अनुसार उसमें दण्ड दी जा सकती है। संहिताकी धारा ४९९ में अपकीर्तिकी परिभाषा

व्यवस्था है। यह ठसठसनीय है कि कुरमानेकी रकमकी कोई सीमा नहीं यथानी गयी है।

न्यायालयका अवमान

समाचारपत्रके कामाख्यामें किये जानेवाले विभिन्न प्रकारके कार्योंके तिलसिलेमें होवानी या पीजवारीके उन मामलोंके विवरण भी जो अदालतमें प्रस्तुत किये जानेवाले हैं या जिनपर विचार होना अभी जारी है—प्रकाशित किये जाते हैं। कभी-कभी समाचार सप्ताह या सप्ताहकीय लेखादि छिडानेवाले व्यक्ति मामलोंकी मुनवाई शुरू होनेके पहले ही सख्तोंकी झैरेवार खचा करते हैं। जिन प्रमाणोंके पेश किये जानेकी सम्भावना हो, उनकी कसपना कभी-कभी पहलेसे कर ली जाती है और वे उनसनीमेव हीपकोंके साथ प्रकाशित कर दिये जाते हैं। कभी-कभी ऐसे सम्पादकीय लेख या टिप्पणियाँ लिख ली जाती हैं जो मामलोंके एक पक्षका अनुचित रूपसे समर्थन करती हैं और एकाध बार न्यायाधीशों एवं न्यायालयोंकी स्वायत्तीयताके सम्बन्धमें खदेह प्रकट किया जाता है और यही समाचारपत्रोंके लिए संकट उत्पन्न होनेकी सम्भावना रहती है।

‘न्यायालयका अवमान’ इस पदार्थकीकी व्याख्या करना बहुत कठिन है। फिर भी सामान्यता ‘अवमानकी अवस्था’ में ऐसा व्यवहार आता है जिससे विधि अथवा कानूनके अधिकार अथवा प्रशासनके अनादर या विरुद्धताकी प्रवृत्ति उत्पन्न होनेकी सम्भावना हो अथवा जिससे किसी प्रतिपादी या उनके गवाहोंके विचारों, धारणाओंमें हस्तक्षेप हो या उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े। यदि कोई ऐसा काम किया जाय या ऐसा लेखादि प्रकाशित किया जाय जिससे किसी न्यायालयका अवमान होने या उसका प्राधिकार पट जानेकी सम्भावना हो, या म्याबकी साधारण काररवाईमें या न्यायालयकी विधिक कार्यप्रवृत्तिमें बाधा पड़े या हस्तक्षेप हो तो इसे ही ‘अवमान’ या ‘अवस्था’ कहेंगे। अवमान दो प्रकारका होता है—(१) न्यायालयके सामने ही किया गया अवमान, तथा (२) अप्रत्यक्ष अवमान यानि वह जो न्यायालयके बाहर किया जाय।

स्वयं न्यायाधीश बननेकी, इस प्रकार जबरन न्यायालयका कार्यभार सौंपा देनेकी—चेष्टा न करो। विचाराधीन मामलेके सम्बन्धमें न्यायालयके बाहरकी कोई राय प्रकट न करनी चाहिये। समाचारपत्रका ऐसा अनुपेक्षित (पेर) अवमान समझा जायगा, जिसका प्रभाव वादपर टीका करने जैसा हो सार ओ उसके विचाराधीन रहते हुए किसी एक प्रकाशित किया गया हो, तथा जिससे किसी पक्षपर प्रतिकूल प्रभाव पड़े या पड़नेकी सम्भावना हो। इस बातका ध्यान होना ही चाहिये कि मामला अभी विचाराधीन है।

हर मामलेमें प्रश्न यह नहीं रहता कि जो चीज प्रकाशित की गयी है उससे न्यायमयस्थानमें सचमुच हस्तक्षेप होता है या नहीं, बल्कि यह कि उसकी प्रशंसा वा सम्भावना ऐसी है या नहीं। यदि आप अभिव्यक्ति (प्रीति), याचिकाएँ अथवा सत्य प्रकाशित करते हैं तो आपको ध्यान रखना चाहिये कि ये चीज दोनों पक्षोंकी छपी जायें, अन्यथा आपका कार्य 'न्यायालयका अवमान' हो जायगा।

'अमृतसागर पत्रिका' में व्यापारियोंकी एक संस्था द्वारा अन्ध लोगोंके अतिरिक्त एक तहसीलदारके भी विरुद्ध चलाया गया एक मामला ज्ञात था। बादीने बाबपत्रम ओ बात लिखी या 'पत्रिका में वे वास्तविक तथ्यके रूपमें छाप दी गयी, 'बादम कथित तथ्य' के रूपमें नहीं। इसपर तब न्यायाध्यक्षने यह टीका की कि समाचारपत्रोंपर इस बातका ध्यान रखनेकी विशेष जिम्मेदारी रहती है कि विचाराधीन मामलों के सम्बन्धमें, चाहे वे दीवानी हों या फौजदारीके, ऐसी कोई भी बात उनके स्वाम्योमें न छपने पाये जिससे किसी न्यायिक अधिकारी, न्याय सम्य, वा सम्प्रदायित गवाहके मनपर, जिनका इससे सम्बन्ध हो वा हो सकता हो, प्रतिकूल प्रभाव पड़ने वा पूर्वधारणा बन जानेकी आशंका हो।

जो वृत्तांत वा विवरण छपे जायें व पक्षपातपूर्ण न होने चाहिये और न उनमें ऐसी काट-छाँट हो कि अथका अनर्थ हो जाय। अपमान

किसी न्यायिक अन्वीक्षा के सम्बन्धमें कुछ किसनेका प्रयत्न करते समय काररवाई के बार प्रश्नोंका स्याछ रखना चाहिये, जो ये हैं—

- (क) न्यायिक अन्वीक्षा (विचार) के पूर्व,
- (ख) न्यायिक अन्वीक्षा के जारी रहते समय,
- (ग) निर्णय हो जानेके बाद,
- (घ) जब पुनर्न्याय-प्रायनापर विचार करना चाहू हो ।

कोई मामला किसी समय किस अवस्थामे है, यह अच्छी तरह जान लेना समाचारपत्र के कर्मचारियोंकी योग्यतापर जोर दिया गया है और इसमें सन्देह नहीं कि इसका ठीक ठीक पता लगा लेना उन लोगोंका कर्तव्य ही है । यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि न्यायालय के सामने होनेवाली काररवाईका सच्चा सच्चा हितान्त भी छापने के समाचारपत्र के अधिकारके साथ यह धर्म अभी हुई है कि उसे प्रकाशित करनेसे न्यायालय में मामलेमें निष्पक्ष विचार होनेमें कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़नेकी आशंका न हो । जिस मामलेपर अभी विचार हो रहा हो उसमें यदि कोई अभी दालिज की जाय तो उसे प्रकाशित करना उस हाजतमें अब मान सम्मत्त व्यवसाय, जब वह स्पष्ट रूपसे इस हण्डेसे प्रकाशित की गयी हो कि विचारपर उसका प्रतिकूल या अनुकूल प्रभाव पड़े ।

जब अदालतकी काररवाई हो रही हो, तब पत्रोंके लिए फोटो छेने-बाजोंको फोटो नहीं लेना चाहिये जबतक कि इसके लिए विशेष रूपसे अनुमति न दे दी गयी हो । न्यायाधीश कभी-कभी चित्र छेनेकी अनुमति दे देते हैं जैसा कि महारमा गांधीकी हत्याके समय किया गया था किन्तु सामान्यतः ऐसी प्रार्थना वास्वीकृत कर दी जाती है, विशेषकर फोटोबदारी मुकदमोंमें जहाँ कि छायाचित्रोंके प्रकाशित हो जानेमें गवाहों द्वारा अभियुक्तकी पहचान होनेके कार्यपर अनुचित प्रभाव पड़ सकता है ।

ज्वम्बधिर्त्रो द्वारा अकमान—ज्वम्बधिर्त्रो द्वारा ऐसी आलोचना या उपहास करना जिसका अन्त्य न्यायाधीश, याही प्रतिवादी या मामलेके विचारसे प्रत्यक्षतः सम्बद्ध अन्य व्यक्ति हो तथा जिसकी प्रकृति

मानवसूक्तकर उसे अपमानित करनेपर छा: मासकी साक्षी होव या १०००) तक डुरमानेकी, या एक साथ दोनोंकी सजा दी जा सकती है।

समा-याचना—पूण और विविध दृगकी समा-याचनासे अपमान की कसक दूर हो जाती है। समायाचना न करनेपर न्यायालयोंका कठोर रुझा अभिस्तय करना निश्चित है। समा मॉगनेसे इनकार करनेपर अपराधकी गुस्ता बढ़ जाती है जिसके लिए निरोधक दण्ड देना आवश्यक समझा जाता है।

एकान्तताका कानून

एकान्तताके अधिकारका प्रम, जहाँ तक समाचारपत्रोंसे उसका सम्बन्ध है, आजके समसामयिक जीवनकी एक नयी घटना है। उसके विधिक निर्बन्धनमें कोई अपमानजनक बात नहीं आती। एकान्तताका अधिकार मनुष्यके इस दायरेपर आधारित है कि यदि वह चाहे तो दुनियामें उसे इस तरह रखनेका अधिकार है कि कहीं भी उसका चित्र प्रकाशित न किया जाय उसके काम-रोजगारकी कोई बर्षा न की जाय, उसके सच्चे परोक्ष व दूसरोंके आचार्य न किये जायें या उसकी सनकोंपर हस्त-पत्रों, परिपत्रों, छत्तीपत्रों, सामयिक पत्रों या दैनिक पत्रोंमें कोई ठीका टिप्पणी न की जाय।

कान्टाकी ओरसे अक्सर इस बातकी धिक्कावत की जाती है कि पत्रकार लोग नागरिकोंकी एकान्ततापर आघात करते रहते हैं। 'ब्रिटिश समाचारपत्रोंकी रिपोर्ट' (रिपोर्ट ऑन दि ब्रिटिश प्रेस) में यह सुझाव दिया गया था कि इस सम्बन्धमें बहुत कुछ वांछनीय सुधार किया जाना चाहिये, विशेषकर पारिवारिक एकान्तता भंग करनेकी प्रवृत्तिके सम्बन्धमें।

“यद्यपि अक्सर भी रिपोर्टर लोग उन्मीषोन करनेसे बाज नहीं आते और भिन्न-भिन्न अंगुमतिके लिए या फरोसे देनेके लिए लोगोंको परधान किया करते हैं; वं उनके उषानोंमें या सेवाओंमें पुस आते हैं और उनके कोई समानार सत्य होनेके लिए हर तरहका दबाव डाला जाता है और

प्रकाशनोपर खर्ग होती है। यदि कोई प्रकाशन सार्वजनिक सञ्चारके लिए हानिकर हो और जिन लोगोंके हाथमें वह पड़, उनके मनको नोचि भ्रष्ट एवं पवित्र बनानेके लिए उसका वृथिष्ट प्रमाण पढ़नकी आशंका हो, तो वह अस्वीकृत प्रकाशन समझ आश्वास, जिसे कानून दबा दगा। अस्वीकृत विज्ञापनका प्रकाशित किया जाना दण्डनीय है। धार्मिक पुस्तकोंके अवतरण, जो अन्यथा दण्डनीय न हों, उस शास्त्रमें दण्डनीय माने जा सकते हैं जब वे दूधक् रूपसे, मूल प्रसंगसे हटाकर, छापे जावें। अपराधपर विचार करते समय खेसकके उद्देश्यका फल ठठाना असंभव होगा। प्रकाशकके सम्बन्धमें यह बात मान ही ली जायगी कि प्रकाशनके बाद भी स्वामाधिक परिणाम और प्रमाण उत्पन्न होता है, उन्हें उत्पन्न करनेका सचमुच उसका इच्छा रहा होगा।

फिर भी ऐसे गम्भीर, विचार पूर्ण प्रकाशन अस्वीकृत नहीं माने जाये हैं जिनका अभिप्राय विवाहित युवक युवतियोंको इस विषयमें सजाह देना है कि जीवनके यौनवासना सम्बन्धी पहलूका नियमन किस तरह किया जाय। (वेस्लिये सभाट् बनाम हरनामदास, १९४७, आईए, १८१)। चित्रकला या चित्रकलामें नग्नता मात्र ही अस्वीकृत नहीं है। क्या अस्वीकृत है, क्या नहीं, इसका निश्चय करना सामान्य बुद्धि तथा सामाजिक जिम्मेदारीकी समझकी बात है। इस चाराके अन्तगत कठोर या सखी, दोनों तरहकी केदकी सजा जिसकी मीमांस तीन महीनेतक हो, ही जा सकती है या घुरमाना हो सकता है या दोनों छापें एक साथ दी जा सकती है।

अन्य प्रकाशन

उपेक्षित—दण्डविधि संहिताकी चाराएँ ९९ आ से ९९ ए तक प्रस का अपील एण्ड अमेन्डमेंट एक्ट, १९२२ [१४ (१४), सन् १९२२] के द्वारा जोड़ी गयी थीं। ये चाराएँ इन्डियन प्रस एक्ट [१९१ का १ (१)] का मज निरसित कर दिया गया है, की १२, १७, १८, १९, २०, २१ तथा २२, इन चाराओंपर आधारित है।

माना स्थापित किया गया हो, इसके सम्बन्धमें घोषणा न कर दी हो और घोषणापत्रपर हस्ताक्षर न कर दिये हों।

कोई भी समाचारपत्र सम्बन्ध न छापा जा सकता है और न प्रकाशित किया जा सकता है, जबतक उसका मुखक या प्रकाशक सम्बद्ध दण्डाधिकारी (मजिस्ट्रेट कसब) के सामने इस आवश्यकता को घोषणा नहीं कर देता—

‘मैं, क, ल, ग धोरित करता हूँ कि मैं नामके समाचारपत्रका मुखक (या प्रकाशक, या मुखक तथा प्रकाशक) और मुखपत्रकका मुखक (या प्रकाशक या मुखक तथा प्रकाशक) हूँ।’

मुखपत्रकेला—समाचारपत्रोंके प्राक्क अन्तिम (या अन्य) पृष्ठ पर, सबसे नीचे, छोटे टाइपमें मुखक तथा छापेजानेका नाम छपा रहता है। इसे ही ‘मुखपत्रकेला’ कहते हैं। ‘मुखपत्रकेला’ उस सम्बन्धको सूचित है जो बहुत प्रारम्भकालसे ही सभी हुए सामग्री आदिके सम्बन्धमें किया जाता रहा है। यह इस आधारमें दी जाती है कि मुखपत्र सम्बन्धी अपराध होने पर जो व्यक्ति इसके लिए जिम्मेदार हो उसके विषयक अधिकारी काररवाई कर सकें। मुखपत्रकेला न देनेकी सजा एक हजार रुपयेका जुर्माना या छ महीनेके अनधिककी सजा कैद या दोनों है (भाग १२)।

प्रस (आपत्तिजनक सामग्री) अधिनियम, १९५१—इस अधिनियमने १९३१ के पुराने (आकस्मिक आपत्तकताके अधिकार सम्बन्धी) प्रेश अधिनियमको निरस्त कर दिया है। संसद्में जब यह विधेयकके रूपमें पुरा स्थापित किया गया तब यह कहकर कार्य भोगते इसकी तीव्र आकांक्षना की गयी कि यह एक प्रतिगामी प्रस्ताव है जिससे कितना प्रकट करनेकी उक्त सभ्यतापर आधारित होगा जिसकी प्रत्याभूति (गारंटी) विधियानमें ही मयी है। सरकारने अपना वह मत प्रकट किया कि इसका लक्ष्य हिंसा या विषम कार्यके प्रोत्साहनको तथा अन्य गम्भीर अपराधोंको रोकना आदि पत्रोंमें सम्बन्धपूर्ण सामग्री न छपने देना है।

भारतीय पत्रकारकक्ष

(५) जिनसे भारतके निवासियोंके विभिन्न समूहोंमें बहुत अधिक प्रकाश मात्र बढ़नेकी सम्भावना हो या

(६) जो बहुत ही अधिक, अप्रत्यक्ष या अस्वीकृत हों या जिनका अन्य समझी द्वारा पैसा घटना हो ।

स्पष्टीकरण १—ऐसी टीका टिप्पणी जिनमें किसी कानूनकी वा सरकारी नीति या प्रशासकीय कार्यकी प्रतिनिधता या आलोचना इस उद्देश्यसे की गयी हो कि उसमें परिवर्तन कर दिया जाय या बिना उपायोंसे संशोधन मिल जाय और ऐसे शब्द भी जिनमें उन बातोंकी बार संकेत किया गया हो जो भारतवासियोंके विभिन्न समूहोंमें बहुत वा प्रकाश मात्र उत्पन्न कर रहे हों या उत्पन्न करनेकी ओर उन्मुख हों, —प्रयोजन यह कि वे निष्कास दिये जायें—इस प्रायः—जो अर्थ किया गया है उसके अन्तर्गत आपत्तिजनक न समझें जायेंगे ।

स्पष्टीकरण २—इस अधिनियमके अनुसार कोई प्रेटर आपत्तिजनक है या नहीं, इसका निर्णय करते समय शब्दों संकेतों या हरन काररवाईके परिणामका ही विचार किया जायगा उपेक्षानेके वाक्य या समाचार पत्रके प्रकाशक, जिसका मामला हो के उद्देश्यका नहीं ।

स्पष्टीकरण ३—“अन्तर्भव” से अभिप्राय है उस शक्ति जो कार सानोंके पत्रसमूहको, मासको, या पुस्तक, सङ्को तथा ऐसी ही अन्य चीजोंको इस रूपसे पहुँचानी जाय जिनसे पत्रावली, संचारवापनी आदिका नाश हो जाय वा उनकी उपयोगितापर हानिकारक प्रभाव पड़े ।

जमानत माँगना—एक सरकारी ओरते कोई सख्त अधिकारी दौरे जजके पास इस आशयका लिखित परिचारपत्र (कॉम्प्लेंट) भेज सकता है कि अमुक छापाखाना ऐसा समाचारपत्र छापने और प्रकाशित करनेके काममें लगा जाता है जिनमें आपत्तिजनक सामग्री रखी है । दौरेजस निश्चित मामलेकी तरह इसकी जाँच करवेगा और यदि उसे इस बातकी तसल्ली हो जाय कि जमानत माँगनेके लिए पर्याप्त कारण विद्यमान हैं तो वह प्रेस पब्लिशरको जमानत जमा करनेका आदेश

कृतिस्वाम्य

कृतिस्वाम्यका अर्थ है किसी ग्रन्थ, रचना आदिको प्रकाशित करने, निकालने, या उसके सम्पूर्ण या प्रधान भागको फिरसे निकालनेका, किसी तात्त्विक रूपमें एकमात्र अधिकार और यदि वह ग्रन्थादि प्रकाशित न हुआ हो तो उसे या उसके महत्वपूर्ण अंशको प्रकाशित करनेका अधिकार—इसका कोई अनुवाद प्रकाशित करनेका या इस तरहका काम करनेके लिए दूसरोंको प्राधिकार देनेका अधिकार भी इसमें शामिल है।

“माछिक” काम या रचनामें ही कृतिस्वाम्य निहित रहता है। इसका यह अर्थ नहीं कि रचना मौखिक या उद्घोषित विचारकी अभिव्यक्ति होनी चाहिये। कृतिस्वाम्य सम्बन्धी अधिनियमका विचारोंकी मौखिकतासे कोई तात्त्विक नहीं, बरन् छपी हुई या लिखी हुई सामग्रीके रूपमें उनकी अभिव्यक्तिसे ही उसका सम्बन्ध है। बाह्य मौखिकताका सम्बन्ध विचारकी अभिव्यक्तिसे है और इसकी नकल (अर्थात् अभिव्यक्त करनेके उगकी नकल) अन्य किसीकी रचनासे न हानी चाहिये, मझे ही वह विकसित मौखिक या नये रूपमें न हो।

ऐसकको अधिकार है कि वह ज्ञानके उस मण्डारसे सहायता ले जो उसके तथ्य ज्ञान लोगोंके लिए सामान्य रूपसे खुला हो। जो रचनाएँ मौखिक हैं, उनसे वह सहायता ले सकता है और उनमें अपनी ओरसे वृद्धि या सुधार कर सकता है, फिर भी कृतिस्वाम्य मंग करनेका आरोप उत्पन्न कर सकता नहीं किया जा सकता जबतक कि वह स्वयं उसके सम्बन्धमें ईमानदारीसे परिश्रम करता है और अपनी विशेष-बुद्धि तथा कुछ कलाका प्रयोग करता है। कृतिस्वाम्य सम्बन्धी कानूनमें केवल इस बातकी

कृतिस्वाम्य

कृतिस्वाम्यका अर्थ है किसी ग्रन्थ, रचना आदिको प्रकाशित करने, निकालन, या उसके सम्पूर्ण या प्रधान भागको फिर से निकालनेका, किसी सांस्कृतिक रूपमें एकमात्र अधिकार और यदि वह ग्रन्थादि प्रकाशित न हुआ हो तो उसे या उसके महत्वपूर्ण अंशको प्रकाशित करनेका अधिकार—इसका कोई अनुवाद प्रकाशित करनेका या इस तरहका काम करनेके लिए दूसरोंको प्राधिकार देनेका अधिकार भी इसमें शामिल है।

“मौखिक” काम या रचनामें ही कृतिस्वाम्य निहित रहता है। इसका यह अर्थ नहीं कि रचना मौखिक या उद्घाषित विचारकी अभिव्यक्ति हानी चाहिये। कृतिस्वाम्य सम्बन्धी अभिनियमका विचारोंकी मौखिकतासे कोई वास्तुक नहीं, बरन् छपी हुई या लिखी हुई सामग्रियोंके रूपमें उनकी अभिव्यक्तिस ही उसका सम्बन्ध है। वास्तव मौखिकताका सम्बन्ध विचारकी अभिव्यक्तिस है और इसकी नकल (अर्थात् अभिव्यक्त करनेके ढंगकी नकल) अन्य किसीकी रचनासे न होनी चाहिये, भले ही वह बिल्कुल मौखिक या नये रूपमें न हो।

सेलकका अधिकार है कि वह ज्ञानके उक्त भण्डारसे सहायता से जो उसके तथा अन्य लोगोंके लिए सामान्य रूपसे सुझा हो। जो रचनाएँ मौजूद हैं, उनके वह सहायता से सकता है और उनमें अपनी आरसे बुद्धि या सुधार कर सकता है, फिर भी कृतिस्वाम्य भंग करनेका आरोप उसपर तबतक नहीं किया जा सकता जबतक कि वह स्वयं उसके सम्बन्धमें इमानदारीसे परिश्रम करता है और अपनी विवेक-बुद्धि तथा कुछ नयाका प्रयोग करता है। कृतिस्वाम्य सम्बन्धी कानूनम केवल इस बातकी मनाही की गयी है कि कोई आदमी किसी दूसरेके परिश्रम, निर्माणक बुद्धि अथवा कुछनयाका प्रतिफल स्वयं न हड़पे। किसी व्यक्तिको इस बातकी अनुमति नहीं दी गयी है कि वह दूसरेकी मेहनतका फल अर्थात् उसकी सम्पत्तिका विनियोजन करे।

कृतिस्वाम्यका उद्देश्य—जिस व्यक्तिको कृतिस्वाम्य प्राप्त है,

किर यह सूचना या जानकारी वास्तु पटनाओंके सम्बन्धमें ही क्यों न हो। [देखिये वास्कर बनाम स्ट्राइन कॉफ (१८९२), ४८०; इटर नीशनल म्यूज सर्जिस बनाम अलोथियट्रेड प्रेस, (१९१८) २४८ यू० एस० २१५] समाचारके स्रोतका उल्लेख कर देने मात्रसे इस तरहकी साहित्यिक चोरी म्यायोचित नहीं मानी जा सकती।

विभिन्न पत्रोंसे लेख या उद्धरण छेनेकी रस्म वा प्रथा कानून द्वारा प्रस्वीकृत वा मान्य नहीं है।

सन्देशकी प्रगति देख पड़ रही है किन्तु यह स प्राम" इस विषयको लेकर नहीं होती कि पत्रकारीके प्रशिक्षणका कोई मूल्य है या नहीं, बरन् मत भेद इस सम्बन्धमें है कि उसका स्वरूप कैसा हो। अतिष्ठ पत्रकारीसे प्रभावित होकर भारतीय पत्रकार भी इस बुविधामें पड़े हुए हैं कि ऐसी योजना जिसमें पत्रकारीकी शिक्षाका महाविद्यालयोंकी उच्च स्तरकी शिक्षाके साथ एकीकरण कर दिया गया हो, उपलब्ध हो सकेगी या नहीं। जब शिक्षा-पद्धतिकी बातें उम्ह समझा दी जाती हैं तब इसके विरोधी पैदा बहकर कहने लगते हैं कि इसमें सन्देह नहीं कि जहाँ अमेरिका जैसे देशमें यह प्रभावोत्पादक, और आवश्यक भी हो सकती है, वहाँ भारतमें यह न कामजनक है और न आवश्यक, क्योंकि यहाँ भाषा उन्मत्त कीठिनाइयाँ हैं, समाचारपत्रोंकी संख्या कम है और सामान्यतः नीचा आर्थिक स्तर है जिससे अमेरिकाकी तुलनामें यहाँ यह पैदा कम बांझनीय समझा जाता है।

शिक्षाक्रमका विकास

भारतमें विश्वविद्यालयीय स्तरपर पत्रकारीकी शिक्षाका प्रथम प्रयत्न सम्भवतः यह था जो सन् १९९८ में मसीचुसेट्स के मुसलिम विश्वविद्यालयमें किया गया था। इसमें उपाधिपत्र (डिप्लोमा) दिया जाता था। कक्षा का प्रारम्भ उठ वर्ष, भारतके तब ग्यामांकपके ग्यामाधिपति स्वर्गीय सर साह मुहम्मद मुसैमानने किया था।

कक्षाका प्रसार रहीम अली अहमदशमीपर था जिन्हें अंग्रेजी तथा उर्दू, दोनोंकी ही पत्रकारीका अनुभव था। प्राप्यापकके पदपर उनके निपुण होनेकी यही पृष्ठभूमि थी। पत्रकारीके विभिन्न अंगोंपर बुने हुए पंधर पत्रकारोंके व्याख्यान दिखानेकी व्यवस्था उन्होंने की थी और वे विद्यार्थियोंको समाचारपत्रोंके कार्यालयोंके परिदशनार्थ भी ल जाया करत थे। सन् १९४४ में सर साह मुसैमानकी मृत्यु हा जानेके बाद प्रचारो अप्यापकने "प्राधिकाशियोंसे कुछ मतभेद हा जानेके कारण" व्यवस्थाप कर दिवा और पत्रकारीकी शिक्षा व्यवस्था समाप्त कर दी गयी।

सम्बन्धी उचित सुविधाओं का अभाव, तथा राष्ट्र के पत्रों की ऐसी स्थिति जिसमें कर्मचारियों को निर्बाहभाव का वेतन ही किसी तरह मिल पाता है। उनके विभागमें इन विषयों की शिक्षा दी जाती है—रिपोर्टिंग, कापी-सम्पादन आदि, सम्पादकीय लेख-टिप्पणी लिखना, विशेषज्ञता क्लिप्पिंग, समाचारपत्र का पूरा बौध्दना तथा मुद्रणसौन्दर्य, समाचारपत्र सम्बन्धी कानून, संस्कृत तथा विज्ञापन। उनकी सहायता के लिए भाषा सम्य होनेवाले ऐसे व्याख्यातागण भी हैं, जिनमें कुछ तो समाचारपत्रों में काम किये हुए काफ़ी प्रसिद्ध आदमी हैं जिनमें 'टाइम्स आफ इण्डिया' का एक मृतपूर्व सम्पादक तथा किन्ने ही अन्य पत्रकार तथा मासिक पत्रों के सम्पादक आदि भी शामिल हैं। कोई पत्रापी में पढ़ाता है तो कोई हिन्दीमें—वर्षा भी बहुत सी कम्पनी की पढ़ाई अंग्रेजी में होती है। यह पाठ्यक्रम, जिसमें उपाधिपत्र भी दिया जाता है, सिर्फ महाविद्यालयों के स्तरकों के लिए सुझा है। प्रयोगशाला, विचार तथा व्याख्यानों द्वारा शिक्षा प्रदान करने के साधनों का प्रयोग किया जाता है।

मद्रास में शिक्षा की व्यवस्था

मद्रास विश्वविद्यालयने सन् १९४७ में पत्रकारी की पढ़ाई शुरू की और वह डाक्टर आर. बाबुलक्ष्मणन् की देखरेख में आज भी जारी है। वे अर्थशास्त्र के मुख्यात अध्यापक हैं जो पत्रकार-कक्षा के ज्ञान का दावा नहीं करते। वे मद्रास के प्रमुख पत्रकारों, सम्पादकों की व्याख्यानमाला की व्यवस्था करते हैं जिनमें भारत के दो बड़े दैनिक पत्रों 'दि मैत्रास मेस' तथा 'दि हिन्दू' के सर्वोच्च सम्पादक भी शामिल हैं। वे स्वयं केवल विज्ञापन सम्बन्धी शिक्षा देते हैं। वे एक मिस्टर कियम-बहुल पत्रकार-कक्ष की परीक्षा के लिए कई विषयों की शिक्षा प्रदान करते हैं जिनमें रिपोर्टिंग, कापी का सम्पादन, मासिक पत्रों के लिए फीचर (कपक)—लेख और सभा दलीय प्रवृत्ति तथा कक्ष शामिल है। इसके सिवा जसमा अध्यापकताओं में इन विषयों की भी पढ़ाई होती है—समाचारपत्रों की स्वतन्त्रता का—इतिहास, पत्रकारों का नीतिशास्त्र, सेवादि किस्सना, प्रेसी राष्ट्रिय और

अध्ययन-शाला स्थापित कर उसके जरिये शिक्षा प्रदान करनेकी व्यवस्था की जा सकती है। पत्रकारीके लिए ऐसी स्वतन्त्र अध्ययन-शाला भारत में पहले कभी न थी और आज भी उसकी सम्मानना स्पष्ट नहीं दिलाई दे रही है। इन और स्थानकी कमीके कारण यह मूल योजना उपाधि-पत्र दिखानेवाली शिक्षा योजनाके रूपमें ही, जो कमोबेश कलकत्तेकी योजनासे मिलती-जुलती थी, रणी जा सकी। अभीतक इसका प्रारम्भ नहीं किया जा सका है। अद्यतः तो अनुमती पत्रकारोंकी कमीके कारण और अद्यतः अन्य लोगों द्वारा अधिक महत्वपूर्ण समझे जानेवाले विषयों की शिक्षाके लिए अनुरोध दायर पढ़नेके कारण।

कलकत्तेकी शिक्षण-व्यवस्थामें पत्रकारीके बाहरके कतिपय विशिष्ट विषयोंकी शिक्षापर, प्रहृष्टिमें के रूपमें, अधिक जोर दिया गया है, इसलिए इस एक दृष्टिसे यह सबसे सुस्थित (स्वस्थ, 'साउण्ड') है। पत्रकार कलाकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए भारतके विभिन्न विश्वविद्यालयोंसे शिक्षार्थी आते हैं जिनका इन विषयोंका अध्ययन विभिन्न स्तरों या मात्राओंका होता है—सांविधानिक कानून, समाज शास्त्र, राजनीति विज्ञान, साहित्य और कला। कलकत्तेके शिक्षाक्रमका प्रभुत्व जिनके ऊपर है और जिनमें अतीत काळके तथा आजके प्रमुख सम्पादक शामिल हैं, उन्होंने इस बातकी प्रत्येक्षा पहले ही कर ली थी कि भूमिका रूपमें पत्रकारोंके लिए आवश्यक इन विषयोंका अध्ययन सबका समान न होकर किसीका कम और किसीका ज्यादा होगा ही, इसलिए उपाधि-पत्र प्राप्त करनेके लिए उन्होंने दो वर्षकी पढ़ाई रखी, जिसमें जहाँ जितनी कमी या त्रुटि हो, पूर कर ली जाय। यह नीति यह अच्छी तरह मानते हुए भी अंगीकार की गयी कि ऐसा करनेसे भरती होनेवाले विद्यार्थियों में कई धीरे-धीरे हट जावेंगे, और अन्तमें हुआ भी ऐसा ही।

एक और तरफसे कलकत्तेकी योजना अन्य योजनाओंसे बढ़कर है—जिसमें इस बातका आग्रह है कि प्रत्येक ऐसे व्यक्तिको जो उपाधि-पत्र प्राप्त करे, पढ़ेदेहे ही पत्रकारोद्योगमें स्थान मिलनाका आश्वासन मिल जाना

राधाबाईका सामना करना पड़ा। सन् १९५३ में विद्याका काम फोरेर पत्रकार प्रोफेसर एन. कृष्णामूर्तिको सौंप दिया गया, जिन्होंने पत्रकार प्रोफेसर सिंहके ही समान, मिस्री विश्वविद्यालय (जमरिका) से पत्रकार कलाकी शिक्षा प्राप्त की थी। सन् १९५९ में मस्ती हुए विद्यार्थियोंकी संख्या २४ थी १९५२ में १८ रह गयी। पत्रकारकला सम्बन्धी पुस्तकोंका अध्ययन समूह दकटठा कर लिया गया और अभ्यासके लिए एक पत्र भी निकाला जाने लगा।

मैसूरका शिक्षाक्रम इस मानेमें विद्यकुल निराशा है कि केवल वही ऐसा है जो बी. ए. की उपाधि प्राप्त करनेके पहले ही सीखा जा सकता है, जब कि अन्य सब स्थानोंके शिक्षाक्रम पाँचव वर्षमें ही शुरू किये जा सकते हैं।

सन् १९५३ के शुरूमें आगरा, गुजरात तथा उस्मानिया विश्व-विद्यालयोंमें भी इसके शिक्षणकी व्यवस्था करनेपर विचार किया जा रहा था। पत्रकारीसे सम्बन्ध रखनेवाला बोझाला विधिप्र काम, फरवरी १९५३ में इलाहाबाद एमीकस्वरस इन्स्टीट्यूटमें भी शुरू किया गया था।

सबसे नया बड़ा शिक्षणक्रम हिस्साप काछेजम शुरू किया गया है, जो नागपुर विश्वविद्यालय (मध्यप्रदेश) से सम्बद्ध है।

हिस्साप काछेजका शिक्षाक्रम

नागपुर विश्वविद्यालयसे सम्बद्ध एक हजार विद्यार्थियोंवाले हिस्साप-काछेजम पत्रकारकलाका शिक्षाक्रम शुरू करनेका आवेदन सन् १९४६ में विश्वविद्यालयकी एक समितिने किया था किन्तु सन् १९५२ तक वह कामान्वित न किया जा सका। अन्य विश्वविद्यालयोंके शिक्षाक्रमोंसे यह भिन्न है। पिछलाक इसमें उपाधिपत्र पानके लिए एक वर्षका पाठ्यक्रम रखा गया है और यह अनुमती पत्रकारीको बिना काछेजमें शिक्षा प्राप्त किये ही प्रमाणपत्र दे सकता है। जो लोग उपाधिपत्र लेना चाहते हो उनके लिए आवश्यक है कि उन्होंने बी. ए. के नीचकी पढ़ाई सम्मान पूर्वक समाप्त की हो।

पाके तथा दो आधे समय काम करनेवाले व्यक्ति थे) संख्या बढ़ा दी जाय और कक्षाएँ भी बूनी कर दी जायें जिससे स्नातक-पूरा उपाधिपत्र भी दिया जा सके और स्नातक तथा स्नातक पूरा दोनों स्तरों पर कामका उपबन्ध किया जा सके। इस तरह स्नातकोंकी वास्तविक शिक्षा पाँच वर्षमें होगी।

नियन्त्रित भरती द्वारा केवल ४२ विद्यार्थी ही इस कक्षमें रत्ने जा सकते हैं। उनमेंसे अधिकतर तो कासेबोंके प्रेजुएट और फेरेटर पत्रकारी में करीब करीब आधे व्यक्ति अनुमती मनुष्य हैं। इस विद्यालयमें कमसे-कम कुछ विद्यार्थियोंको परीक्षाओंके कठिन चगुल्ले बन्नावे रखा है। नागपुर विश्वविद्यालयके अधिकारियोंने परीक्षामें प्राप्त होनेवाले अंकोंकी विभाजन व्यवस्था इस तरह की है जिससे छात्रके उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण होनेका प्रश्न अन्तमें अध्यापकोंके ही हाथमें रह जाता है, परीक्षकोंके हाथमें नहीं।

हिल्डॉप काबजके इस विभागका (जो नागपुर विश्वविद्यालयका भी विभाग है) निदेशन विश्वविद्यालयके निकास, पत्रकारी विभागे बोर्ड के हाथमें है। इस समितिके सदस्य साधारणतः विभागीय प्राध्यापक वर्ग (फैकल्टी) से चुने जाते हैं किन्तु नागपुरमें पत्रकारी एक छोटी सी इकाइके रूपमें है, अतः इस समूहमें विभागीय प्राध्यापक वर्गके तीन, नागपुरके पत्रकार तीन तथा कलकत्ता विश्वविद्यालयके विभागीय प्राध्यापक वर्गका एक आवामी रहता है।

शिक्षण-संस्थाओं सम्बन्धी बाधाएँ

भारतके कुछ हिस्सोंमें थोड़ी सी बाधाएँ तो (निरोधात्मक ढंगकी) काम करनेवाले पत्रकारों द्वारा, विशेष कर उनके द्वारा जो महाविद्यालयमें शिक्षा प्राप्त किये बिना ही महत्त्वपूर्ण स्थितियोंमें पहुँच गये हैं, उपस्थित हो आती हैं, जैसे अमृतसरके लिए विद्यार्थियोंका अपने कार्यालयोंमें आने देनेकी अनुमति न देना किन्तु इसके साथ ही शिक्षण-संस्थाओंने भी कुछ बाधाएँ सही कर रखी हैं।

पाते तथा दो आधे समय काम करनेवाले व्यक्ति ने) संख्या बढ़ा दी। धन और कच्चाई भी बूनी कर दो आधे मिनट स्नातक पूर्व उपाधिपत्र जो दिया जा सके और स्नातक तथा स्नातक पूर्व दोनों स्तरपर कामका उपबन्ध किया जा सके। इस तरह स्नातकोंकी वास्तविक शिक्षा पौंचवें वर्षमें होगी।

निम्नलिखित मरती द्वारा केवल ४२ विद्यार्थी ही इस कक्षामें एले जा सकते हैं। उनमेंसे अधिकतर तो काखबोंके प्रेसपत्र और पत्रेपर पत्रकारी में करीब-करीब आधे व्यक्ति अनुमती मनुष्य हैं। इस शिक्षाक्रमने कमसे-कम कुछ विद्यार्थियोंको परीक्षाओंके कठिन पंगुछे बचावे रखा है। नागपुर विश्वविद्यालयके अधिकारियोंने परीक्षाम प्राप्त होनेवाले अर्कोंकी विभाजन-ध्वन्या इस तरह की है जिससे छात्रके उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण होनेका प्रश्न अन्तमें अभ्यापकोंके ही हाथमें रह जाता है, परीक्षकोंके हाथमें नहीं।

दिल्ली के काउंसिल के इस विभागका (जो नागपुर विश्वविद्यालयका भी विभाग है) निदेशन विश्वविद्यालयके निकाय पत्रकारी शिक्षाके बोर्ड के हाथमें है। इस समिति के सदस्य साधारणतः विभागीय प्राध्यापक बग (फंक्स्टी) से चुने जाते हैं किन्तु नागपुरमें पत्रकारी एक छोटी सी इकाईके रूपमें है, अतः इस समूहमें विभागीय प्राध्यापक बर्गके तीन, नागपुरके पत्रकार तीन तथा कलकत्ता विश्वविद्यालयके विभागीय प्राध्यापक बर्गका एक आरम्भी रहता है।

शिक्षण-संस्थाओं सम्बन्धी बाधाएँ

भारतके कुछ हिस्सोंमें जोड़ी सी बाधाएँ तो (निदेशात्मक दृष्टिकोण) काम करनेवाले पत्रकारों द्वारा, विशेष कर उनके द्वारा जो महाविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने बिना ही महत्वपूर्ण स्थितियोंमें पहुँच गये हैं, उपस्थित हो जाती हैं जैसे अभ्यासके लिए विद्यार्थियोंको अपने कार्यालयोंमें आने देनेकी अनुमति न देना किन्तु इसके साथ ही शिक्षण-संस्थाओंने भी कुछ बाधाएँ लड़ी कर रखी हैं।

आप दर्जन पुस्तकें ही प्रकाशित हुई हैं। व विभिन्न भाषाओंमें लिखी गयी हैं और प्रायः बुझाये ही हैं। वस्तुतः भारतीय समाचारपत्रोंके सम्बन्धमें भी लिखी गयी कुछ पुस्तकोंकी संख्या ५० से अधिक नहीं। इनमें या तो पत्रोंका इतिहास दिया गया है, या पुराने सम्मरण लिखे गये हैं या फिर समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रता, समाचारपत्र और राजनीतिक प्रश्न इत्यादि या ऐसे ही अन्य विषयोंकी चर्चा की गयी है। (ग्रन्थ सूची परिशिष्ट १ देखिये)।

प्रायः ब्रिटेन तथा अमेरिकामें छपी पुस्तकोंका ही आदर किया जाता है और वहाँ सम्मन होता है उन्हींसे काम चलाया जाता है किन्तु बहुतसे विद्यापीठों अक्सर अपने लिए इन्हें खरीद ही नहीं सकते क्योंकि इनके दाम अधिक होते हैं। हर एक विधाक्रमके लिए एक या दो पुस्तकें निर्धारित कर दी जाती हैं और अन्य पुस्तकें अनुपस्थित कर दी जाती हैं जिन्हें विद्यापीठ पुस्तकालयोंसे लेकर पढ़ लेते हैं। अमेरिकाके पत्रकारकला विद्यालयोंमें साधारणतः जिस तरहकी पाठ्यपुस्तक प्रयुक्त होती है उसका दाम प्रायः तीन-चार महीनोंके विद्यार्थीपुस्तकके बराबर होता है। ऐसी पाठ्य पुस्तक पेसेकर पत्रकारोंके समाचार कक्षमें पहुँच नहीं पाती, जिस तरह वे अन्य देशोंमें फैल पड़ती हैं। समाचारपत्रों आदिम काम करने वाले बहुतसे पत्रकारोंको तो भारतीय पत्रकारकला सम्बन्धी उन दो चार पुस्तकोंका भी ज्ञान नहीं जो यहाँ उपलब्ध है और अन्य देशोंमें इतका जो साहित्य उपलब्ध है उसकी भी केवल थोड़ी-सी जानकारी उन्हें रहती है।

फिर विश्वविद्यालयोंके अपने पुस्तकालयों तथा सार्वजनिक पुस्तकालयोंमें भी पत्रकारकला सम्बन्धी शायद ही एक दो पुस्तक मौजूद रहती हैं। समाचारपत्रोंके चौकसे मासिकों तथा सम्पादकोंके निजी संग्रहोंमें पत्रकारकला सम्बन्धी पुस्तकें पायी जा सकती हैं पर उनमें मुख्यतः अमेरिका तथा ब्रिटेनकी दृष्टि समाचारपत्रों सम्बन्धी कानून तथा व्यवस्था आदिका वर्णन रहता है। नागपुर विश्वविद्यालय तथा हिस्कोप

‘पत्र-सम्पादक सम्मेलन, भारतीय भूमिक-पत्रकार-सभ तथा ‘दक्षिण भारतीय पत्रकार सभ’ जैसी क्षेत्रीय संस्थाएँ भी। अ. भा. पत्र-सम्पादक सम्मेलन, जिसके अगमन २० सदस्य हैं, सन् १९८९ में नागपुरके तीन पत्रकारोंकी एक कमेटी नियुक्त कर दो। इसे “पत्रकारोंकी उच्च स्तरका प्रशिक्षण देनेके उद्देश्यसे एक अलख भारतीय पत्रकार-कक्षा विद्यालय स्थापित करनेके लिए योजना बनाने” का काम सौंपा गया और आदेश दिया गया कि ‘तीन महीनोंके भीतर अपनी रिपोर्ट’ स्थायी समितिके पास भेज दे।’

प्रस्तावित विद्यालय भारत सरकारके शिक्षा मन्त्रालयके प्रतिनिधियों तथा अ. भा. पत्र सम्पादक-सम्मेलन और अन्य प्रसूचित पत्रकार संस्थाओं द्वारा नियमित होगा। भ्रष्टी किये जानेवालाके लिए पत्रकारोंका व्यावहारिक अनुभव तथा दो कण्टककी सहायिद्यालयकी शिक्षा प्राप्त किये रहना आवश्यक होगा। केंद्रीय तथा राज्य-सरकारें इसके लिए धनकी व्यवस्था करंगी और अ. भा. पत्रसम्पादक सम्मेलन भी इसकी कुछ सहामता करेगा। हिन्दी तथा अंग्रेजी ही शिक्षाका माध्यम होगी।

प्रस्तावित पाठ्यक्रममें ये विषय रखे गये—समाचारोंकी रिपोर्ट लेना और लिखना, समाचारोंका सम्पादन, अग्रस्त टिप्पणी लिखना, जनमत तथा प्रचारकार्य, सचित्र पत्रकारी पत्रकारोंकी नीति-संहिता पत्रकारी सम्प्रदायी कानून चित्र बनाना फोटो खंसा आदि धीनलिपि तथा मुद्रा लेखन और व्यवस्थापन, राजनीतिविज्ञान नागरिकशास्त्र एवं इतिहासमें पूर्वपीठिकाके कपस किया गया कुछ काम।

अ. भा. पत्रसम्पादक सम्मेलनके सदस्योंसे आशा की जायगी कि वे स्थानीय पत्रोंसे सम्बन्ध होकर व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करनेकी योजना को कार्यान्वित करनेमें सहयोग करगे। कुछ विषयोंके प्रशिक्षणके लिए प्रयोगशालाएँ भी स्थापित की जायेंगी।

स्थायी समितिकी रिपोर्टपर अभी कोई काररवाई नहीं की गयी किन्तु

विरवविषाखमें ही जानेवाली पत्रकारीकी शिक्षा अमेरिका तथा अन्य देशोंमें मले ही ठिकानेसे जल्दभी जा तके किन्तु भारतमें यह पक्ष नहीं सकता !

पहला उत्तर तो यही है कि जो भारतीय पत्रकार तथा शिक्षा विद्ये पत्र हत मले माननेवाले हैं, उनके सम्मुखमें प्रायः पता चलता है कि उन्हें हत पाठका करीब-करीब कुछ भी ज्ञान नहीं है कि भारतमें अन्य जनके हत क्षेत्रमें कितना काम हो चुका है और दुनियाके अन्य भागोंमें जो कुछ हुआ है उसकी भी उन्हें बहुत थोड़ी जानकारी है। अधिकसे अधिक वे यही सोच सकते हैं कि पत्रकार कक्षा-विषाख एक तरहके व्यापारिक विषाखके सिवा और कुछ भी नहीं है। उन्हें बिल्कुल नहीं मालूम कि ऐसे विषाखोंमें विशेषता सम्बन्धी कार्य भी होता है, भास्मा निम्नलिखितके अन्तर मिलात हैं तथा विदेशीकी तथा स्वतंत्र राजनीके उचित प्रयोगकी शिक्षा दी जाती है। वे नहीं जानते कि यहाँ शिक्षा-सम्बन्धी समस्त अनुभवको विद्यार्थियोंके लिए अधिक सार्थक एवं अधिक मनोरंजक बनानेका प्रयत्न किया जाता है।

फिर भी विरोधियोंके सब तर्क सारहीन नहीं हैं। उनमें सबसे प्रबल है माया सम्बन्धी कठिनाइयोंकी विद्यमानता। शिक्षा, धातन तथा व्यापारिकहिंदी क्रमशः अंग्रेजीका स्थान ग्रहण करती जा रही है। फिर भी वह स्थिति ज्ञानमें अभी बहुत वर्ष लगने तक भारतके अधिक तर लोग अपनी स्थानीय मायाके सिवा उसका भी प्रयोग कर सकन। फिर भी 'डाइरिज ऑफ इण्डिया' के विद्वत्पत्रकारके सम्पादक और पत्रकार-कक्षा शिक्षणके समर्थक श्री बी० आर० मनकेकरको पत्राव-कोई भारतीय पत्रकारीके मविष्यकी बात करता है तो उसका मतसब अंग्रेजीकी पत्रकारीत नहीं रहता। अंग्रेजी पत्रकारीत बहुत अच्छा और सुन्दर काम किया है, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु अब उसके दिन खद गये। मविष्य अब भारतीय मायाओंकी, विशेष कर हिन्दीकी, पत्रकारीके

कि किन लोगोंका पत्रकारकक्षाकी शिक्षा प्राप्त होगी, उनके सामने मुख्य समस्या समुचित काम प्राप्त करनेकी होगी।”

उनके इस कथनका कारण उनका यह ज्ञान है कि भारतमें अब तरह-थौर सब मापाआके कुछ ६० • ही दैनिक, मासिक तथा अन्य पत्र हैं और इनमेंसे बहुत-से ऐसे हैं जिनमें अक्सर एक ही आदमी काम करता है। जो हो, उन्होंने आज इष्टिया रेडियोका सवाक नहीं किया जिसके प्रसारण-केन्द्रोंकी संख्या दो दजनतक पहुँच चुकी है और जिसके द्वारा प्रसारित समाचारोंका क्षेत्र तथा परिमाण बराबर बढ़ता जा रहा है। फिर व्यापारिक पत्रों तथा विशेष प्रकारके अन्य पत्रों की भी संख्याम वृद्धि हो रही है, जनसम्पर्क तथा जन-संबेदन (पब्लिसिटी) सम्बन्धी कार्योंका भी विस्तार हो रहा है समाचार-समितियोंका जाऊ फैलता जा रहा है किशोरोंके लिए कथा, कविता आदि तैयार करानेका नया क्षेत्र सामने आ रहा है तथा पत्रकारोंके बाहरके कितने ही क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें भी पत्रकारोंकी कुशलताकी आवश्यकता पड़ने लगी है।

तीसरी आपत्तिका निराकरण उतना सरल नहीं है। अस्वेतन क्रम, काम करनेकी अनुविधानजनक स्थिति, और आशामम मविष्मकी अनिश्चितता—आजकी अक्षमारी दुनियामें काम करनेवासे यहाँके पत्रकारोंकी यही वास्तविक स्थिति है। ‘इन्डियन एक्सप्रेस’ दिल्लीके सम्पादक श्री यू० मास्कररणने पत्रकारोंके विद्यार्थियोंको सम्बोधन करते हुए साफ साफ कह दिया था कि आप लोग “आराम और ऐशकी बिन्दगीकी आशा न कर। काम कड़ा है, आध्यात्मिक प्रतिपक्ष तो सन्तोषजनक है किन्तु सौद है कि इस पैगमें पनके रूपमें अच्छा पारिवेयिक नहीं मिलता। आपका जीवन सपर्यका जीवन होगा, उपस्याका जीवन होगा और कुछ मामलोंमें तो वह और खरिदताका भी जीवन हो सकता है।”

किन्तु कितने ही बुद्धिसम्पन्न एवं गृहस्थाकांक्षी लोगोंके लिए ये परिस्थितियाँ दुष्पर बाधार्थ नहीं मानी जा सकती। ये लोग अपने पुने

अगर ऐसा प्रतीत होता है कि भारतको सभी मुख्य मुख्य भाषाओंके क्षेत्रमें २५ विद्यालय या पत्रकारकण्ठ विभाग भी निम्नविद्यालयोंसे सम्बद्ध हों स्थापित करनेकी योजना बना लेना चाहिये। उदाहरणके लिए हिन्दी, मराठी, उर्दू, बंगाली, मलयालम्, गुजराती, तेलुगू और तामिल पत्रकारी की स्थिति इतनी सुदृढ़ और सुविकसित हो चुकी है कि उनमेंसे प्रत्येक अभी बहुत वर्षों तक देशके भीतर बनी रहनी। यह ठीक है कि निम्न विद्यालयोंमें हिन्दी या अंग्रेजीमें पत्रकारकण्ठकी शिक्षणव्यवस्था होनेसे आवश्यक सेवाके लिए पत्रकार तैयार करनेमें बहुत मदद मिलेगी, फिर भी यह तत्काज इतनी उपयोगी न होगी जितनी विद्यार्थी मातृभाषामें दो जानेवाली शिक्षा हो सकती है।

इसके समर्थनमें एक घटना जो हिस्कोप काछेजमें हुई थी, हो जा सकती है। भारत आनेके बहुत पहले मैंने भारतीय समाचारपत्रोंके इतिहासपर लिखी गयी पुस्तककी खोज की। सबसे अच्छी किताब जो मुझे मिल सकी, मारगेरिटा बार्म्सकी लिखी "दि इन्डियन प्रेस" (भारतीय समाचारपत्र) थी। यह सन्तीपजनक न थी क्योंकि मैंने देखा कि इसमें केवल १९१०-४० तककी ही घटनाओंका समावेश हुआ है। इसके विषय भारतीय समाचारपत्रोंके अन्य इतिहासोंकी तरह इसमें भी मुख्य-रूपसे उन समाचारोंका ही वर्णन मिलता है जो समाचारपत्रों तथा सरकारके बीच हुए। बहुत-सी महत्वपूर्ण प्राविधिक तथा व्यावसायिक विकास सम्बन्धी घटनाओंका उद्यमें कोई वर्णन नहीं।

फिर भी काछेजके पुस्तकालयाध्यक्षको एक दिन अकस्मात् एक पुस्तक मिल गयी, जो 'भारतमें समाचारपत्रोंका कार्य' सम्बन्धी सामान्य अध्ययनके लिए अधिक उपयोगी पुस्तक है। इसका नाम है 'हिस्ट्री ऑफ़ न्यूज पेपर्स और जेजन्स' हैं भी बी. के. जाधी तथा श्री आर. के. जेजे। यह सन् १९५१ में बम्बईसे प्रकाशित हुई है किन्तु यह मराठीमें है अगर हिस्कोप काछेजके पत्रकारकण्ठ विद्यालयके अमेरिकन प्राध्यापकों आदिके लिए ही अपठनीय नहीं है वरन् उनके लिये अधिक विद्या

नहीं है, क्योंकि योनों हा जोरनाओंके अनुसार विद्यार्थीको अपनात प्राक्विक प्रशिक्षण प्राप्त होता है और अस्तर उन सामान्य विद्यार्थीपर उनका पूर्वाधिकार नहीं होन पाता किन्ती आनरपद्धत पत्रकारकी पद्धती है।

भारतीय विद्यार्थियोंके लिए राजनाति विज्ञान, मन्नाविज्ञान अथवा मन्ना विज्ञानका अध्ययन किने बिना हा बी० ए० का उत्पति प्राप्त कर मन्ना सम्मन है किन्तु य विद्यार्थी ऐसे हैं किन्की ज्ञान वसन्तान पत्रकारकी कर्तुवत वंदार्थीके लिए आवश्यक है विद्यार्थीकर इस गणमें जहाँ सामाजिक विकासका काल गतिप्राप्त अवस्थामें है। पत्रकारका सिद्धमें वे पत्रकारकक्षके व्यावसायिक अंगका अध्ययन किने बिना हा, या उसका उद्गता उद्गता ज्ञान हासिलकर हा उद्यधिरथ प्राप्त कर सकते हैं।

छात्र और नृपजमान्तर समाचारपत्रोंके लिए पाठ्ये कना, आकाशवादी सम्बन्धी पत्रकारी, विविध पत्रकारी तथा पत्रकारकक्ष सम्बन्धी एवं संपादकालन सम्बन्धी अनुसंधान आदिकी बहुत ही कम व्यावहारिक शिक्षा की जाती है। इस समय सभी विश्वविद्यालय स्नातकोत्तराय स्तरपर चर्चान बा रहे हैं किन्तु इनमें एक भी ऐसा नहीं है किन्की गन्ना दान्तकमें स्नातक काटिकी हा। इस आधारपर मारतमें पत्रकारकक्षकी शिक्षा अधिक गहरातक नहीं पहुँच सकता।

पत्रकारकी शिक्षा, अन्न सर्वोत्तम रूपमें महाविद्यालयोंके स्नातक एवं कर्माग्नि, प्रथम या द्वितीय वर्षमें ही आरम्भ हो जानी चाहिये। इसमें अधिक दूर करना ठीक नहा। इसका यह आशय नहीं कि विद्यार्थियोंको बार वरतक पत्रकार कक्षाओंके सिवा अन्य किसी कक्षामें नहीं जाना चाहिये। इसका मतलब केवल इतना ही है कि उन्हें सामान्य ढंगसे ही बी ए की पढ़ाई करा रखनी चाहिये किन्तु उनका बा ए का पाठ्यक्रम इस तरह बनाया जाना चाहिये कि आगनके सभी क्षेत्रोंके लिए आवश्यक सामान्य शिक्षा उन्हें मिल सके और इसके साथ ही पत्रकारके कुछ चुन चुन विषय, एक या दो प्रतिपक्षके हिसाबसे, बार वर्षतक

ही या सहेगी जो 'पत्रकारकक्षामें ए० ए०' कहलयेगी, या मामूली बी० ए० सिस्तेमें पत्रकारकक्षा तथा कतिपय सामाजिक विषयोंके अध्ययनपर मुख्य रूपसे ध्यान दिया गया हो।

वे विद्यार्थी जिन्होंने दोमते कार्ड भी एक उपाधि प्राप्त कर ली हो या कालेजकी डिग्री प्राप्त वे पेशेवर पत्रकार जो और आगेका प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहते हों, तब वास्तविक स्नातकीय शिक्षाके लिए जुने या सक्रम। यह शिक्षा उन २५ विश्वविद्यालयोंमेंसे, जो पत्रकारीकी स्नातक पूर्वकी शिक्षा प्रदान करते हैं, कुछ जुने हुए विश्वविद्यालयोंमें ही दी जा सकेगी। इन विद्यालयोंका देशमें दस तरह समान वितरण होना चाहिये जिससे सभी स्थानोंके लोगोंके लिए ये आसानीसे उपलब्ध हो सकें। स्नातक शिक्षाका यह क्रम ठिकानेसे चलाया जा सकता है पर यह विविध रूपसे विद्यार्थीकी पृष्ठ भूमिपर अवलम्बित रहेगा।

पत्रकारकक्षाके विद्यालयों या विश्वविद्यालयीय विभागोंके स्नातक एक या दो अवतक पत्रकारीके उन विविध अंगोंका उच्चाध्ययन करने जितका आरंभ उन्होंने स्नातक-पूर्वकालमें किया था। वे इनमेंसे किसी एकपर विशेष ध्यान दे सकते हैं—मासिक पत्रके सम्पादनका कार्य, दैनिकपत्र सम्बन्धी कार्य, विज्ञापन, प्रचारपत्रि सम्बन्धी काम, या फिर संपादकव्ययक कार्य। जो लोग अपने कार्योंके एक हिस्सेके रूपमें कोई सम्पत्ता ग्रन्थ लिखना चाहें, उन्हें दो वर्ष जगगे और उन्हें उक्त विषयकी ओर संकेत करनेवाली एस० ए० की उपाधि मिलेगी। सामान्य अध्ययन करनेपर जिसमें गवेषणा कार्य न किया गया हो, पत्रकारकक्षामें एस० ए० की उपाधि मिलेगी और जिन्होंने गवेषणा-काम किया हो, उन्हें पत्रकारीमें एस० एस-सी० की उपाधि दी जायगी।

प्रस्थीकृत विश्वविद्यालयोंके ऐसे स्नातकोंको जिन्होंने कालेजमें रहते हुए पत्रकारीकी शिक्षा नहीं प्राप्त की, इस विषयकी उच्च शिक्षा प्राप्त करनेमें दो या तीन वर्ष जगगे। यदि उन्हें छात्रन, कानून, इतिहास, अर्थशास्त्र, लघुअर्थशास्त्र या अन्य विषयोंकी जितनी बर्बा पहले की जा

१६ भारतीय पत्रकारीका भविष्य

भारतमें आज पत्रकारीकी स्थिति, जैसा कि श्री बी एल धीनिवास शास्त्रीने कहा था, “एक वृद्धिशील धिष्ट” के समान है। उन्हें इस बात की बड़ी चिन्ता थी कि यदि इसके पाठन-पोषण या निगरानीकी उचित व्यवस्था न हुई और मनमाने ढीर पर इसका विकास होने दिया गया तो कहीं ऐसा न हो कि यह एक “विकर्मांग एवं दुर्दान्त रैत्य” का रूप ग्रहण कर ले।

यह “वृद्धिशील धिष्ट” बहुत ही निष्पक्ष और दुर्बल, रक्त विहीन-सा, है। मध्यमें समाचारपत्रोंका वास्तविक रोग है उनकी कम संख्या, उनका कम प्रचार और उनके अपर्याप्त वित्तीय साधन। देशमें थोड़ा ही तो समाचारपत्र है। इनमें भी उनकी संख्या बहुत कम है जो किसी तरह अपना खर्च चला लेते हों और दो चार-दस पत्र ही ऐसे हैं जो मजमें चला रहे हों। इस अभिन्न स्थितिका भी यह परिणाम है कि पत्रकारोंमें स्थायी बेकारी या अर्द्धबेकारी फैली रहती है, इतना कम वेतन उन्हें मिलता है जो सम्भारपत्र ही कहा जा सकता है और करिब्तोंके आगमनकी तरह उन्हें सुख-सुविधाएँ भी बहुत ही कम प्राप्त हैं।

आइये हम ब्रिटेन तथा मध्यमें समाचारपत्रोंकी प्रचार-संख्याओं की तुलना कर। ब्रिटेनमें जहाँ प्रौढ़ोंकी संख्या १५ करोड़ है, समाचार पत्रोंकी १ करोड़ प्रतिर्को प्रति दिन बिक जाती हैं, जैसा कि श्री राबर्ट सिनक्लेयरने ब्रिटिश रेडियोफर मापन करते हुए बतलाया था। इसमें १५० समाचारपत्र तथा १५० मासिक पत्रादि शामिल हैं। इसके विपरीत भारतमें, जिसके प्रौढ़ोंकी संख्या १ करोड़ है, कुछ १०० पत्र पत्रिकाएँ हैं जिनकी प्रचार-संख्या १० लाख ही है, जैसा कि ब्रिटिश भारतीय पत्रकार संघके अध्यक्ष श्री एन खुनाय पेकरने एक वार्षिक अभि-

और फिर वह साब इसी अनुपातसे उनकी संख्या बढ़ती चलीगी। इन पाँच करोड़ साक्षरोंके लिए इस समय समाचारपत्रोंकी वास्तविक प्रसार संख्या केवल १० लाख है। यह सत्य है कि प्रत्येक छात्र व्यक्ति इस स्थितिमें नहीं है कि वह समाचारपत्र खरीद सके। किन्तु विज्ञापन एजन्सी के शासनमें बताया गया है कि “इस देशमें जिन लोगोंकी आमदनी अनेकाकृत बहुत कम है, उनमें भी ऐसी वस्तुओंकी आवश्यकताके बिना होती है जिन्हें हम वास्तवमें विज्ञापकी सामग्री ही कह सकते हैं।” इसके बाद उसमें यह भी कहा गया है कि “सिनेमा तथा ऐसी ही अन्य विज्ञापकी वा आरामकी वस्तुएँ और अंगतः समझी जानेवाली विज्ञाप वस्तुएँ इतनी लोकप्रिय हैं कि उनके आधारपर यह सुझाव नहीं दिया जा सकता कि जितने मनुष्योंकी कल्पना काई व्यक्ति कर सकता है, उनमेंसे आधे लोगोंकी भी हैसियत इतनी गिरी हुई है कि वे एक दैनिक का वा कमसे कम साप्ताहिक पत्रका खर्च भी बरदाश्त न कर सकते हों।”

इसका क्या कारण है कि भारतमें समाचारपत्र उस सीमातक भी उपलब्धि नहीं कर सके जिसतक उन्नति करना यहाँकी परिस्थितियोंमें पूज्य सम्भव था? इसका पता लगानेमें बड़ा काम होगा। यदि प्रेस कमीशनकी रिपोर्टमें इस प्रश्नका ऐसा उत्तर मिल सके जिसपर बहुत कुछ प्ररोध किया जा सके तो उससे बड़ी सहायता मिलेगी। भारतमें समस्या यह नहीं है कि अंगरेजोंमें बेतहाशा बढ़ती हुई जनसंख्याको काट-छाँटकर किस तरह ठिकानेका रूप दिया जाय बल्कि समस्या इस बातका कारण जाननेकी है कि छोटा पौधा विकसित होकर विशाल वृक्षका रूप क्यों नहीं ग्रहण करने पाता?

देशी मापामोंकी पत्रकारी

यह विद्यालय कुछ बन जा सकता है, इसमें तो सन्देहकी कोई गुंजाइश ही नहीं। देशी मापामोंके पत्रोंका मासिक विशेष रूपसे उत्साहजनक है। साक्षरताकी वृद्धि जिसकी ध्वजा में ऊपर कर चुका है, मुख्य रूपसे प्रयास देशी मापामोंमें ही हो रही है। साक्षरताकी वृद्धिके आधारपर समा

नहीं हो पाया है। विदेशी विद्यापनखाता, जो बहुत-सी देशी भाषाओं से मम्मीभौंठि परिचित नहीं है, बहुत धीरे-धीरे ही देशी भाषाओं के पत्रों में विद्यापन छपवाने को तैयार हो रहे हैं। भारतीय व्यवसायियों में तो विद्यापन छपवाने की इच्छा का विकास और भी मन्दगति से हो रहा है। इसके सिवा जो लोग देशी भाषाओं के पत्रों में काम करते हैं, उनमें से अधिकतर साधन-विहीन या अल्प-साधन-सम्पन्न ही होते हैं। और वच मान विचार शाय प्रकट करने के सर्वसम साधन के रूप में भाषा का पूर्ण विकास होना भी समी होय है। इन तथा देशी ही अन्य कमियों या बुद्धियों का ध्यान भी आर. आर. मटनायरने अपनी पुस्तक 'वि राइज एण्ड प्रोब ऑफ हिन्दी जर्नालिज्म' में बड़े व्यतिरेक साथ किया है।

इन कठिनाइयों पर धीरे-धीरे विजय प्राप्त की जा रही है और हिन्दी की पत्रकारकक्ष अन्य भाषाओं की पत्रकारकक्ष की तुलना में अधिक का सामना अधिक प्रसन्नता के साथ कर सकती है। राज्य का संरक्षण स्वयं ही उसकी उत्पत्ति के लिए एक प्रबल तहायक है। इसके कई रूप हैं जिनमें एक है मुद्राबेसन (टाइपिंग) तथा कम्पोजिंग के सुधार के लिए शान्तिनिक तहायता। सरकारों छारपटों में हिन्दी के तार स्वीकार ही किये जाने लगे हैं। सम्भव है कि कुछ ही वर्षों के भीतर हिन्दी में समाचारों का प्रेषण नियमित व्यवस्था की कल हो जाय। वारे भारत में हिन्दी के पत्रों व पुस्तकों की विप्रे हलती है और अन्य भाषाभाषी क्षेत्रों में भी हिन्दी के बड़े कैम्प विद्यमान हैं, जैसे बम्बई, कलकत्ता और नागपुर। मध्यप्रदेश का उदाहरण कीजिये, वहाँ दो भाषाएँ प्रचलित हैं किन्तु मराठी के कंकड़ दो ही दैनिक निकलते हैं जब कि हिन्दी के चार दैनिक प्रकाशित होते हैं। जैसा कि भी मटनागर कहते हैं 'अन्य सभी देशी भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी की पत्रकारकक्ष का अधिक संयत्त अधिक उज्ज्वल है।'

मध्य देशी भाषाओं के पत्रों के साथ है। देशी भाषाओं के कमरा उन्नतिशील समाचारपत्र जन जागरण के अनिवार्य एवं अत्यन्त भाग हैं, जो मनिकवर्ग के पाठकों की तथ्या न कर समाचारपत्र सामान्य वर्ग के

दिया। १५१ में सम्बन्धी एक अंग्रेजी दिनपत्र, जिसका दिग्दर्शक तत्काल भी निकलता था, कलकत्ते में एक संस्करण प्रकाशित करना शुरू कर दिया।* ऐसा समझा जाता है कि मद्रास में भी एक संस्करण निकालनेका उसका इरादा है। ये सब सम्भव अंग्रेजोंके घटते हुए प्रभावके चोख नही माने जा सकते। अंग्रेजी और अंग्रेजोंके पत्रोंके मरिचके सम्बन्धमें मैं विस्तृत ही निराशावादी नहीं हूँ।

मरिचके समाचारपत्र

भारतमें समाचारपत्रोंका मरिचक उलझा है। अब प्रश्न यह उठता है कि मरिचकमें हमारे समाचारपत्रोंका स्वल्प क्या होगा। सामान्य रूपसे इसका यही उत्तर दिया जा सकता है कि समाचारपत्रोंका यही रूप होगा जो जनता उन्हें देना चाहेगी। जैसा कि समाचारपत्रोंके पाठकोंके सम्बन्धमें अनुसन्धान करनेवाले श्री मार्क एडमन्डे प्रिंटींग रीडिंगोपर माफ़न करते हुए कहा है, प्रत्येक समाचारपत्र मुख्य रूपसे अपने पाठकोंके विचारों और रुचियोंके अनुसार ही रूप ग्रहण करता रहा है, कर रहा है और आगे भी हमेशा करता रहेगा। या फिर प्रसिद्ध पत्रकार श्री ए. वे. क्रमिन्गके शब्दोंमें इस कह सकते हैं कि 'मरिचके समाचारपत्र सैठ ही होंगे जैसे जनता चाहे कि न हो। लोकतन्त्रात्मक राष्ट्रको जैसे ही समाचारपत्र मिलते हैं और जैसी ही सरकार भी जैसे पत्र और जैसी सरकार पानेके योग्य वह हो।' वह अक्षर कही सुनी सी बात जान पड़ती है। समाचारपत्रोंका स्तर टीका है, पर यह ऐसी छाय बात है जो अटक है। समाचारपत्रोंका स्तर मास राष्ट्रके धार्मिक जीवनके स्तरसे मिला नहीं हो सकता। कुछ आदमी यह अच्छे और उधारमना होते हैं। दूसरे इतने समझ और उदार नहीं होते। कुछ ऐसे भी होते हैं जो आशय करते हैं और मरिचों पर अनुचित प्रभाव डालनेका प्रयत्न करते हैं। इसी तरह समाचारपत्रोंमें भी सामान्य रूपसे ऊँचा स्तर सज्जन और धर्म नहीं पाया जा सकता।

* दार्जिलिंग और इण्डिया' की और संकेत है। हाकमें कलकत्तेसे इसका प्रकाशन सम्भव कर दिया गया है।

अद्यतक जनता अभी समझ नहीं सकी है। हाथमें ही जब (अपराधोंको उमाड़नेवाले) समाचारपत्रों सम्बन्धी विधेयकको लेकर अखबारवालोंको बकैसे ही सरकारसे खोहा घेना पड़ा, तब यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जनताने बहुत ही कम उछका साथ दिया। समाचारपत्रोंका मुँह बन्द करनेवाले इस मदे कानूनके विरोधमें जनताने कानी ठँसकी भी नहीं उठायी। उसने अवकके साथ किन्तु गलत रूपसे यह समझ लिया कि यह तो समाचारपत्रों और सरकारका आपसका मुष्टिग्रन्थ है जिसमें हिंसा प्रहय करना उसके लिए अनावश्यक है। भारतकी स्वतन्त्र हो जानेके बाद भी ऐसा हुआ, यह बड़े दुःखकी बात है। जनताको स्पष्ट इस बातकी शिक्षा प्रहय करनी चाहिये और उसे महीमोंति सिखा भी दिया जाना चाहिये कि वह उदासीनताका अपना यह भाव छोड़कर स्वतन्त्रताके प्रहरीके रूपमें स्वाधीन एवं सुदृढ़ समाचारपत्रोंकी स्थापनामें सहायता करे।

भी बक्रवर्ती राजमोषाज्यधारीने यद्गमनीकी हैसियतसे इस विधेयकको प्रस्तापित करते हुए कहा था कि यह पत्रकारोंको नुस्तान पहुँचाने वाले पक्षियोंका डगनेके लिए एक तरहका बोसा माज है जिससे फतल पैदा करनेवाले किसानोंकी बुरा अपनी कोई छवि न होगी। किन्तु बस्तुस्थिति यह है कि जो समाचारपत्रवाले बेचारे अधिक साहसी नही हैं वे मयभीत होकर जनताके प्रति अपना कर्तव्य पालन करनेसे बर्षित हो जायेंगे। स्वतन्त्र भारतकी लोकतन्त्रात्मक सरकारका हो यह भेष प्राप्त है कि उसने यह आपत्तिजनक विधान विविध-सहिता (स्टैट्यूट्स) में उन्निहित करया। इसका मतलब यह हुआ कि स्वतन्त्र देशमें भी समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रताके लिए भय या खतरा रची मर कम नहीं है। प्रेमकी तरह समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रता भी हर बार नये तिरहे प्रयत्न कर प्राप्त करनी पड़ती है।

धिर भी यह स्पष्ट है कि लोकतन्त्र प्रजाळीमें सरकारको यह बात समझ लेनी चाहिये कि स्वयं लोकतन्त्रके ही हितमें उसका यह कच म्य

सम्पन्न और प्रयत्नशील पत्रोंन सखारकी प्रमुख राजधानियोंमें अपने निजी संवाददाता रख छोड़े हैं। इस दिशाकी आर और अधिक प्रगति होना, जिसके लिए धनकी आवश्यकता है, स्वस्थ विकासका अक्षय हागा। जब तक यह उन्नति हो, तब एक एशियाई देशोंसे प्राप्त समाचारों और पश्चिमी देशोंके समाचारोंमें समतुल्य बनाये रखनेका प्रयत्न करत रहना चाहिये। आज हमारे पत्रोंमें आमत एशियाई बहुत कम समाचार प्रकाशित होते हैं। यह एकांगीपन छीम दूर हो जाना चाहिये।

यह मुख्य बड़ी राजधानियोंसे निकलनेवाले या राष्ट्रीय पत्रोंपर विशेष रूपसे लागू होता है। ऐसे समाचारपत्र, अपने राष्ट्रीय स्वरूपके ही कारण स्वभावतः संख्यामें कम होंगे। अधिक बड़ी संख्या तो ऐसे पत्रोंकी हागी जो या तो प्रांतीय होंगे या जिनको आर छोटे शहरोंके पत्र होंगे। पैदा कि मैंने नागपुरमें जून १९५२ में हुए मध्य प्रदेशके अमलीबी पत्रकारोंके प्रथम वार्षिक समारोहमें अध्यक्षीयतासे भाषण करत हुए कहा था, मेरा यह पक्का विश्वास है कि भविष्य छोटे समाचारपत्रोंके साथ है। 'हिन्दू' के मुख्य सहायक सम्पादक, स्वर्गीय श्री के० पी० विस्मनाथ ऐयर मुझसे कहा करते थे कि जिसके समाचारपत्रमें, जिसका उच्च सीमित क्षेत्रके और स्थानीय पाठकोंतक पहुँचना ही होता है, समाजकी निकटतम सेवा करनेके लिए विशाल क्षेत्र और अगणित अब सर उपलब्ध हो सकते हैं। अमेरिकामें भी, जहाँ समाचारपत्रोंकी श्रृंखलाएँ मोटी और बढी हैं, छोटे नगरोंके समाचारपत्र अमेरिकन समाचारपत्रोंकी संख्याके भूतपूर्व समापति भी हैं। एस फ्रेडरिक्सके शब्दोंमें "पत्रकारकक्षकी व सुनिश्चयी अब हैं जिनसे समाचारपत्रोंके समस्त कार्य को धारि और बढ प्राप्त होता है।" एक प्रसिद्ध विज्ञापन समितिके उप-समापतिने हालमें ही कहा था कि मैं "बड़े शहरोंसे छोटे नगरोंसे प्रकाशित होनेवाले समाचारपत्रोंके पक्षमें हूँ।" अमेरिकामें जो १७७२ दैनिक पत्र निकलते हैं उनमेंसे लगभग १५०० ऐसे हैं जो ५० हजारसे भी कम आबादीवाले नगरोंसे प्रकाशित होते हैं। गोंबीसे प्रकाशित होनेवाले ८॥

करते हैं कि इस तरहकी आशंका करनेके बिना कोई कारण नहीं है कि समाचारपत्रोंकी ये गूँथ खड़ाएँ सारे देशमें फैल जायेंगी और समस्त छोटे-छोटे पत्रोंकी उसी तरह निगल जायेंगी जिस तरह पढ़ी मछलियों छोटी मछलियोंकी निगल जाती हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो मेघमाध्यमें बिप्लवकी रेखा देखते हुए कहते हैं कि समाचारपत्रोंके ये बड़े-बड़े मासिक पत्रकारोंको अधिक अच्छा बेतन देते हैं जिसका अनिवाय परिणाम यह होता है कि अन्य छोटे-छोटे मासिकोंपर भी इसका प्रभाव पड़ता है और उन्हें भी पारिभ्रमिकमें किङ्किन् हुई करनी पड़ती है। जाँची हो, समाचारपत्रोंकी गूँथ खड़ाओंके सम्बन्धमें, जो इस समय विद्यमान हैं, हमें इस तरह मयमौल न हो जाना चाहिये कि हमारा ध्यान भारतीय समाचार पत्रोंकी वास्तविक समस्याओंकी तरफ़से हट जाय।

देशमें चारों तरफ़ फैले हुए छोटे-छोटे समाचारपत्रोंकी रक्षापनाके सम्बन्धमें मैंने जो कल्पना की है, उसके पूर्ण होनेमें सस्ते अखबारों कागजकी अधिक उपलब्धि होनेसे विशेष सुविधा होगी। आज हमें प्रति वर्ष कोई १० हजार टन अखबारों कागजकी आवश्यकता पड़ती है, जो सबका सब हमें बाहरसे मँगाना पड़ता है। समाचारपत्रोंकी वृद्धिके साथ साथ अखबारों कागजकी खपत भी बढ़ती जायगी यह उसी तरह निश्चित है जिस तरह दिनके बाद रातका होना। कुछ लोगोंने अखबारों कागज को लोकतन्त्रका 'कच्चा माछ' माना है और यह ठीक ही है। इस बातकी चेष्टा करना सरकारका तथा उद्योगपतियोंका कर्तव्य होना चाहिये कि यह कच्चा माछ पर्याप्त परिमाणमें समाचारपत्रोंको प्राप्त हो सके।

यहाँ में अल्पप्रवेशीय सरकारकी सहायतासे लाखों अनेकों उस कारखानेकी माझी-सी पेशा कर देना चाहता हूँ जिसमें प्रतिदिन १० टन (२००५ मन) अखबारों कागज तैयार किया जायगा। इसमें लगभग ६ करोड़ रुपये खर्च बैठेगा। इस नेपा मिस्सस हमारी बत मान आवश्यकताके लगभग तृतीयोत्तकी पूर्ति हो सकेगी। सन् १९५४ के उस रातमें इसका उद्घाटन शुरू हो जानेकी आशा है। मेरा आग्रह है कि

सामन नहीं आया है। मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि रिपोर्टपर धीमे हो बिचार किया जायगा।

पत्रकारकक्षाकी शिक्षामें मेरा पक्का विश्वास है। ये लोग भी जो वह दलील दिया करते हैं कि समाचारपत्र-कायाव्ययमें ही पत्रकारीका सबसे अच्छी शिक्षा प्राप्त की जा सकती है, इस बातमें सहमत होंगे कि हिस्सेप काबेजकी योजनामें जो शिक्षाक्रम रखा गया है उससे कायकर्त्ताओंकी इच्छामें काफ़ी इज़ि हाँ आयगी। भा एन रजुनाथ पेयरने ठा, जिन्होंने हिस्सेप काबेजके शिक्षाक्रमका उद्घाटन किया था, बहोतक कहा था कि पत्रकारीकी शिक्षा उन आधारभूत सांस्कृतिक क्रियाकलापोंमें गिनो जानी चाहिये जिनमें नये समाजका निमाण होता है। ऐसे सुयोग्य और काम छम कायकर्त्ताओंका दल तैयार करना जो लोकतन्त्र शासनप्रणालीके अन्तर्गत स्वतन्त्र समाचारपत्रोंकी भारी जिम्मेदारियाँ अच्छे तरहसे और सच्चाईके साथ पूरी कर सकें बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है।

अभियर्थों (सिपिजकड्स) की स्थापना

छन्दु कपारें विशेषज्ञ, अम्पनिच तथा विनोद बिबाबली (कामिक लिप्स) उपलब्ध करनेके लिए अभियर्थोंके विकासकी ओर भी ध्यान दिया गया है। क्षेत्रीय समाचारपत्रोंकी उन्नति हान पर, जिनके महान् भविष्यकी आशा में कर रहा हूँ, इन अभियर्थोंकी सेवाकी आवश्यकता होगी और इनके निर्माणसे उन्हें भी अच्छी सहायता मिलेगी। क्षेत्रीय समाचारपत्रोंके पास इतना पैसा ठा हो नहीं सकता कि वे दिनभर काम करनेवाले कर्मचारी रखकर कथा-कहानी प्रासंगिक लेख आदि तैयार करावें। ये चीज उन्हें किसी केन्द्रीय संस्था या एसी संस्थाओंसे प्राप्त हो सकती हैं जो इस तरहकी सामग्री तैयार करनेके लिए विशेषज्ञता काम ल सकती हैं। अम्प निच तथा विनोद बिबाबलीके सामने भाषा सम्बन्धी बाधाएँ टिक नहीं सकती, अतः उनके माहक सार इधमें मिल सकते हैं। किसी विशेष भाषाके क्षेत्रके लिए अभियर्थोंको उक्त क्षेत्रकी भाषामें ही सामग्री लिखे

समाचारपत्र “अगो कइ युद्धात्क अधिक शक्तिशाली बना रहेगा, क्योंकि वह दोनोंमें प्रिये है।”

इसके साथ मैं यह भी जोड़ बना चाहता हूँ कि समाचारपत्र केवल इतीहास अधिक शक्तिशाली न बना रहेगा कि वह दोनोंमें प्रिये है, बल्कि इसमें भी कि वह पाठकका विशेष सुविधायें और विशेष काम प्रदान करता है। रेडियो सुननेवालोंको प्रसारणके समय और सुननेके स्थानके अनुसार अपना व्यवस्था करना पड़ता है, किन्तु पाठक यहाँ चाहें यहाँ अपना व्यवस्था कर जा सकता है, जब अवकाश हो तब उसे पढ़ सकता है और जो हिस्सा उस अधिक पसन्द हो उसे चुनकर भी पढ़ सकता है। ‘रेडियो समाचारपत्र’ नामक चीजके पक्ष पढ़ने और उसके सम्भावित विकाससे भी स्थितिम परिवर्तन नहीं होता, क्योंकि समाचार पत्र अधिक लाभदायी और अधिक प्रसारणी सामग्री दे सकता है।

फिर भी यह सच है कि इस युगमें जब समाचारपत्रोंका शीघ्रसे शीघ्र पहुँचाना अधिक महत्वकी चीज है तब इस काममें रेडियो कभी-कभी समाचारपत्रसे शाली मार ले जाता है। परन्तु इस तरह कभी-कभी रेडियो से विच्छेद जानका भी यह उक्त परित्याग होता है कि पाठककी भूल बढ़ जाती है और वह किसी महत्वपूर्ण घटनाके पठित होनेपर उसके अधिकारिक स्वीय फुरसतके समय अपने अपने पत्र पढ़ना चाहता है। वह ज्ञान कि रेडियो तथा समाचारपत्र का प्रतिद्वन्द्वी बलुएँ हैं, बहुत पहले ही दूर किया जा चुका है।

सबसे हालके सरकारी आँकड़ोंके अनुसार भारतमें इस समय कुल ६, ५८, ५८ अनुशासित रेडियो कम ह और २९ २ की जनसंख्याके अनुसार देशकी कुल आबादी ३५ ६ करोड़ है। तदनुसार यह कि प्रत्येक ५ व्यक्तिमें एक रेडियो सेट प्राप्त है, जब कि अमेरिकामें ९८ प्रतिशतसे भी अधिक परिवारोंके पास अपने अपने रेडियो हैं।

यहाँ भी यही-वही सम्भावनाओंका क्षेत्र सामने आता है। निरभरता जो हमारे कल्पमें एक पक्षी परार है, रेडियोके प्रयोगमें बाधक नहीं,

दिया गया हो। भारतमें लोकमत साधारणतः इस पक्षमें है कि उसे ब्रिटिश प्राइवेटाइजिंग कारपोरेशन जैसा रूप दे दिया जाय। अमेरिकाकी तरह उसे निजी व्यापारिक व्यवस्था बना देनेकी ओर वहाँ बहुत कम उम्मीद है। सार्वजनिक निष्ठापके रूपमें भीषणता रहता ही नहीं जैसा कि पसन्द किया जाता है।

सरकारी मत इस आदेश एवं अन्तिम कल्पको मान देनेके पक्षमें है किन्तु सरकारका खयाल है कि आक इण्डिया रेडियोको सार्वजनिक निगमके हाथ सौंप देनेका उचित समय अभी नहीं आया है। कारण यह है कि हस्तान्तरण होनेके पहले उसका और अधिक स्थिर आर्थिक आधारपर प्रतिष्ठित हो जाना आवश्यक है। इस दृष्टिकोणमें आवश्यकतासे अधिक सावधानता बेस पड़ती है। जो हो, अन्तिम भारतीय रेडियोपरसे सरकारी नियन्त्रणका उठा किया जाना अब अधिक सम्भवतः रोक नहीं जा सकता।

भारतके समाचारपत्रोंने बहुत उत्सवि तो नहीं की है किन्तु उनका इतिहास महान् है। उस महान् इतिहासके पक्षमें एक प्रमाण उस व्यक्ति का कथन है जो समाचारपत्रोंकी तीव्र आलोचनाका निरन्तर शिकार बना रहा। बाइसयस स्मार्थ किनशिफोने केन्द्रीय व्यवस्थापक समामे सामने विचारका मापप करते हुए इस महती समस्याकी—समाचारपत्रोंकी—प्रशंसा की, उसकी पक्षपात-हीनताके लिए, जनताकी सेवा करनेकी उसकी उत्सुकताके लिए और पत्रकारकलाकी सर्वोच्च परम्पराका अनुसरण करने एवं सम्मिल हो तो उसमें सुधार करनेकी उसकी चिन्ताके लिए। उन्होंने कहा कि 'मैं सार्वजनिक रूपसे भारतीय पत्रोंकी और उन बुद्धिमान्, परिश्रमी एवं सुयोग्य आधुनिकोंकी प्रशंसा किये बिना भारत छोड़ना पसन्द न करूँगा, जो समाचारपत्रोंमें काम करते हुए भारतकी इतनी अच्छी सेवा करते रहे हैं।'

विदेशी सरकार, जिसकी सच्चा मुख्य रूपसे देशी सेनाके सहारे काम हो, समाचारपत्रोंको स्वतन्त्र नहीं रहने दे सकती। मन्त्रालयके गवर्नर सर

हल वारेमें सन्देह ही है कि राजनीतिक विचारोंपर किसी भी पत्रका कोई भारी प्रभाव हो।" इसके प्रमाणमें अमेरिकाके तथा भारतके चुनावोंके परिणामोंकी बात कही जाती है और इस आधारपर वह निष्पत्ति निकाली जाती है कि समाचारपत्रोंकी लोकप्रियता घट रही है।

अब, इसका उत्तर तो यही हो सकता है कि समाचारपत्रका काम 'समाचारपत्र छापना ही है चुनाव जीतना नहीं—जैसा कि कंसस सिटी 'स्टार' पत्रके श्री रॉय राबर्ट्सने बड़े अष्टक उंगलें कहा था। पुश्तियार प्राइज (पार्लियामेंट) के जीतनेवाले भी फैंक एक, मॉटने 'दि टैमरियन' के हाथके एक अंकमें इस प्रश्नकी चर्चा करते हुए कहा है कि समाचार पत्र चुनावके परिणामोंका नियन्त्रण नहीं करते, इस आधारपर वह निष्पत्ति निकालना हास्यास्पद होगा कि उन्होंने जनताका विश्वास खो दिया है। समाचारपत्रोंको प्रचार संस्थामें स्थिर भावसे बुद्धि हाते चलना ही प्रभाव घटनेकी बातपर जोर देनेवाली आलोचनाका प्रभावकारी अंग है।

पत्रोंके अधिक प्रचारकी भी यह कहकर आलोचना की गयी है कि वह एक तरहका व्यापारवाद है, जो बुद्ध और पवित्र पत्रकारीको धूमिल बना देता है। कहा जाता है कि कन्दनके 'डेब्रीमेक' के श्री केंनेडी बोम्बने यह बात कही थी कि पत्रकारी पहले तो एक पेशा थी किन्तु अब वह व्यापारका एक अंग है। डाक्टर बी आर. अम्बेडकरने एक बार कहा था कि समाचारपत्रके कार्यालय आर साधुनके कारखानेमें कोई अन्तर नहीं। अन्य लोगोंका कहना है कि यह इससे भी बुरे बीज है क्योंकि वह मनुष्यको बहकाकर कुमांगपर खें जाता और उसके मनको विपाक बना देता है, अब कि यह ऐसी कोई बात नहीं करता।

जा हो व्यापारवादका खाना तो अनिवार्य है। और यदि व्यापारिक व्यवस्था सतत नहीं बढ़ने पाता तो इसका कारण यह है कि ईमानदारी ही सबसे अच्छी नीति है। जैसा कि समाचारपत्रों सम्बन्धी आयोगके सदस्य डाक्टर सी० पी० रामस्वामी ऐय्यने भाषणकोर विश्वविद्यालयको समा

भारतीय जनकारकण

यहाँके नागरिकोंको छोकता बड़े पथपर व्यस्त होनेवाले स्वतन्त्र भारतके अधिक मिश्रित जीवन और क्रियाकलापोंमें अपना उचित हिस्सा ग्रहण करनेके लिए सक्रिय करनेमें सहायता करें।

सन् १९५० में व्यक्तिगत भारतीय सम्पादक सम्मेलनका जो वार्षिक अधिवेशन दिल्लीमें हुआ था, उसमें भाषण करते हुए प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरूने समाचारपत्रोंसे अनुरोध किया था कि वे 'जीवनमें जो कुछ निरुपद्रव है उसका प्रयोग करते जाना रोकनेमें सहायता करना अपना कर्तव्य समझें और अधिक ऊँचे दरजेकी तथा अधिक ठोस सामाजिक क्षेत्रोंके निर्माणमें ही सहायता न करें वरन् जीवनकी छोटी छोटी बातोंमें सामाजिक व्यवहार करना सिखानेमें भी।"

जिस महान् कर्त्तव्यका मार प्रधान मंत्रीने भारतीय समाचारपत्रोंपर डाला है उसे पूरा करनेकी शक्ति, समझ और इच्छा उनमें मौजूद है और मुझे इस बातका विश्वास है कि यहाँके समाचारपत्र यह सुखद स्थिति प्राप्त करनेमें भारतकी सहायता करेंगे जिसकी कामना स्वर्गीय भीरबान्धू नाथ ठाकुरने की थी—

जहाँ मनमें कोई भय नहीं रहता और अस्वक ऊँचा उठ रहा है
जहाँ बिना यज्ञान निःशुल्क प्राप्त किया जा सकता है

जहाँ मनको हम अधिकाधिक विस्तीर्ण होते जानेवाले विश्वास और
ज्याकी ओर से जाते हो,
स्वतन्त्रताके उल्लेखमें, मेरे पिता, मेरा यह देश आगरा हो।

- ALI UL-HASHMI CHOUDHRI NAHM. *Art of Writing* Delhi: Anjuman Taraqqul-Urdu, (Hindi) 1943 137 pp (In Urdu)
- ANJOTHASWAMY *Principles of Journalism*. Trichur Mangalodayam Press, 1941 65 pp (In Malayalam)
- BANKERIE, RAJINI. *Romances of Journalism* Calcutta: Industry 1947 163 pp
- BHAR, MRINAL KANTI. *The Press and Its Problems*. Calcutta: Sarkar 1945 162 pp.
- DHARA R. *Journalism* Calcutta: Industry 1925 188 pp
- GUNDAPPA, D V. *The Press in Mysore* Bangalore City Karnataka, circa 1940. 58 pp.
- ITENGAAR, A. RAMASWAMI. *Newspaper Press in India* Bangalore City Bangalore Press, 1933 80 pp.
- LOVETT PAT. *Journalism in India*, Calcutta: Hannu, circa 1938. 80 pp.
- MTESS, ADOLPH. *How to be a Journalist* Bombay The Times of India Press, circa 1938 161 pp
- PILLAI, K. RAMAKRISHNA. *Journalism*. Trichur: Mangalodayam Press, 1928. Second Edition 318 pp (In Malayalam)
- RAO, P G. *From Indian Journalism and Journalism*. Part I. Bombay V B Pabhu Karsar Books and News Agency Unlaid 57 pp.
- SASTRI, C L R. *Journalism*. Bombay Thacker 1941 283 pp.
- SALIV SAN H H. *Press and Public* Tirunelveli: University of Travancore, 1944 78 pp

इतिहास सम्बन्धी

- १ श्री रामकृष्णदास—हिन्दी समाचारपत्रोंका इतिहास, काशी, १८९४
- २ श्री बालमुकुन्द गुप्त—हिन्दी संवादपत्रोंका इतिहास, बालमुकुन्द गुप्त प्रकाशकी, कलकत्ता ।
- ३ पण्डित बालिकामदास बाबरेयी—‘समाचारपत्रोंका इतिहास’, काशी, अमनमण्डल, १९५४, पृ० ३९६
- ४ श्री विनायककृष्ण जोशी तथा श्री रामचन्द्र केदार केडे—संवादपत्रोंका इतिहास, बम्बई युगवाणी प्रकाशकालय, १९८१, खिस्द १, पृ० ६६२ (मराठी) ।

रिपोर्टिंग

श्री श्रीपद रामचन्द्र टिक्कर—वाल्मीकिवार, बम्बई, न्यू भारत १९३४,
पृ० २७९ (मपठी में)

पत्रकारोंकी कृति या पेशे सम्बन्धी

Journalism as a Career New Delhi : Careers Institute, 1961.
61 pp.

RAU ABDUL-MAJID. *Journalism as a Career* Lahore Commercial Book, circa 1939 158 pp

Report of the Newspaper Industry Enquiry Committee Central Provinces and Berar Nagpur Government of the Central Provinces and Berar circa 1948, 82 pp.

UMRIG R. K. D. *Let I Forget*. Bombay Popular Book Depot, 1949 148 pp.

विशिष्ट विषयक

MARABIMHAN V K. and PHILIP POTHEK, Editors. *The Indian Press Year Book*. Madras Indian Press Publications. Annally since 1948

MAGAZINE JOURNALISM

BIRD, GEORGE L. *Article Writing and Marketing* New York: Blashart, 1948

FAITHEBOIS HELEN W. *Writing and Selling Feature Articles*. New York: Prentice-Hall, 1949

WOLSELEY ROLAND E. *The Magazine World* New York: Prentice-Hall, 1951

NEWS REPORTING AND WRITING

CAMPBELL LAURENCE R. and WOLSELEY ROLAND E. *News Writing* Boston: Houghton Mifflin, 1949

MACDOUGALL, CURTIS D. *Interpretative Reporting* New York: Macmillan, 1948

WARREN CARL. *Modern News Reporting* New York: Harper, 1951

SUB-EDITING

BASTIAN GEORGE C. and OBER, LE AND D. *Editing the Day News* New York: Macmillan 1945

MANSFIELD F. J. *Sub-Editing* London: Pitman, 1948

FEAL, ROBERT. *Editing the Small City Daily* New York: Prentice Hall, 1948

BUTTON ALBERT A. *Design and Makeup of the Newspaper* New York: Prentice-Hall, 1948.

MISCELLANEOUS

FLESCHE, RUDOLF. *The Art of Plain Thinking* New York: Harper, 1946

FLESCHE RUDOLF. *The Art of Readable Writing*. New York: Harper 1949

WARREN CARL. *Radio News Writing and Editing* New York: Harper 1947

Willing's Press Guide London, Willing's Press Service, Ltd. Annually

Writers and Artists Year Book London: Adam and Charles Black Annually

विभिन्न पत्रोंमें छल्ल लिखते रहते हैं और इस उद्योगके ऊँच प्रतिमानोंके से प्रसिद्ध हैं।

श्री जाम फर्नेण्डीज दो दयाव्योंस भी अधिक सम्पन्न भारतीय समाचारपत्र-जगतमें काम करते रह रहे हैं। सन् १९११ में उन्होंने 'असाधियट्रेड प्रेस आफ इण्डिया' के रिपोर्टरकी हैतयत्तल काम शुरू किया—सबुक्त प्रदष्ट की सरकारकी राजधानी कलकत्ता तथा मैनीलाक्रम स्थित उसके संवाददाताके रूपमें। चार वर्ष बाद उन्हे कानपुरमें रायटरकी छाताक सघटनका काम सौंपा गया। सन् १९१९ में उनका ज्ञानान्तरण हैदराबादको हो गया, जहाँ वे निजाम सरकारकी राजधानीमें रहनेवाले रायटरके एजेन्ट नियुक्त हुए। १९४४ में वे असोसियेटेड प्रेसक प्रधारी सम्पादकक रूपमें बम्बईके प्रधान कार्यालयमें चले गये। १९४७ में उनका तबादला दिल्लीका हो गया जहाँ उन्हें सर उपानाथ सेनकी अजीनतामें, भारत सरकारकी राजधानीमें, स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद बढ़ी हुई स्थितिक अनुक्रम शास्त्र कार्यालयका सघटन करना पड़ा। सन् १९५० में सर उपानाथके अवसर ग्रहण कर जैन पर श्री फर्नेण्डीज दिल्ली-कार्यालयके प्रधान बन गये। इस समय वे इसी पदपर काम कर रहे हैं। अमरीकी पत्रकारोंके संघटनोंमें वे सक्रिय रूपसे हिस्सा लेते रह रहे हैं। दिल्लीमें वे अस्तित्व-भारतीय पत्रकार सम्मेलनके प्रथम अधिवेशनके सघटनकक्षाओंमेंसे एक थे। अमरीकी पत्रकारोंके भारतीय संघकी स्थापनाके बादसे वे उसके कोषाध्यक्ष रह रहे हैं।

श्री पी०एन० महता नेनेट कालमें एण्ड कम्पनी लिमिटेडके डाइरेक्टर (संवाकक) हैं। 'राइम्स आफ इण्डिया', 'दि इन्फ्लूएन्स वीकली आफ इण्डिया' तथा अन्य प्रकाशनोंका स्वामित्व इसी कम्पनीके हाथमें है। वे प्रेस ट्रस्ट आफ इण्डिया तथा यूनाइटेड प्रेस ऑफ इण्डियाके भी डाइरेक्टर हैं। पत्रकारी सम्बन्धी कानूनोंमें विशेष अभिरुचि होनेके कारण उन्होंने 'प्रेस ऑन इन इण्डिया' नामक पुस्तक भी लिखी है। कम्पनी कानूनका भी अच्छा अध्ययन होनेके कारण उन्होंने इस विषयपर भी कई किताबें पुस्तक लिखी हैं और एक पुस्तक 'पार्लियमेंट एण्ड

जब उन्होंने इस पुस्तकका १६ वॉ परिच्छेद बिताया था, तब वे भारतीय सम्पादक सम्मेलनकी माध्यमद्वितीय शाखाके सभापति थे। उन्होंने पत्रकारोंका काम सन् १९२६ में जाहीरके पत्र 'इम्प्रींस रीभ्यू' के सहायक सम्पादककी हैसियतसे शुरू किया। दो वर्ष बाद वे नागपुर 'टाइम्स' के सहायक सम्पादक बने। जब वह नागपुरका (पहलका) 'टाइम्स' बन गया, तब वे उसके सम्पादक नियुक्त हुए। सन् १९४२ में जब पत्रका प्रकाशन स्थगित हो गया, तब उन्होंने अमेजीक दैनिक 'हिन्दु स्टान हेरल्ड' की स्थापना की। सन् १९४८ में वे नये नागपुर 'टाइम्स' के सम्पादक नियुक्त हुए। नागपुरमें वे १९४९ से ही 'हिन्दू' के विशेष संपादकता रहे हैं। सन् १९४९ में नागपुर बिस्वविद्यालयके पत्रकार कक्षमें उपाधिपत्र देनेके लिए शिक्षाकर्म आर्थिकी योजना तैयार करनेके लिए जो कमेटी नियुक्त की थी, उसके आप सचिव बनाने गये और उस कमेटीके भी, जो १९४९ में भारतीय सम्पादक-सम्मेलनके पत्रकार कक्ष-विषयके सम्मेलनमें रिपोर्ट तैयार करनेके लिए बनायी थी। उन्होंने श्री प्रेम कर्नल, हिन्दुस्तान टाइम्स, नैशनल हेरल्ड, साउथ इन्डियन कर्नलस्ट आदि पत्रोंमें कितने ही लेख लिखे हैं।

श्री स्वामिनाथ नटराजन, 'नाम्मे अनिकल' के सम्पादक हैं। वे 'इन्डियन साउथ रिफार्मर' के सम्पादककी हैसियतसे भी प्रसिद्धि काम कर चुके हैं, जो उनके पत्रकार पिता भी कामाक्षी नटराजन् द्वारा स्थापित किया गया था। यह पत्र उस समय बन्द हो गया था जब उन्होंने इस पुस्तकके लिए आठवाँ परिच्छेद बिताया। एक पक्षसे तो अधिक समय तक वे 'श्री प्रेम कर्नल' के सम्पादक रहे और सन् १९४९ से 'नाम्मे अनिकल' का सम्पादन करते रहे हैं। उन्होंने कई पुस्तकें तथा भारतीय प्रज्ञापर कई व्याख्यानपूर्ण पुस्तिकाएँ भी लिखी हैं। वे अमेरिका भी हो गये हैं।

श्री हमरी सैम्यूस इस समय 'टाइम्स ऑफ इन्डिया न्यूज सर्विस' के दिल्ली कार्यालयके प्रधान हैं किन्तु कई वर्षोंतक वे रंडिया सम्मेलनी

कमसे इस विषयमें धर्म ए. की उपाधि प्राप्त की थी और अन्दन विश्व विद्यालयसे भी इस विषयका उपाधिपत्र प्राप्त किया था। देशका विभाजन हो जानेके बाद उन्होंने नयी दिल्लीमें पञ्जाब विश्वविद्यालयके अन्तर्गत पत्रकारकक्षा विभागकी स्थापना की और अभीतक उसके प्रधान तथा प्राध्यापककी हैसियतसे काम कर रहे हैं। सक्रिय पत्रकारके रूपमें काम करते समय प्रायःसर सिंध अन्तराष्ट्रीय समाचार समितिके विशेष संवाददाता और 'पाबोनियर'के उपसम्पादक रहे हैं। कुछ समयतक आप उत्तरप्रदेशीय सरकारके सूचना विभागकी अग्रणी शाखाके प्रधान तथा सम्पादक मण्डलके अध्यक्ष थे। आपने 'नेशनल इन्ड', 'दि ट्रिब्यून', 'इण्डियन न्यूज क्लनिकल' तथा 'मारुत', 'प्रयाग', 'विश्वबन्धु', 'सुधा', 'माधुरी', 'चाँद', और 'महिष्य'में कितने ही छेत्त लिखे हैं।

श्री एन एन दिवाकरमण्य मद्राससे निकलनेवाले तामिस्र भाषाके दैनिकपत्र 'दिनमणि' के सम्पादक हैं, जहाँ अपने लेखमें आपने स्वभावतः तामिस्र पत्राकी स्थितिका विशेष रूपसे वर्णन किया है। भारतीय पत्रकार कक्षकी इस महत्वपूर्ण शाखाके विकासकी आपनी अलग विशेषता है। वे इस क्षेत्रमें सन् १९२९ में प्रसिद्ध हुए, तामिस्र नाडू नामक दैनिक पत्रके उप-सम्पादक बनकर। शीघ्र ही उन्होंने वहाँसे पदत्याग कर दिया और तमिल सत्याग्रहमें सम्मिलित हुए जिसमें उन्हें कायवासकी सजा हुई। सन् १९३२ में वे द्विदैनिकपत्र 'गांधी के व्यवस्थापक तथा सहायक सम्पादक नियुक्त हुए। सन् १९३४ में वे 'दिनमणि'में प्रथम भेरीके उप सम्पादक बने और फिर सहायक सम्पादक, कार्यकारी सम्पादक तथा सम्पादक भी बने। बीचमें केवल दो वर्षके लिए उन्होंने मद्रासके 'इण्डियन एक्सप्रेस' में प्रधान सहायक सम्पादककी तरह काम किया। सन् १९४० में उन्होंने भारतीय सम्पादकोंके एक दलके साथ 'मध्यपूर्व' तथा मध्य भूमध्य सागरीय मुद्राक्षेत्रका दौरा किया। उन्होंने सैनफ्रांसिस्कोमें हुए संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनके समय 'एक्सप्रेस' समूहके पत्रोंके विशेष संवाददाताकी हैसियतसे काम किया और सन् १९४९ में फिर विभिन्न स्थानों

कमसे इस विषयमें एम. ए. की उपाधि प्राप्त की थी और लन्दन विस्म विद्यालयसे भी इस विषयका उपाधिपत्र प्राप्त किया था। देशका विभाजन हो जानेके बाद उन्होंने नयी दिल्लीमें पञ्जाब विस्मविद्यालयके अन्तर्गत पत्रकारकला विभागकी स्थापना की और अभीतक उसके प्रधान तथा प्राध्यापककी हैसियतसे काम कर रहे हैं। सक्रिय पत्रकारके रूपमें काम करते समय प्राफेसर सिध अन्तराष्ट्रीय समाचार समितिके विशेष संवाददाता और 'पागोनिमर'के उपसम्पादक रहे हैं। कुछ समयतक आप उत्तरप्रदेशीय सरकारके सूचना विभागकी अमेजी शाखाके प्रधान तथा सम्पादक मण्डलके अध्यक्ष थे। आपने 'नेशनल इरस्ट', 'दि ट्रिब्यून', 'इण्डियन म्यूज कानिक्ल' तथा 'मास', 'प्रताप', 'चिन्तकन्धु', 'मुष्ठा', 'माधुरी', 'चांद', और 'मविष्म'में कितने ही छंट किले हैं।

श्री एन. एन. शिखरमण्य मद्राससे निकलनेवाले तामिळ भाषाके दैनिकपत्र 'दिनमणि' के सम्पादक हैं, अतः आपने सेसमें आपने स्वभारत तामिळ पत्राकी स्थितिका विशेष रूपसे वर्णन किया है। भारतीय पत्रकारकलाकी इस महत्वपूर्ण शाखाके विकासकी अपनी अलगा विद्योन्ता है। वे इस क्षेत्रमें सन् १९५९ में प्रसिद्ध हुए, 'तामिळ नाडू' नामक दैनिक पत्रके उप सम्पादक बनकर। शीघ्र ही उन्होंने वहाँसे पदत्याग कर दिया और नमक सत्याग्रहमें सम्मिलित हुए जिसमें उन्हें कायबासकी सजा हुई। सन् १९३२ में वे द्विदैनिकपत्र 'गांधी के व्यवस्थापक तथा सहायक सम्पादक नियुक्त हुए। सन् १९३४ में वे 'दिनमणि'में प्रथम श्रेणीके उप सम्पादक बने और फिर सहायक सम्पादक, कार्यकारी सम्पादक तथा सम्पादक भी बने। बीचमें केवल दो वर्षोंके लिए उन्होंने मद्रासके 'इण्डियन एक्स्प्रेस' में प्रधान सहायक सम्पादककी तरह काम किया। सन् १९४१ में उन्होंने भारतीय सम्पादकोंके एक दलके साथ 'मध्यपूर्व' तथा मध्य भूमध्य सागरीय प्रदेशोंका दौरा किया। उन्होंने सेनॉसिलकोमें हुए समुक्त राष्ट्र सम्मेलनके समय 'एक्स्प्रेस' समूहके पत्रोंके विशेष संवाददाताकी हैसियतसे काम किया और सन् १९४६ में फिर विभिन्न स्थानों

प्रसन्न-सम्पादक और सम्पादक रह चुके हैं। उनके सस १०० से अधिक अमेरिकन, ब्रिटिश, भारतीय तथा आस्ट्रेलियन पत्रोंमें निकल चुके हैं, जिनमेंसे कुछ पत्रोंके नाम ये हैं—सैटरडे रीम्बू ऑफ़ छिटरेजर, न्यूयार्क हेराल्ड ट्रिब्यून, कोरानेट, क्रिस्चियन साइंस मानीटर। अंग्रेजीके बहुतसे पत्रकारकला सम्बन्धी प्रकाशनोंमें भी ये मिलते रहे हैं। उन्होंने नौ पुस्तकें या तो अकेले ही लिखी हैं या अन्य लेखकोंके साथ मिलकर जैसे 'दि मैगजीन वर्ल्ड', 'एक्सप्लोरिंग जर्नालिज्म', 'न्यूजमेन ऐट वर्क' इत्यादि। उन्होंने गिराक्यूज, नार्थबिस्टर्न तथा अन्य विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयोंमें पत्रकारकलाकी शिक्षा देनेका काम किया है। भारतमें निवास करते समय प्रोफेसर ब्रुसलेने प्रमुख पत्र पत्रिकाओंके अनेक कार्यालयोंका परिचर्चन किया और अमृत साकार पत्रिका, स्वतन्त्र, भारत ज्योति, बाम्बे ज्ञानिकल, खीहर, हिन्दुस्थान स्टैण्डर्ड, नैशनल हेराल्ड आदि पत्रोंमें सस छिले। अपने पत्रकार जीवनमें उन्होंने सांख्यिक सम्पर्क विभाग प्रवचन-कार्य, बड़े बड़े अमेरिकन निगमोंके लिए तथा वीर्यलिक एवं धार्मिक समूहोंके लिए किया जानेवाला प्रचार आदि विभिन्न कार्योंमें सस रहकर कई व्यक्तियोंका अनुमन प्राप्त किया है।